मई, 2022

I.S.S.N. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त

संपादक

श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान
श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह
श्री जाह्नवी शेखर शर्मा
श्री अमर्त्य हेम विप्र पाण्डेय

ISSN-2457-0478

कीमत : **डाक-व्यय सहित**

एक प्रति : ` 125/-

वार्षिक : ` 1,300/-

© 2022 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

मई, 2022 अंक - 5

प्रधान संपादक

कमला कान्त

संपादक

असलम खान

विधि साहित्य प्रकाशन

(2022) 1 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on

Website ⟹ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.

दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

प्रश्न यह उद्भूत होता है कि यदि सरकारी सेवा के दौरान सरकारी सेवक की मृत्यु हो जाती है तो अनुकम्पा के आधार पर उसके आश्रित की सेवा में नियुक्ति की जाती है तो क्या तत्पश्चात् वह आश्रित लगभग 10-12 वर्ष के पश्चात् अपनी नियुक्ति पद को अपग्रेड कराने का अधिकारी हैं ? इसी प्रकार के प्रश्न पर विचार करते हुए माननीय उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय ने **सोनू कुमार** बनाम **उत्तराखण्ड राज्य और अन्य** (2022) 1 सि. नि. प. 575 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि यदि किसी कर्मचारी की सेवाकाल के दौरान मृत्यु हो जाती है तो सेवाकाल के दौरान मृत्यु नियम, 2003 के अनुसार उस विभाग में उपलब्ध उपयुक्त श्रेणी में उसके आश्रितों की नियुक्ति हो सकती है और यदि वह आश्रित स्वेच्छा से उक्त पद को ग्रहण कर लेता है तो वह अत्यधिक विलम्ब अर्थात् 10-12 वर्षों के पश्चात् अपने पद को परिवर्तित करने का दावा नहीं कर सकता है ।

प्रश्न यह उद्भूत होता है कि केन्द्रीय सरकार द्वारा विनियमित कोई अधिनियम कब और किन परिस्थितियों में मनमाना, अनुचित और संविधान के अधिकारातीत कहा जा सकता है ? इसी प्रकार के प्रश्न पर विचार करते हुए, माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय ने **ध्रुव कृष्ण मग्गू** बनाम **भारत संघ और अन्य** (2022) 1 सि. नि. प. 633 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि यदि केन्द्रीय संसद् अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए कोई अधिनियम बनाती है तो उसे तभी मनमाना और अनुचित कहा जा सकता है जब वह संविधान के अधिकारातीत है और संवैधानिक मापदण्डों के अनुसरण में नहीं है और यदि उस अधिनियम का दुरुपयोग करते हुए, किसी व्यक्ति के विरुद्ध बिना किसी आधार के प्रपीड़क कार्यवाही की जाती है तो वह खण्डनीय है और विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं होगा ।

इस अंक में, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के हिन्दी पाठ को भी प्रकाशित किया जा रहा है जो पाठकों के लिए ज्ञानवर्धक और

अतिमहत्वपूर्ण हैं जिसका परिशीलन किया जा सकता है । उपर्युक्त निर्णयों के अतिरिक्त अन्य कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर निर्णय प्रकाशित किए जा रहे हैं जो विधि-विद्यार्थियों, अधिवक्ताओं, न्यायाधीशों, विधि-अध्यापकों तथा विधि के ज्ञान में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए अत्यंत लाभकारी साबित होंगे ।

कमला कान्त, परामर्शदाता
प्रभारी – उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

मई, 2022

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अनमोल कपूर और एक अन्य **बनाम** हिमाचल प्रदेश कर्मचारी चयन आयोग, हमीरपुर मार्फत इसके सचिव और अन्य	689
चंदन मंकेर **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य	605
जोगिन्दर सिंह (श्री) और अन्य **बनाम** श्रीमती सुदेश कुमारी और अन्य	701
ध्रुव कृष्ण मग्गू **बनाम** भारत संघ और अन्य	633
निर्मला देवी (श्रीमती) **बनाम** अनिल कुमार तिवारी	678
सोनू कुमार **बनाम** उत्तराखंड राज्य और अन्य	575

संसद् के अधिनियम

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 - 21

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 (1984 का 66)

– धारा 19 [सपठित हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 5, 9, 11 और 13] – अपील – पति-पत्नी के विवाह की तारीख पर पत्नी का पूर्ववर्ती पति का जीवित होना – पूर्ववर्ती विवाह के समय पत्नी की आयु लगभग 10 वर्ष होना – पूर्ववर्ती पति के जीवित होने के आधार पर पति द्वारा विवाह को अकृत और शून्य घोषित कराने की अर्जी – अर्जी मंजूर किया जाना – आक्षेप – यदि वर्तमान पति-पत्नी के बीच विवाह होने की तारीख पर यह पाया जाता है कि पत्नी का पूर्व में विवाह हो चुका है और पूर्ववर्ती पति जीवित है तो वर्तमान विवाह का पति, पत्नी के पूर्ववर्ती पति के जीवित होने के आधार पर वर्तमान विवाह को अकृत और शून्य घोषित करा सकता है ।

निर्मला देवी (श्रीमती) बनाम **अनिल कुमार तिवारी** 678

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 226 [सपठित हिमाचल प्रदेश स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, रेडियोग्राफर श्रेणी-III (अराजपत्रित) भर्ती और प्रोन्नति नियम, 2011 और हिमाचल प्रदेश स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, रेडियोग्राफर श्रेणी-III (अराजपत्रित) भर्ती और प्रोन्नति नियम, 2016 का नियम 1 का उप-नियम 2] – रिट याचिका – संबंधित आयोग द्वारा नियम, 2016 के अधीन रेडियोग्राफर श्रेणी-III (अराजपत्रित) के पदों पर भर्ती के लिए विज्ञापन जारी करना – भर्ती के निबंधन

पृष्ठ संख्या

और शर्तें पूर्ववर्ती नियम, 2011 के अधीन अवधारित करना – सफल अभ्यर्थियों द्वारा इस आधार पर आक्षेप करना कि वे विज्ञापन जारी करने के लिए प्रवृत्त नियमों के अधीन अर्ह थे, किन्तु आयोग द्वारा उन्हें अनर्ह घोषित करना – आक्षेप – यदि किसी राज्य/आयोग द्वारा राज्य में उपलब्ध किन्हीं पदों की भर्ती के लिए कोई विज्ञापन जारी किया जाता है तो उस विज्ञापन में विज्ञापित पदों के लिए निबंधन और शर्तें तत्समय प्रवृत्त नियमों/विधियों द्वारा ही शासित किए जा सकते हैं, भविष्य में प्रवृत्त होने वाले नियमों/विधियों द्वारा नहीं – यदि कोई राज्य/आयोग इस प्रक्रिया का उल्लंघन करता है तो वह विधि में अमान्य और मनमाना होगा ।

अनमोल कपूर और एक अन्य बनाम **हिमाचल प्रदेश कर्मचारी चयन आयोग, हमीरपुर मार्फत इसके सचिव और अन्य** 689

– अनुच्छेद 226 [सपठित उ. प्र. सेवाकाल में मृत सरकारी सेवकों के आश्रितों की भर्ती नियम, 1974 का नियम 5 और उत्तराखण्ड सेवाकाल में मृत सरकारी सेवकों की भर्ती नियम, 2003 का नियम 2] – सेवाकाल के दौरान किसी कर्मचारी की मृत्यु होना – अनुकम्पा के आधार पर आश्रित को नियत श्रेणी के पद पर नियुक्ति – तत्पश्चात् लगभग 10-12 वर्षों के पश्चात् पद परिवर्तित करने की मांग करना – विभाग द्वारा इनकार करना – यदि किसी कर्मचारी की सेवाकाल के दौरान मृत्यु हो जाती है तो सेवाकाल के दौरान मृत्यु नियम, 2003 के अनुसार उस विभाग में उपलब्ध उपयुक्त श्रेणी में उसके आश्रितों की नियुक्ति हो सकती है और यदि

पृष्ठ संख्या

वह आश्रित स्वेच्छा से उक्त पद को ग्रहण कर लेता है तो वह अत्यधिक विलम्ब अर्थात् 10-12 वर्षों के पश्चात् अपने पद को परिवर्तित करने का दावा नहीं कर सकता है ।

सोनू कुमार बनाम **उत्तराखंड राज्य और अन्य** 575

– अनुच्छेद 226 [सपठित छत्तीसगढ़ अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग (सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र का विनियमन), 2013 के नियम II] – रिट – अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति संवर्ग के लिए आरक्षित लोक सेवक पद पर नियुक्ति – 27 वर्षों की सेवा के पश्चात् यह पाया जाना कि पदधारी ने फर्जी जाति प्रमाणपत्र के आधार पर कपटपूर्वक नियुक्ति प्राप्त की थी – नियुक्ति रद्द होना – सेवानिवृत्ति लाभों की मांग करना – नामंजूर होना – यदि कोई लोक सेवक फर्जी जाति प्रमाणपत्र के आधार पर अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति संवर्ग के लिए आरक्षित पद पर कपटपूर्वक नियुक्ति प्राप्त कर लेता है तो उसकी नियुक्ति का आधार ही विधिविरुद्ध हो जाता है, इसलिए, उसे सेवानिवृत्ति के पश्चात् मिलने वाले लाभों को भी प्रदान नहीं किया जा सकता है क्योंकि सेवानिवृत्ति लाभों को वही लोक सेवक प्राप्त कर सकता है जिसकी नियुक्ति विधि में वैध और न्यायोचित होती है ।

चंदन मंकेर बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य** 605

– अनुच्छेद 226, 246, 246क और 20 [सपठित केन्द्रीय माल और सेवा कर अधिनियम, 2017 की धारा 69, 73, 74 और 132 तथा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973

पृष्ठ संख्या

का अध्याय-12] – रिट याचिका – केन्द्रीय संसद् को माल और सेवा कर लगाने के संबंध में विधान बनाने की शक्ति – विनियमन – अधिनियम की धारा 69 और 132 को इस आधार पर चुनौती देना कि वे मनमाना और अनुचित है – यदि केन्द्रीय संसद् अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए कोई अधिनियम बनाती है तो उसे तभी मनमाना और अनुचित कहा जा सकता है जब वह संविधान के अधिकारातीत है और संवैधानिक मापदण्डों के अनुसरण में नहीं है और यदि उस अधिनियम का दुरुपयोग करते हुए, किसी व्यक्ति के विरुद्ध बिना किसी आधार के प्रपीड़क कार्यवाही की जाती है तो वह खण्डनीय है और विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं होगा ।

ध्रुव कृष्ण मग्गू बनाम **भारत संघ और अन्य** 633

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– धारा 100 [संपत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क और भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 37] – द्वितीय अपील – वादी द्वारा संविदा के अपने भाग का अनुपालन करने के लिए तैयार और रजामंद होना – प्रतिवादी द्वारा संविदा के अपने भाग का पालन करने में असफल रहना – प्रतिवादी द्वारा उक्त संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद फाइल करना – वाद खारिज होना – यदि वादी-प्रतिवादी के बीच कोई विधिमान्य संविदा की जाती है और वादी उस संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद रहता है और इसके बावजूद यदि प्रतिवादी उस संविदा के अपने भाग का पालन करने में असफल

पृष्ठ संख्या

रहता है तो वह उस संविदा का विनिर्दिष्ट अनुपालन कराने का अधिकारी नहीं होता है क्योंकि वादी के विकल्प पर वह संविदा खण्डनीय होती है ।

जोगिन्दर सिंह (श्री) और अन्य बनाम **श्रीमती सुदेश कुमारी और अन्य** 701

(2022) 1 सि. नि. प. 575 **उत्तराखंड**

सोनू कुमार

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य

[2019 की रिट याचिका (एस/एस) सं. 2281]

तारीख 10 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति शरद कुमार शर्मा

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित उ. प्र. सेवाकाल में मृत सरकारी सेवकों के आश्रितों की भर्ती नियम, 1974 का नियम 5 और उत्तराखण्ड सेवाकाल में मृत सरकारी सेवकों की भर्ती नियम, 2003 का नियम 2] – सेवाकाल के दौरान किसी कर्मचारी की मृत्यु होना – अनुकम्पा के आधार पर आश्रित को नियत श्रेणी के पद पर नियुक्ति – तत्पश्चात् लगभग 10-12 वर्षों के पश्चात् पद परिवर्तित करने की मांग करना – विभाग द्वारा इनकार करना – यदि किसी कर्मचारी की सेवाकाल के दौरान मृत्यु हो जाती है तो सेवाकाल के दौरान मृत्यु नियम, 2003 के अनुसार उस विभाग में उपलब्ध उपयुक्त श्रेणी में उसके आश्रितों की नियुक्ति हो सकती है और यदि वह आश्रित स्वेच्छा से उक्त पद को ग्रहण कर लेता है तो वह अत्यधिक विलम्ब अर्थात् 10-12 वर्षों के पश्चात् अपने पद को परिवर्तित करने का दावा नहीं कर सकता है ।

वर्तमान मामले में, याची द्वारा 24 जुलाई, 2013 को अपने स्वर्गीय पिता श्याम लाल की मृत्यु पर, उत्तराखंड सेवाकाल में मृत सरकारी सेवकों के आश्रितों की भर्ती नियम, 2003 के नियमों के अधीन अपनी नियुक्ति का दावा करते हुए नियुक्ति के लिए उक्त आधार पर एक आवेदन कार्यकारी अधिकारी नगर पंचायत, लाल कुआं, जिला नैनीताल के समक्ष फाइल किया था । यह दावा किया कि उसके स्वर्गीय

पिता की मृत्यु की तारीख पर, जो प्रत्यर्थी के साथ चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के रूप में कार्य कर रहा था, याची उस समय वयस्क था तथा इंटरमीडिएट योग्यता रखता था, इस तथ्य के साथ कि स्वर्गीय श्याम लाल के अन्य आश्रितों ने याची के पक्ष में अनापत्ति प्रमाणपत्र दिया था, जिससे याची को नियम 2003 के अधीन अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए विचार किया जा सकता है । अनुकंपा नियुक्ति के लिए याची के आवेदन पर सक्षम प्राधिकारी अर्थात् अध्यक्ष नगर पंचायत, लाल कुआं, जिला नैनीताल द्वारा विचार किया गया था और सरकारी आदेश सं. 6729 के निहितार्थ पर विचार करते हुए तारीख 5 नवंबर, 1992, जिसे उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा जारी करते हुए नियुक्ति का प्रस्ताव बढ़ाया गया था । याची को "सफाईवाला" के पद पर नियुक्त किया जाना था, जिसमें वेतनमान 4400-7440 रुपए के ग्रेड के साथ देय 1,300/- रुपए है । याची ने स्वेच्छा से उक्त नियुक्ति को स्वीकृत कर लिया था और स्वेच्छा से अपने पद को ग्रहण कर लिया था, नवंबर, 2013 को अपनी नियुक्ति के बाद से, वह प्रत्यर्थियों के साथ उक्त हैसियत में कार्य कर रहा था । जिसके पश्चात् बहुत विलम्बित अवस्था में याची ने दलील दी है कि चूंकि उसने अंततः स्नातक डिग्री प्राप्त कर ली है और सिस्टम और डेटाबेस प्रबंधन के साथ सूचना प्रसंस्करण में डिप्लोमा भी धारित कर लिया है, साथ ही साथ उसे अंग्रेजी और हिंदी टाइपिंग का ज्ञान भी है, यह एक योग्यता है, जो तृतीय श्रेणी पद पर उसकी नियुक्ति पर विचार करने के लिए संगत है और इसलिए वर्तमान रिट याचिका में यह दलील दी गई है कि उसकी नियुक्ति को मूल रूप से चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के रूप में नियुक्त किया गया था उसको तृतीय श्रेणी कर्मचारी के पद में परिवर्तित कर दिया जाए । न्यायालय द्वारा रिट याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – तथ्यों के समग्र रूप से विचार करने पर, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ ने जैसा कि मध्य प्रदेश राज्य में लागू अनुकंपा नियुक्ति के नियमों के नियम 7 के संदर्भ में उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में पूर्व में बताया गया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अनुकंपा नियुक्ति के अनुदान के लिए नियमों के अधीन परिकल्पित

नियुक्ति पर विचार करने के लिए तत्काल और आकस्मिक आवश्यकता को पूरा करने के लिए उद्देश्यों के लिए की गई है कि किसी विशेष सामाजिक उद्देश्य को पूरा करने के लिए नियमों के अधीन निर्दिष्ट की गई अनिवार्यता को इतना लचीला नहीं बनाया जा सकता है कि दावेदार को अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए उसकी अपेक्षाओं को व्यापक मापदंडों की परिधि से परे भी बढ़ाया जा सके जो माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पहले ही उल्लिखित निर्णयों में निर्धारित किए गए हैं और विशेष रूप से यदि उक्त सिद्धांतों को विद्यमान मामले की परिस्थितियों में लागू किया गया है, जहां अनुकंपा नियुक्ति देने का उद्देश्य 1 जनवरी, 2013 के आदेश द्वारा याची को नियुक्ति प्रदान करके पूरा किया गया था, जिसे याची की अपेक्षा के अनुसार बदला नहीं जा सकता है और वह भी नियुक्ति की स्वीकृति के 8 वर्षों के बाद अत्यधिक विलम्ब से है । इसलिए, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ द्वारा निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला गया है, यदि उन सिद्धांतों को लागू किया जाता है, तो उस स्थिति में, मौजूदा मामले में याची द्वारा मांगी गई प्रार्थना उपलब्ध नहीं होगी । न्यायालय का विनिश्चय यह नहीं है कि तीसरे प्रत्यर्थी को किसी भी उपचार से वंचित किया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय ने बार-बार कहा है कि अभिरक्षा में मौत के मामले में कुटुंब को प्रतिकर दिया जाना चाहिए । यह आश्चर्य की बात है कि राज्य सरकार ने तीसरे प्रत्यर्थी को इस प्रकार का प्रतिकर देने का विकल्प नहीं चुना है, भले ही उसने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया हो कि तीसरे प्रत्यर्थी के पति की मृत्यु विशेष पुलिस प्रतिष्ठान की अभिरक्षा में रहते हुए असंदिग्ध परिस्थितियों में हुई थी । यह उचित होगा यदि राज्य सरकार ऐसे मामलों में मानदंड के अनुसार प्रतिकर देकर तीसरे प्रत्यर्थी और उसके कुटुंब के प्रति सहानुभूति और करुणा दिखाती है और एच. आई. श्रेणी के पद पर नियुक्ति भी प्रदान करती है । जैसा कि आरम्भ में कहा गया है, अत्यधिक अनिच्छा के साथ हम मामले में हस्तक्षेप कर रहे हैं । लेकिन, इस तरह का हस्तक्षेप आत्यन्तिक रूप से आवश्यक है । यदि अनुकंपा नियुक्तियों से संबंधित सिद्धांतों का उल्लंघन करने वाली नियुक्ति को अबाधित छोड़ दिया जाता है, तो यह इस प्रकार की अवैध नियुक्तियों को जन्म देती है ।

उपरोक्त कारणों से न्यायालय इस याचिका को निम्नानुसार मंजूर करते हैं कि – (i) तृतीय प्रत्यर्थी को वाणिज्यिक कर अधिकारी (द्वितीय श्रेणी) के रूप में नियुक्त करने का तारीख 23 अगस्त, 2004 का आदेश अभिखंडित किया जाता है । (ii) तथापि, हम राज्य सरकार से सिफारिश करते हैं कि हिरासत में अन्य मृत्यु के मामलों में दिए गए उचित प्रतिकर की पेशकश तृतीय प्रत्यर्थी को की जानी चाहिए । (iii) नियुक्ति के आदेश को रद्द करना, राज्य सरकार द्वारा स्वर्गीय आर. के. जैन के कुटुंब को दी जाने वाली ऐसी रियायत और सुविधाओं के मार्ग में नहीं आएगा, जो कुटुंब के एक सदस्य को एच. आई. श्रेणी के पद पर नियुक्ति के प्रस्ताव सहित विधि के अधीन अनुज्ञेय हैं । (iv) पक्षकार अपने-अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे । याची द्वारा जमा की गई धनराशि उसे वापस की जाए । प्रत्यर्थी सं. 3 ने अपने प्रति-शपथपत्र के पैरा 9 में उक्त स्थिति को दोहराया है कि याची द्वारा अपनी सहमति से और बिना किसी आक्षेप के उक्त पद को ग्रहण करने से यह समझा जाएगा कि याची द्वारा पद के परिवर्तन की प्रार्थना को त्याग दिया गया है, इसका कारण यह है कि सेवाकाल के दौरान मृत्यु नियम, 2003 सेवाकाल के दौरान के नियम या मृत्यु नियम, 1974 वर्ष 2003 के डाईंग इन हार्नेस नियम या पहले के नियम, डाईंग इन हार्नेस नियम, 1974 कोई भी यह अनुमति नहीं देते हैं कि एक उम्मीदवार जिसकी पात्रता पर अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए विचार किया गया था, जब उसे नियोक्ता द्वारा नियुक्ति का प्रस्ताव किया गया था, तो कुटुंब की कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए किया गया था, क्योंकि इसका उद्देश्य एक विशेष कल्याणकारी उद्देश्य को पूरा करना था और यही कारण है कि नियमों ने स्वयं कभी भी किसी कर्मचारी की नियुक्ति को बदलने के लिए कोई गुंजाइश या प्रावधान नहीं किया है जहां कर्मचारी ने किसी भी आपत्ति के बिना पहले से ही पद को स्वीकार कर लिया हो । इसी प्रकार, प्रत्यर्थी सं. 3 ने यह दलील दी है कि प्रति-शपथपत्र के पैरा 10 में नगर पंचायत, लाल कुआं, जिला नैनीताल में क्लर्क का ऐसा कोई रिक्त पद नहीं है, जो 2013 के समय उपलब्ध था, जब नियुक्ति के लिए याची के दावे पर अनुकंपा के आधार पर विचार किया जा रहा था और रिक्त पद की उपलब्धता की अनुपस्थिति में,

याची को उस पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता था जैसा कि अब उसके द्वारा दावा किया जा रहा है । प्रत्यर्थी सं. 3 ने आगे दलील दी है कि यदि याची की नियुक्ति के बाद कोई नया पद सृजित होता है, जो कि तृतीय श्रेणी के पद की बढ़ोतरी होती है तो स्वयं नगर पंचायत के कैडर विवरण के अनुसार जो स्वयं भर्ती का स्रोत है और तृतीय श्रेणी कर्मचारी का उक्त पद, केवल सीधी भर्ती के माध्यम से या पदोन्नति के माध्यम से भरने के लिए ही उपलब्ध है, किन्तु इसे याची की नियुक्ति को बदलकर समायोजित या उपलब्ध नहीं कराया जा सकता है और वह भी विलंबित चरण में यानी उसकी प्रारंभिक नियुक्ति के लगभग 7 वर्ष बाद जो 2013 में की गई थी । जहां तक प्रत्यर्थी द्वारा फाइल प्रति-शपथपत्र का सं. 4 और 5 का संबंध है, उसने अपने प्रति-शपथपत्र के पैरा 5 और 11 में विशेष रूप से यह कहा है कि याची द्वारा फाइल की गई याचिका, कि याची को तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में समायोजित करने का आश्वासन दिया गया था, आत्यन्तिक रूप से मान्य नहीं है, क्योंकि ऐसा कोई आश्वासन याची को कभी दिया ही नहीं गया था और न ही यह दिखाने के लिए अभिलेख पर ऐसा कोई दस्तावेज है कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा याची को कभी कोई लिखित आश्वासन दिया गया था और उन्होंने भी विशेष रूप से याची के दावे को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया था कि चूंकि याची ने कोई आपत्ति उठाए बिना स्वेच्छा से प्रस्तावित पद स्वीकार कर लिया था, वह इस विलंबित प्रक्रम पर संवर्ग में परिवर्तन का दावा नहीं कर सकता है, जो विधायी मंशा और नियुक्ति के उपयोग में सेवा के दौरान मृत्यु नियमों के उपबंधों के विपरीत है और वह भी विशेष रूप से तब जब प्रत्यर्थी सं. 4 और 5 द्वारा एक समान रुख भी अपनाया गया है कि लिपिक का कोई पद नहीं था जो 2013 में प्रासंगिक समय पर रिक्त था । याची की दलील नियुक्ति के परिवर्तन से संबंधित है । प्रत्यर्थियों द्वारा अपने प्रति-शपथपत्र में पद की अनुपलब्धता के मुद्दे को विशिष्ट रूप से इनकार किया है कि ऐसा कोई आश्वासन कभी भी दिया गया था, और चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के पद पर याची के स्वैच्छिक रूप से नियुक्ति स्थापित तथ्य है, जो आम तौर पर प्रत्यर्थी सं. 3, 4 और 5 के संबंधित प्रति हलफनामे में, अनुरोध किया गया था, चूंकि याची द्वारा इसका खंडन नहीं किया गया था

क्योंकि याची द्वारा कोई प्रत्युत्तर हलफनामा फाइल नहीं किया गया था, जब पहली बार तारीख 3 दिसंबर, 2019 को समय दिया गया था, जब तक कि मामले की सुनवाई तारीख 29 जुलाई, 2021 को की गई थी, यह माना जाएगा कि प्रत्यर्थी द्वारा अपने प्रति-शपथपत्र में लिए गए रुख से इनकार नहीं किया गया था और यह माना जाएगा कि यह तथ्य की स्वीकृति होगी, जो अन्यथा याची द्वारा रिट याचिका में कोई अभिवचन उद्भूत या इसके विपरीत अनुरोध नहीं किया गया था । उस स्थिति में, रिट याचिका में कोई गुणागुण नहीं है और यह खारिज किए जाने योग्य है । (पैरा 26, 27, 28, 29, 30 और 31)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2016] 2016 (1) एम. पी. जे. आर. 33 :
विमला दीवान और अन्य बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य** ; 24

[2006] 2006 (1) एम. पी. जे. आर. 239 में प्रकाशित :
पुष्पेन्द्र सिंह बघेल बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य** ; 25

[1996] जे. टी. 1996 (5) एस. सी. 319 :
हिमाचल सड़क परिवहन निगम बनाम **श्री दिनेश कुमार** ; 17,24

[1996] जे. टी. 1996 (9) एस. सी. 197 :
हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड बनाम **श्रीमती ए. राधिका तिरुमलाई** ; 18,24

[1994] (1994) 4 एस. सी. सी. 138 में प्रकाशित **:**
उमेश कुमार नागपाल बनाम **हरियाणा राज्य** । 25

रिट (सिविल) अधिकारिता : 2019 की रिट याचिका (एस/एस) संख्या 2281.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री एस. एस. यादव, विद्वान् काउंसेल

उत्तराखण्ड राज्य की ओर से श्री एन. पी. शाह, स्थायी काउंसेल

प्रत्यर्थी सं. 4 और 5 की ओर से श्री जे. सी. बेलवाल, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति शरद कुमार शर्मा – वर्तमान रिट याचिका, याची द्वारा 24 जुलाई, 2013 को अपने स्वर्गीय पिता श्याम लाल की मृत्यु पर, उत्तराखंड सेवाकाल में मृत सरकारी सेवकों के आश्रितों की भर्ती नियम, 2003 के नियमों के अधीन अपनी नियुक्ति का दावा करते हुए नियुक्ति के लिए उक्त आधार पर एक आवेदन कार्यकारी अधिकारी नगर पंचायत, लाल कुआं, जिला नैनीताल के समक्ष फाइल किया था । यह दावा किया कि उसके स्वर्गीय पिता की मृत्यु की तारीख पर, जो प्रत्यर्थी के साथ चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के रूप में कार्य कर रह था, याची उस समय वयस्क था तथा इंटरमीडिएट योग्यता रखता था, इस तथ्य के साथ कि स्वर्गीय श्याम लाल के अन्य आश्रितों ने याची के पक्ष में अनापत्ति प्रमाणपत्र दिया था । जिससे याची को नियम 2003 के अधीन अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए विचार किया जा सकता है ।

2. अनुकंपा नियुक्ति के लिए याची के आवेदन पर सक्षम प्राधिकारी अर्थात् अध्यक्ष नगर पंचायत, लाल कुआं, जिला नैनीताल द्वारा विचार किया गया था और सरकारी आदेश सं. 6729 के निहितार्थ पर विचार करते हुए तारीख 5 नवंबर, 1992, जिसे उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा जारी करते हुए नियुक्ति का प्रस्ताव बढ़ाया गया था । याची को "सफाईवाला" के पद पर नियुक्त किया जाना था, जिसमें वेतनमान 4400-7440 रुपए के ग्रेड के साथ देय 1,300/- रुपए है ।

3. याची ने स्वेच्छा से उक्त नियुक्ति को स्वीकृत कर लिया था और स्वेच्छा से अपने पद को ग्रहण कर लिया था, नवंबर, 2013 को अपनी नियुक्ति के बाद से, वह प्रत्यर्थियों के साथ उक्त हैसियत में कार्य कर रहा था । जिसके पश्चात् बहुत विलम्बित अवस्था में याची ने दलील दी है कि चूंकि उसने अंततः स्नातक डिग्री प्राप्त कर ली है और सिस्टम और डेटाबेस प्रबंधन के साथ सूचना प्रसंस्करण में डिप्लोमा भी धारित कर लिया है, साथ ही साथ उसे अंग्रेजी और हिंदी टाइपिंग का ज्ञान भी है, यह एक योग्यता है, जो तृतीय श्रेणी पद पर उसकी नियुक्ति पर विचार करने के लिए संगत है और इसलिए वर्तमान रिट याचिका में यह

दलील दी गई है कि उसकी नियुक्ति को मूल रूप से चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के रूप में नियुक्त किया गया था उसको तृतीय श्रेणी कर्मचारी के पद में परिवर्तित कर दिया जाए ।

4. याची के विद्वान् काउंसेल ने रिट याचिका में यह भी दलील दी है कि तथाकथित योग्यता के आधार पर याची की नियुक्ति के दावे पर, जिसका उल्लेख याची ने पूर्ववर्ती पैरा में किया है । याची ने प्रत्यर्थी सं. 4 और 5 से संपर्क किया था, जो याची के नियुक्ति अधिकारी थे और उन्होंने दलील दी है कि तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में नियुक्ति के लिए उनके दावे पर, उनके पास विद्यमान योग्यता के आधार पर, उन्हें प्रत्यर्थियों द्वारा मौखिक रूप से आश्वासन दिया गया था कि तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में रूपांतरण के लिए उनके दावे पर विचार किया जाएगा, ताकि उन्हें तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में नियुक्त किया जा सके । उपरोक्त आश्वासन के अतिरिक्त एक अन्य कारण जो आधार के रूप में लिया गया था कि वह सफाई कर्मचारी को और तृतीय श्रेणी के कर्मचारी के पद को परिवर्तित करने की रिट याचिका फाइल करने के लिए समय-समय पर, जब भी नगरपालिका के साथ कार्य की आवश्यकता थी, तो प्रत्यर्थी सं. 4 और 5 अक्सर याची से मंत्रालयी स्टाफ के कर्तव्यों का निर्वहन करने के लिए कहते थे ।

5. उपरोक्त तथ्य को प्रमाणित करने के लिए कि उन्हें मंत्रालयी कर्मचारियों के कर्तव्यों का निर्वहन करने के लिए बुलाया गया था, जो कि तृतीय श्रेणी का पद है, याची ने कुछ उदाहरणों को उद्धृत किया था, जब प्रत्यर्थी द्वारा तृतीय श्रेणी कर्तव्यों का निर्वहन करने के लिए कहा गया था । उदाहरण के लिए :–

> (क) 6 अप्रैल, 2016 को याची को पार्किंग कर वसूलने के लिए कहा गया था । इस न्यायालय ने दस्तावेजों को देखने पर पाया कि यदि उन्हें 6 अप्रैल, 2016 को पार्किंग कर एकत्र करने के लिए कार्य करने के लिए जिम्मेदारी दी गई थी, यदि दस्तावेजों पर विचार किया जाए तो वास्तव में, यह केवल एक दिन की व्यवस्था थी, जिसके अधीन याची को तृतीय श्रेणी कर्मचारी, श्री उर्व दत्त की

सहायता करने के लिए कहा गया था, जिसे पार्किंग कर एकत्र करने के कार्य में तैनात किया हुआ था । जिससे याची के पक्ष में कोई ग्रहणाधिकार नहीं बनता ।

तारीख 6 अप्रैल, 2016 के उक्त दस्तावेज (रिट याचिका उपाबंध 3) की जांच से यह प्रकट हो जाएगा कि याची को पार्किंग शुल्क वसूलने के लिए नियुक्त नहीं किया था और न ही स्थायी कार्य दिया था, बल्कि वह केवल एक अस्थायी व्यवस्था थी ।

(ख) इसी तरह, याची ने दलील दी है कि तारीख 6 जून, 2016 को, उससे एक बार फिर करों की वसूली करने के लिए कहा गया था, लेकिन वह भी केवल एक दिन की व्यवस्था थी, जो याची के पक्ष में चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी से तृतीय श्रेणी कर्मचारी में नियुक्ति को परिवर्तन का दावा करने का कोई अधिकार नहीं बनता । केवल इसलिए, यदि कार्य की आवश्यकता के अनुसार उनसे केवल एक दिन की अवधि के लिए पार्किंग कर एकत्र करने का अनुरोध किया गया था, तो वह एक अस्थायी व्यवस्था थी, जिसमें याची को उक्त हैसियत में कार्य करना जारी रखने के लिए कोई ग्रहणाधिकार नहीं था ।

(ग) याची ने दलील दी है कि 24 अक्तूबर, 2016 को नगर पंचायत के अन्य अधिकारियों की एक टीम के साथ उसे भी अंशकालिक टीम के रूप में इसका सदस्य बनाया गया था, जिसे मलिन बस्ती की पहचान करने की जिम्मेदारी दी गई थी । एक बार फिर, केवल इसलिए कि उसे एक टीम के सदस्य के रूप में गठित किया गया था, जिसमें तृतीय श्रेणी का कर्मचारी शामिल था, उस हिसाब से उसे तृतीय श्रेणी का कर्मचारी होने का अधिकार या दर्जा नहीं मिल सकता ।

(घ) याची ने दलील दी है कि 22 जनवरी, 2018 को फिर से उसे विभिन्न शिकायतकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत आपत्तियों को तय करने के लिए लिपिक कार्य सौंपा गया था, हालांकि यह व्यवस्था भी केवल एक दिन के लिए थी, जिसके अधीन उसे वास्तव में

आपत्तियों को तय करने की जिम्मेदारी नहीं दी गई थी, बल्कि उसे समिति के सदस्यों की सहायता के लिए समिति का सदस्य बनाया गया था, जिन्हें आपत्तियों पर निर्णय लेना था ।

(ङ) 5 मार्च, 2018 को, याची ने दलील दी थी कि उसे समिति के एक सदस्य का गठन करने के लिए भी कहा गया था, जिसे क्षेत्र में रहने वाले बेघर परिवारों की पहचान करने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी और वह दलील देता है कि चूंकि वहां भी, उसे सहायक सर्वेक्षणकर्ता का कर्तव्य दिया गया था, इसलिए वह अपनी नियुक्ति को चतुर्थ श्रेणी से तृतीय श्रेणी कर्मचारी में परिवर्तित करने का हकदार होगा । एक बार फिर, उक्त की जांच पर 5 मार्च, 2018 का दस्तावेज, उन्हें केवल टीम के सहायक कर्मचारियों के सदस्य के रूप में बनाया गया था, यह एक स्थायी कार्यभार नहीं था जो याची को दिया गया था, यह केवल स्थानीय निकाय के कार्य की आवश्यकता को पूरा करने के लिए था ।

(च) याची ने दलील दी है कि वह तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में तैनात होने का हकदार हो गया क्योंकि प्रत्यर्थी नगर पंचायत ने 12 जुलाई, 2018 को उसे नियंत्रण कक्ष, लाल कुआं जिला नैनीताल में तैनात किया था और चूंकि उसे बाढ़ नियंत्रण कक्ष का प्रभार दिया गया था, इस तथ्य से कि तृतीय श्रेणी कर्मचारी, जिसे उस समय उक्त जिम्मेदारी के साथ प्रतिनियुक्त किया गया था, वह प्रशासनिक कारणों से उस दिन उपलब्ध नहीं था, लेकिन यहां फिर से, यह केवल एक व्यवस्था थी और याची के किसी भी ग्रहणाधिकार या निर्धारण अधिकार का निर्माण करने वाला एक स्थायी कार्य नहीं था ।

(छ) याची ने दलील दी है कि 14 सितंबर, 2018 को उन्हें एक कार्यक्रम में 15 सितंबर से 2 अक्तूबर के बीच आयोजित होने वाली गतिविधियों के पर्यवेक्षण और निगरानी का कार्य सौंपा गया था, जिसे भारत सरकार के निर्देशों के अनुसार तारीख 7 सितम्बर, 2018 को प्रायोजित किया गया था, जिसे स्वच्छता ही सेवा के नाम से जाना जाता है । यह नियुक्ति भी, दैनिक आधार पर थी

तथा कार्य की प्रकृति, जिसे याची द्वारा भारत सरकार के उक्त कार्यक्रम के अधीन निर्वहन किया जा रहा था, फिर से उसी क्षमता में थी जो एक चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी की थी ।

(ज) याची के काउंसेल ने आगे दलील दी है कि ठोस अपशिष्ट प्रबंधन कार्यक्रम के अधीन, (तारीख 12 अप्रैल, 2019 के निदेशक संचार द्वारा लागू) याची की दलील है कि 16 अप्रैल, 2019 को, चूंकि वह सम्बन्धित नोडल/सहायक नोडल अधिकारी को एक सूचना प्रदान कर रहा था कि ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के प्रबंधन के लिए दिए गए निर्वहन कार्य, जिसका स्वयं में यह अर्थ नहीं होगा कि उसे तृतीय श्रेणी के कर्मचारी का स्थायी कार्य सौंपा गया था, क्योंकि इस व्यवस्था में भी उसकी नियुक्ति और कार्य की प्रकृति चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी के रूप में जारी रही ।

(झ) याची के काउंसेल द्वारा अपने समर्थन में दलील दी गई है कि एक योजना में, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के डोर टू डोर संग्रह के लिए, बायोडिग्रेडेबल और गैर-बायोडिग्रेडेबल कचरे को अलग करने से संबंधित कार्य, उन्हें 17 मई, 2019 को किए गए संचार द्वारा डोर टू डोर आधार पर उक्त कार्य का निर्वहन की जिम्मेदारी के साथ प्रतिनियुक्त किया गया था, इसलिए वह तृतीय श्रेणी का दर्जा दिए जाने का हकदार होगा ।

6. प्रत्येक दस्तावेज की संवीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि यह केवल आंतरिक व्यवस्था की गई थी, जहां याची को जिम्मेदारी दी गई थी, या तो तृतीय श्रेणी के कर्मचारियों की एक टीम में सहायता करने के लिए या जो योजनाएं शुरू की गई थी, उनके अधीन सदस्य बनने के लिए जो ठोस अपशिष्ट प्रबंधन को विनियमित करने के उद्देश्यों के लिए स्थानीय निकायों के निदेशालय या भारत सरकार द्वारा जारी की गई थी, जिससे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि इन आदेशों (रिट याचिका के उपाबंध 3) के निहितार्थ से, याची स्वचालित रूप से तृतीय श्रेणी कर्मचारी होने का दर्जा प्राप्त कर लेगा, यदि याची का उक्त पद पर निरंतरता और वेतन आहरित करना नियुक्ति का मुख्य आदेश तारीख 1

नवंबर, 2013 था, जैसा कि उक्त पद के लिए जारी नियुक्ति में स्वीकार्य था और वह भी जब ये सभी कार्य जो राज्य या भारत सरकार द्वारा शुरू किए गए थे और यह पहले से कार्य कर रहे कर्मचारियों को समय-समय पर जिम्मेदारी सौंपता है तो वह अपने पक्ष में गृहणाधिकार होने का दावा नहीं कर सकता बल्कि याची का तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में नियुक्ति पर विचार किया जाएगा और वह भी तब जब याची को समय-समय पर सौंपे गए ये सभी कार्य प्रारंभिक नियुक्ति तारीख 1 नवंबर, 2013 के बाद लगभग 5 से 7 वर्ष के लिए था ।

7. अपने मामले को और पुष्ट करने के लिए, याची ने दलील दी है कि श्रीमती सोनी पूर्व से नियुक्त कर्मचारियों में से एक है जो शुरू में एक सफाईकर्मी के रूप में नियुक्त की गई थी, लेकिन बाद में उन्हें लिपिक के रूप में तैनात करके नियुक्ति की गई थी । इसलिए, यह एक प्रकार का भेदभाव है जो प्रत्यर्थियों के द्वारा उसके साथ किया गया है, उसकी नियुक्ति तारीख 1 नवंबर, 2013 को की गई थी, इसलिए, तृतीय श्रेणी कर्मचारी में परिवर्तित होने योग्य है ।

8. सूचना का अधिकार अधिनियम के अधीन याची को श्रीमती सोनी की नियुक्ति के सम्बन्ध में सूचना दी गई थी । यदि उक्त आदेश को ही ध्यान में रखा जाता है, तो वास्तव में, अभिलेख के अनुसार, यह किसी कर्मचारी के चतुर्थ श्रेणी के पद का तृतीय श्रेणी के पद में परिवर्तन नहीं है, जो श्रीमती सोनी को दिया गया था । बल्कि इस आदेश से ही पता चलता है कि उन्हें वास्तव में उनकी पात्रता के आधार पर लिपिक के पद पर पदोन्नति दी गई थी । श्रीमती सोनी की उक्त नियुक्ति का कारण पदोन्नति के माध्यम से की गई एक नियुक्ति थी जिस कारण से उन्हें एक लिपिक पद के कार्य का निर्वहन करने के लिए कहा गया था, ऐसे में इसे नियुक्ति में परिवर्तन नहीं कहा जा सकता, जिसके लिए याची द्वारा दावा किया गया था ।

9. याची द्वारा यह भी दलील दी गई है कि डोईवाला, जिला देहरादून की एक अन्य नगरपालिका में, एक समान रूप से नियुक्त चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी श्री अश्वनी कुमार, जिन्हें शुरू में 1974 के

नियमों के अधीन अनुकंपा के आधार पर सफाईकर्मी के रूप में नियुक्त किया गया था, जिसमें तारीख 3 सितंबर, 2015 को एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया था तथा तारीख 30 अगस्त, 2015 को उनकी नियुक्ति के तुरंत एक महीने के भीतर नगरपालिका, डोईवाला, जिला देहरादून ने एक प्रस्ताव पारित कर श्री अश्विनी कुमार को अनुकंपा के आधार पर 5200-20200 रुपए के ग्रेड वेतन के साथ नियुक्त किया गया था । रुपए 1900/- ग्रेड वेतन पर इन कारणों से याची द्वारा स्थानीय निकाय डोईवाला द्वारा श्री अश्वनी कुमार की नियुक्ति के समकक्षता होने का दावा नहीं किया जा सकता । नगरपालिका, डोईवाला, जिला देहारादून एक स्वतंत्र स्थानीय निकाय है, जिसका गठन नगरपालिका अधिनियम के प्रावधानों के अधीन किया गया है और अपने कर्मचारियों के साथ उनके संबंधित नियोक्ता द्वारा व्यवहार किया जाता है, उसी समानता या सिद्धांतों को स्थानीय निकायों में लागू नहीं किया जा सकता है, जो विधि के अधीन अपने अस्तित्व, संविधान और निर्माण में बहुत अलग हैं, और याची के विद्वान् काउंसेल की उस दलील को स्वीकार नहीं करने का दूसरा कारण यही है । श्री अश्विनी कुमार ने तारीख 30 अगस्त, 2015 को अपनी नियुक्ति के तुरंत बाद, एक उचित अवधि के भीतर, तृतीय श्रेणी कर्मचारियों के रूप में नियुक्ति के लिए अपना दावा पेश किया, अर्थात् तारीख 30 सितंबर, 2015 को नियुक्ति के एक सप्ताह के भीतर, पर विचार किया गया था और अंततः उन्हें इस मामले के विपरीत एक अतिरिक्त पद के सृजन करने के लिए नियुक्त किया गया था, जहां 1 नवंबर, 2013 को की गई नियुक्ति को स्वीकार करने के बाद तारीख 20 जून, 2019 को बहुत विलंबित चरण के बाद दावा किया गया था ।

10. यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिसे याची के दावा को समान कहा जा सकता है, क्योंकि याची ने तारीख 1 नवंबर, 2013 को नियुक्ति स्वीकार कर ली है, और उक्त नियुक्ति पर कभी आपत्ति नहीं जताई थी, बल्कि स्वेच्छा से पदभार ग्रहण किया था और पर्याप्त लंबी अवधि के लिए कार्य किया था जो प्रारंभिक नियुक्ति की तारीख से

लगभग 8 साल से अधिक है और इस कारण से याची द्वारा समकक्षता का दावा नहीं किया जा सकता है या पहले से उल्लिखित कारणों के लिए श्री अश्विनी कुमार की तुलना में अपने पद के परिवर्तन की मांग में याची तक विस्तारित नहीं किया जा सकता है ।

11. याची ने दलील दी है कि अपना दावा करते हुए, उसने तारीख 19 मार्च, 2018 और तारीख 2 दिसंबर, 2018 को अपना अभ्यावेदन प्रस्तुत किया था, जिसमें प्रार्थना की गई थी उसकी नियुक्ति जो तारीख 1 नवंबर, 2013 को की गई थी, उसे तृतीय श्रेणी के कर्मचारी के रूप में परिवर्तित किया जाना चाहिए था, जो अभ्यावेदन में उठाए गए दावे के विपरीत है, क्योंकि अभ्यावेदन में याची ने दलील दी है कि उसे तृतीय श्रेणी के कर्मचारी के रूप में पदोन्नति के लिए विचार किया जा सकता है और यह एक अभ्यावेदन नहीं था, जहां उसने अपनी चतुर्थ श्रेणी की नियुक्ति को तृतीय श्रेणी में परिवर्तित करने के लिए अनुरोध किया था, इस प्रकार रिट याचिका के अभिवाक्, याची द्वारा दिए गए दस्तावेजों के विपरीत हैं ।

12. याची के विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी है कि तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में नियुक्ति के लिए याची के दावे पर तारीख 5 नवंबर, 1992 के सरकारी आदेश के आलोक में विचार किया जाना चाहिए था, जैसा कि तत्कालीन उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा जारी किया गया था, जो यह विचार करता है कि डाइंग इन हार्नेस नियम के अधीन की जाने वाली नियुक्ति, उम्मीदवार के पास विद्यमान योग्यता के अनुरूप होनी चाहिए थी लेकिन याची ने इस तथ्य को अनदेखी कर दी है कि उक्त सरकारी आदेश नियुक्तियों पर भी प्रतिबंध लगाता है कि जो उक्त सरकारी आदेश का पालन करते हुए उम्मीदवार द्वारा विद्यमान योग्यता के आधार पर की जानी हैं, इसमें उक्त सरकारी आदेश में उन पदों को शामिल नहीं किया जाएगा जो केंद्रीकृत सेवा नियमों के अधीन भरे जाने हैं और इसके अतिरिक्त सरकारी आदेश के क्रम में जो पद मृतक कर्मचारी द्वारा धारण किया गया था, अनुकंपा के आधार पर उस पद से अतिरिक्त पद पर नियुक्ति नहीं की जाएगी या मांग नहीं की जाएगी ।

13. याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह कथन किया गया है कि तारीख 5 नवंबर, 1992 के तत्कालीन उत्तर प्रदेश राज्य के सरकारी आदेश के सिद्धांतों के आधार पर उत्तराखंड राज्य ने तारीख 27 जुलाई, 2011 के सरकारी आदेश को जारी करके अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के तौर-तरीकों को कम कर दिया था जिसमें तारीख 5 नवंबर, 1992 के उत्तर प्रदेश राज्य के सरकारी आदेश द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों में शिथिलता देने के लिए स्थानीय निकायों को एक सामान्य निदेश जारी किया गया था । यदि वर्ष 1992 के सरकारी आदेश के उपरोक्त सिद्धांतों को परिवर्तित तौर-तरीकों के संबंध में पढ़ा जाना है, जैसा कि तारीख 27 जुलाई, 2011 के सरकारी आदेश द्वारा उत्तराखंड राज्य द्वारा लागू किया गया था, तो फिर से यह याची के संबंध में दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन इस मुद्दे को शामिल नहीं करेगा, क्योंकि ये सरकारी आदेश याची की नियुक्ति से पहले भी अस्तित्व में थे, जो तारीख 1 नवंबर, 2013 को की गई थी और यदि याची का कोई दावा था, तो तारीख 27 जुलाई, 2011 के उपरोक्त संशोधित सरकारी आदेश (रिट याचिका के उपाबंध 8) के आधार पर तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में नियुक्ति की मांग करने के लिए, उस स्थिति में, याची को नियुक्ति पत्र स्वीकार नहीं करना चाहिए था लेकिन स्वेच्छा से नियुक्ति स्वीकार करने के बाद और इतने लंबे समय तक कार्य करने के बाद और उसके बाद सरकारी आदेश के आधार पर एक विलंबित दावा फाइल किया गया, जो उसकी नियुक्ति से पहले भी विद्यमान था, इस पर विचार नहीं किया जा सकता है, क्योंकि उनकी नियुक्ति की स्वीकृति और उक्त पद पर कार्यभार ग्रहण करना, स्वयं ही सामाजिक कल्याण के उद्देश्य और डाइंग इन हार्नेस रूल्स के इरादे को पूरा करता है, जो मृतक कर्मचारी के शोक संतप्त कुटुंब को तत्काल राहत देने पर विचार करता है, जिसका कमाने वाला किसी भी अप्रत्याशित घटना के कारण नहीं रहा है ।

14. याची ने अपने काउंसेल के माध्यम से यह अपने तर्क में दलील दी थी कि प्रत्यर्थी सं. 2 ने तारीख 14 सितंबर, 2015 को, प्रत्यर्थी सं. 5 को पत्र लिखा था जिसके द्वारा यह उपबंध किया गया था कि हार्नेस नियमों के अधीन आश्रितों की नियुक्ति योग्यता के अनुसार की

जानी है, लेकिन यदि उक्त सरकारी आदेश को फिर से विचार में लिया जाता है, तो प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा जारी तारीख 14 सितम्बर, 2015 का सरकारी आदेश पदोन्नति पर विचार करने के प्रयोजनों के लिए था न कि प्रारंभिक नियुक्ति के प्रयोजनों के लिए, जिसे प्रारंभ में अनुकंपा के आधार पर किया जाना है । प्रेरणा स्तर पर प्रारंभिक नियुक्ति उन नियुक्तियों से काफी भिन्न होती है जो पदोन्नति के माध्यम से की जानी हैं, क्योंकि मापदंडों पर विचार, संबंधित सेवा नियमों के अनुसार पूरी तरह से बदल जाते हैं ।

15. याची ने दलील दी है कि तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में नियुक्ति के उनके दावे पर विचार करते हुए नगर पंचायत ने विभिन्न प्रस्ताव पारित किए हैं, उदाहरण के लिए संकल्प सं. 21 तारीख 21 अगस्त, 2015, संकल्प सं. 15 तारीख 13 मई, 2016, संकल्प सं. 12 तारीख 2 दिसंबर, 2018 । वास्तव में, यदि इन सभी प्रस्तावों पर ही विचार किया जाए तो वे विशेष रूप से याची के पदोन्नति के लिए दावे पर विचार करने तक सीमित और संबंधित है । लेकिन, हालांकि पदोन्नति के लिए विचार किए जाने के लिए इस न्यायालय के मतानुसार वहां एक शर्त संलग्न की गई थी कि पद की उपलब्धता से पदोन्नति पर अन्यथा विचार नहीं किया जा सकेगा, यहां तक कि पदोन्नति पर रिक्ति न होने पर भी पदोन्नति पर विचार किया जा सकेगा ।

16. पूर्वोक्त तीन संकल्पों का संदर्भ, रिट याचिका में दावाकृत अनुतोष का समर्थन करने के प्रयोजनों के लिए, मेरा विनम्र मत है कि यह इस कारण से लागू नहीं किया जा सकता है कि रिट याचिका में याची ने अपनी नियुक्ति को चतुर्थ श्रेणी से तृतीय श्रेणी पद पर बदलने के लिए अनुरोध किया है, जैसा कि यह 1 नवंबर, 2013 को दिया गया था, और याची द्वारा स्वीकार किया गया था, जबकि पूर्वोक्त प्रस्ताव, जिनका अवलंब लिया गया है, विशेष रूप से केवल याची की अभ्यर्थिता पर विचार करने के उद्देश्यों के लिए थे, इस शर्त के अधीन कि तृतीय श्रेणी कर्मचारी के पदोन्नति पद पर रिक्ति उपलब्ध हो ।

17. माननीय उच्चतम न्यायालय का निर्णय, विशेष रूप से जैसा कि आज के निर्णय **हिमाचल सड़क परिवहन निगम** बनाम **श्री दिनेश कुमार**[1], पैरा 9 में प्रकाशित किया गया है, यह विशेष रूप से अभिनिर्धारित किया गया है कि अनुकंपा के आधार पर या पदोन्नति के लिए उस प्रयोजनों के लिए भी नियुक्ति के दावे पर भी केवल रिक्ति की उपलब्धता की शर्तों पर विचार किया जा सकता है और यदि उस संवर्ग में संगठन के पास कोई रिक्ति उपलब्ध नहीं है जिसमें दावा किया गया है, तो स्वयं में दावे पर एक अतिरिक्त पद के सृजन द्वारा दावे पर विचार नहीं किया जा सकता है । उक्त निर्णय का प्रासंगिक पैरा 9 इस प्रकार उद्धृत है कि :–

> "9. हमारा यह मत है कि हिमाचल प्रदेश प्रशासनिक अधिकरण ने तारीख 27 मार्च, 1995 का आदेश पारित करके और प्रत्यर्थी को नियमित लिपिक पदों पर तुरंत नियुक्त करने का निदेश देकर अवैध रूप से और अधिकार क्षेत्र के बिना कार्य किया तथा रिक्ति की अनुपस्थिति में निगम के लिए किसी व्यक्ति को किसी पद पर नियुक्त करने का अधिकार नहीं है । यह रिक्तियों के उपलब्ध नहीं होने पर व्यक्तियों को नियुक्त करने वाले सार्वजनिक प्राधिकरण की शक्तियों का घोर दुरुपयोग होगा । यदि व्यक्तियों को इस तरह नियुक्त किया जाता है और उन्हें वेतन दिया जाता है तो यह केवल सार्वजनिक धन का दुरुपयोग होगा, जो पूरी तरह से अनधिकृत है । सामान्यतया, यदि अधिकरण यह पाता है कि कोई व्यक्ति सगे संबंधी नीति के अधीन किसी पद पर नियुक्त होने के लिए योग्य है, तो अधिकरण को केवल उपयुक्त प्राधिकारी को प्रासंगिक नियमों के आलोक में और पद की उपलब्धता के अधीन विशेष आवेदक के मामले पर विचार करने का निदेश देना चाहिए । अधिकरण के लिए किसी पद पर किसी व्यक्ति की नियुक्ति का निदेश देना या संबंधित अधिकारियों को एक अतिरिक्त पद सृजित करने और फिर पद पर किसी व्यक्ति

[1] जे. टी. 1996 (5) एस. सी. 319.

को नियुक्त करने का निदेश देना संभव नहीं है । हमारा यह मत है कि इन दोनों अपीलों में प्रशासनिक अधिकरण द्वारा दिए गए निदेश पूरी तरह से अनधिकृत और अवैध है । इसलिए हम उन आदेशों को अपास्त करने के लिए बाध्य है जिनके विरुद्ध अपील की गई है । हम एतद्द्वारा ऐसा करते है और अपील की अनुमति देते हैं । लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा ।"

18. एक और निर्णय है जो माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया था, जैसा कि **हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड** बनाम **श्रीमती ए. राधिका तिरुमलाई**[1] में प्रकाशित हुआ था जिसमें उक्त निर्णय भी शामिल है, जो लगभग एक समान विवाद्यक से संबंधित था, जहां पद के एक विशेष संवर्ग के लिए अनुकंपा के आधार पर नियुक्त किए जाने का दावा किया गया था, माननीय उच्चतम न्यायालय ने उक्त निर्णय के पैरा 6 और 9 में विशेष रूप से यह अभिनिर्धारित किया था कि किसी विशेष संवर्ग के लिए अनुकंपा के आधार पर दावा की गई ऐसी नियुक्ति पर विचार किया जा सकता है और विशिष्ट रूप से केवल तभी प्रदान किया जा सकता है जब कोई पद रिक्ति विद्यमान हो जिसको भरा जाना है । उक्त निर्णय के पैरा 6 और 9 इस प्रकार अपेक्षित हैं :–

"6. अपीलार्थी कंपनी में अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति नियमों द्वारा शासित होती है । नियम 78.1 के अधीन उपबंध किया गया है कि मृतक कर्मचारी के आश्रितों में से एक को नियोजन विनिमय द्वारा प्रायोजित किए बिना अन्य आवेदकों की तुलना में कंपनी में नियुक्ति के लिए विचार किया जा सकता है, लेकिन नियम 78.3 में यह अधिकथित किया गया है कि ऐसी नियुक्ति संबंधित स्टाफिंग कैडर/प्राधिकरण में रिक्तियों की उपलब्धता के आधार पर की जाएगी । दूसरे शब्दों में अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति केवल तभी की जा सकती है जब कोई पद रिक्ति उपलब्ध हो । अपीलार्थी के अनुसार कोई पद रिक्ति उपलब्ध नहीं है क्योंकि अधिशेष मजदूर है और अपीलार्थी की नीति कार्यबल

[1] जे. टी. 1996 (9) एस. सी. 197.

को उत्तरोत्तर कम करने की है और इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए नई भर्ती पर प्रतिबंध लगा दिया गया है और अपीलार्थी स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए प्रोत्साहन भी दे रहा है । उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश का विचार था कि नई भर्ती पर इस तरह के प्रतिबंध के बावजूद अपीलार्थी के लिए नियुक्ति करना अनिवार्य था –

> 'हमारा यह विचार है कि यह स्पष्ट रूप से कथन किया जाना चाहिए कि अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के सभी दावों में नियुक्ति में कोई विलंब नहीं होना चाहिए । अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति प्रदान करने का उद्देश्य कुटुंब में कमाने वाले की मृत्यु के कारण होने वाली कठिनाइयों को कम करना है । इसलिए, संकटग्रस्त कुटुंब को मुक्ति दिलाने के लिए इस प्रकार की नियुक्ति तुरंत प्रदान की जानी चाहिए । इस प्रकार के मामले को वर्षों तक लंबित रखना अनुचित है । यदि नियुक्ति के लिए कोई उपयुक्त पद नहीं है तो आवेदक को समायोजित करने के लिए अतिरिक्त पद सृजित किया जाना चाहिए ।'"

9. वर्तमान मामले में समान स्थिति हिमाचल सड़क परिवहन निगम **बनाम** दिनेश कुमार (उपर्युक्त) में उत्पन्न हुई । उस मामले में यह न्यायालय दो मामलों पर विचार कर रहा था जहां मृतक कर्मचारियों के आश्रितों द्वारा अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए आवेदन फाइल किए गए थे और उन दोनों को प्रतीक्षा सूची में रखा गया था और उन्हें नियुक्ति नहीं दी गई थी । उन्होंने हिमाचल प्रदेश प्रशासनिक अधिकरण को समावेदन किया और अधिकरण ने हिमाचल सड़क परिवहन निगम को दोनों को नियमित आधार पर लिपिक के रूप में नियुक्त करने का निदेश दिया अधिकरण के उक्त निर्णय को अपास्त करते हुए इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है –

> ".....रिक्ति के अभाव में किसी व्यक्ति को किसी पद पर नियुक्त करने का अधिकार निगम के लिए स्वतंत्र नहीं हैं ।

रिक्तियां उपलब्ध नहीं होने पर नियुक्त व्यक्तियों को सार्वजनिक प्राधिकरण की शक्तियों का घोर दुरुपयोग होगा । यदि व्यक्तियों को इस तरह नियुक्त किया जाता है और उन्हें वेतन दिया जाता है, तो यह केवल सार्वजनिक धन का दुरुपयोग होगा, जो पूरी तरह से अनधिकृत है । सामान्य तौर पर, भले ही अधिकरण को पता चलता है कि कोई व्यक्ति सगे संबंधी नीति के अधीन नियुक्त होने के लिए योग्य है, अधिकरण को केवल सुसंगत नियमों के आलोक में और पद की उपलब्धता के अधीन, विशिष्ट आवेदक के मामले पर विचार करने के लिए समुचित प्राधिकारी को या संबंधित अधिकारियों को एक अतिरिक्त पद सृजित और फिर ऐसे पद पर किसी व्यक्ति को नियुक्त करने का निदेश देने लिए स्वतंत्र नहीं है ।"

19. माननीय उच्चतम न्यायालय के पूर्वोक्त अनुपात को ध्यान में रखते हुए, याची का दावा, प्रत्यर्थी सं. 5 के संकल्प के अनुसार भले ही इसके अलावा पदोन्नति के लिए विचार करने की सिफारिश की गई हो अथवा नहीं तो यह विषयवस्तु नहीं है, जिसे चतुर्थ श्रेणी से तृतीय श्रेणी में पद बदलने के दावे के लिए वर्तमान रिट याचिका का आधार माना जाता है, पर केवल तभी विचार किया जा सकता है, जब कोई रिक्ति पद विद्यमान हो, अन्यथा नहीं और विशिष्ट रूप से इस तथ्य के आलोक में, मामले की परिस्थितियों के, जहां याची ने स्वयं 2013 में स्वेच्छा से नियुक्ति को स्वीकृत कर लिया है और तत्पश्चात् नियुक्ति ही प्रदान की जाएगी क्योंकि यह 1974 के हार्नेस नियमों में उत्तर प्रदेश में मृत्यु होने पर बहुत सामाजिक और विधायी उद्देश्य को पूरा करता है । उक्त संपरिवर्तन संभव नहीं होगा और वह भी तब जब रिट याचिका में याची का दावा पदोन्नति का दावा नहीं है, और न ही उसने 1 नवंबर, 2013 के नियुक्ति आदेश में कोई संशोधन करने की मांग की है ।

20. इस रिट याचिका में, प्रारम्भ में, प्रत्यर्थियों को नोटिस जारी किए गए थे और इसकी प्रवृत्ति के दौरान, प्रत्यर्थी संख्या 3, 4 व 5 द्वारा संबंधित शपथपत्र फाइल करने के बाद, याची ने इस न्यायालय के

समक्ष रोक आवेदन फाइल किया था, जिसमें दलील दी गई थी कि मुहरिर का एक पद रिक्त हो गया है और इसलिए रोक आवेदन फाइल करके याची ने प्रार्थना की है कि 7 मार्च, 2017 के सरकारी आदेश के अनुसार चयन समिति द्वारा पदोन्नति के लिए विचार किया जा सकता है । इस स्तर पर, यह न्यायालय यह इंगित करना उचित समझता है कि रोक आवेदन के साथ फाइल एक शपथपत्र, एक अभिवाक् या रिट याचिका में उठाए गए अभिवचनों का भाग नहीं होगा, इसलिए अंतरिम राहत आवेदन में अभिवाक् तथ्यों पर निर्णय लेते समय स्वतंत्र रूप से विचार नहीं किया जा सकता है यह रिट याचिका अपनी योग्यता के आधार पर और वह भी विशेष रूप से तब जब इसके विधिक निहितार्थ यह होंगे कि याची द्वारा प्रस्तुत रोक प्रार्थनापत्र न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा आदेश तारीख 3 दिसम्बर, 2019 से खारिज कर दिया गया था, जिस कारण से रोक प्रार्थनापत्र की अस्वीकृति का प्रभाव रखता है, जिसका समर्थन शपथपत्र के साथ किया गया था, वह केवल रोक प्रार्थनापत्र के समर्थन में शपथपत्र होगा तथा वह अधिकार नहीं है जिसे संशोधन के माध्यम से अभिलेख पर लाने का अनुरोध किया गया है और जिसका परिणामी प्रभाव रोक प्रार्थनापत्र की अस्वीकृति के साथ, शपथपत्र के तथ्यों को भी न्यायालय द्वारा विचार करने से इनकार कर दिया गया था तथा न्यायालय द्वारा इस तथ्य को भी छोड़ दिया गया था ।

21. जब याची द्वारा याचिका फाइल की गई तो ऐसी स्थिति का पता चला तथा एक अन्य प्रार्थनापत्र अंतरिम आदेश देने के लिए फाइल किया, जो 2020 का आवेदन सं. 2682 पुनः समर्थन में एक शपथपत्र प्रस्तुत किया गया, जिस पर भी इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा विचार किया गया था और जिसे 25 सितंबर, 2020 को खारिज कर दिया गया था, जिस पर भी वही सादृश्य और विधिक प्रभाव होगा ।

22. इसलिए, उपर्युक्त कारणों से, दूसरे रोक प्रार्थनापत्र के समर्थन में फाइल शपथपत्र में दिए गए अभिवचनों के सम्बन्ध में यह समझा जाएगा कि उन्हें तारीख 25 सितम्बर, 2020 को अस्वीकृति के साथ समाप्त कर दिया गया है तथा ऐसा नहीं होगा कि चतुर्थ श्रेणी पद से तृतीय श्रेणी पद पर नियुक्ति को बदलने के मामले को साबित करने के

लिए दलील के रूप में माना गया जैसा कि रिट याचिका के अभिलेख में था ।

23. माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों के आलोक में, जो पहले ही ऊपर निर्दिष्ट किए जा चुके हैं और जिनके सुसंगत भाग पहले ही ऊपर उद्धृत किए जा चुके हैं, यदि प्रत्यर्थी सं. 3 अर्थात् जिला मजिस्ट्रेट, नैनीताल द्वारा फाइल किए गए प्रति-शपथपत्र विचार में लिए गए हैं, वस्तुत: जिला मजिस्ट्रेट, नैनीताल विशेष रूप से इस मामले के तथ्यों को सामने लेकर आए थे कि वर्ष 2013 में, जब याची की सदस्यता पर अनुकंपा नियुक्ति के लिए विचार किया जाना था, उस समय, केवल एक रिक्त पद उपलब्ध था और वह भी एक चतुर्थ श्रेणी के पद का, जो याची को दिया गया था और याची ने स्वेच्छा से और बहुत स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है और इसलिए माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के आलोक में, अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति केवल एक उपलब्ध रिक्त पद पर की जा सकती थी, जो याची के मामले में किया गया था और वह भी विशिष्ट रूप से जब उसने कोई आपत्ति उठाए बिना अपना आवेदन स्वीकार कर लिया था, तो वह अब ऐसे विलंब प्रक्रम पर विपरीत दावा नहीं कर सकता है ।

24. **हिमाचल सड़क परिवहन निगम** (उपर्युक्त) के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित और **हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड** (उपर्युक्त) के मामलों में दिए गए निर्णय के प्रभाव पर विचार करते हुए छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय को भी उस विवाद से निपटने को अवसर मिला जो **विमला दीवान और अन्य** बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य**[1] में प्रकाशित मामलों में प्रकृति में लगभग समान था । जिसमें उक्त निर्णय के पैरा 9 और 10 में पूर्वोक्त सिद्धांतों को दोहराते हुए अंततः न्यायालय ने उक्त निर्णय के अपने पैरा 16 में अभिनिर्धारित किया है कि जिस पद पर नियुक्ति दिए जाने का दावा किया गया है तो उक्त पद पर नियुक्ति न होने के कारण या अनुकंपा के आधार पर नहीं किया जा सकता है और ऐसे पद को भरने के लिए इस तरह परमादेश

[1] 2016 (1) एम. पी. जे. आर. 33.

आदेश जारी नहीं किया जा सकता है जिसके लिए कोई रिक्ति पद विद्यमान नहीं है :–

> "16. इस प्रकार, उपरोक्त निर्णयों के आधार पर, यह स्पष्ट है कि अनुकंपा नियुक्ति के लिए पदों की उपलब्धता अनिवार्य है और रिक्त पद की अनुपस्थिति में, कोई परमादेश जारी नहीं किया जा सकता है । वर्तमान मामले में, स्वीकृत रूप से, अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए अपेक्षित पद तीन वर्ष की अवधि के भीतर रिक्त नहीं हुआ है और लागू नीति केवल नियमित रिक्त पद के विरुद्ध नियुक्ति का प्रावधान करती है, इसलिए, उस आधार पर याची सं. 1 के आवेदन को सक्षम प्राधिकारी द्वारा उचित रूप से खारिज कर दिया गया है ।"

25. मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय (जबलपुर पीठ) द्वारा दिए गए एक खंड पीठ के निर्णय में जैसा कि **पुष्पेन्द्र सिंह बघेल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में खण्ड पीठ ने अनुकंपा नियुक्ति के दावे पर विचार करने के प्रयोजनों के लिए वही सिद्धांत अधिकथित किए हैं और जिन निर्धारण बिंदुओं पर खण्ड पीठ द्वारा विचार किया गया था कि क्या अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति की जा सकती है । अनुकंपा नियुक्ति एक आवेदक की अपेक्षा के आधार पर की जाएगी जब उसने पहले ही नियुक्ति को स्वीकार कर लिया हो और उक्त निर्णय में **उमेश कुमार नागपाल** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाले मामले में अधिकथित सिद्धातों पर विचार किया गया है । खण्ड पीठ के उक्त निर्णय का पैरा 1 जिसमें इस प्रकार उद्धृत किया गया है, उन निष्कर्षों को निर्दिष्ट करता है जिसका माननीय उच्चतम न्यायालय के अधिपत्य द्वारा मत व्यक्त किया गया है जिसमें उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है :–

> यह प्रश्न उन विचारों से संबंधित है जो अनुकंपा के आधार पर सार्वजनिक सेवाओं में नियुक्ति देते समय दिए जाने वाले उपबंधों से संबंधित है । एक नियम के रूप में, लोक सेवाओं में

---

[1] 2006 (1) एम. पी. जे. आर. 239 में प्रकाशित.

[2] (1994) 4 एस. सी. सी. 138 में प्रकाशित.

नियुक्तियां आवेदनों और मैरिट के खुले आमंत्रण के आधार पर सख्ती से की जानी चाहिए । नियुक्ति का कोई अन्य तरीका या कोई अन्य विचार अनुज्ञेय नहीं है न तो सरकारों और न ही सार्वजनिक प्राधिकरणों को किसी अन्य प्रक्रिया का पालन करने या पद के लिए नियमों द्वारा निर्धारित योग्यताओं में शिथिलता देने की स्वतंत्रता है । तथापि, इस सामान्य नियम के लिए, जिसका हर मामले में सख्ती से पालन किया जाना है, न्याय के हित में और कुछ आकस्मिकताओं को पूरा करने के लिए कुछ अपवाद बनाए गए हैं । ऐसा ही एक अपवाद एक कर्मचारी के आश्रितों के पक्ष में है जिसकी सेवा के दौरान मृत्यु हो जाती है और अपने कुटुंब को निर्धनता में और आजीविका के किसी भी साधन के बिना छोड़ कर स्वर्ग सिधार जाते हैं । ऐसे मामलों में, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि जब तक आजीविका का कोई स्रोत प्रदान नहीं किया जाता है, तब तक कुटुंब की अजीविका पूरा करने में समर्थ नहीं होगा, नियमों में मृतक के आश्रितों में से एक को लाभकारी नियोजन प्रदान करने का उपबंध बनाया गया हैं जो इस प्रकार के नियम अनुकंपापूर्ण नियोजन देने के लिए पात्र हो सकता है । इस प्रकार कुटुंब को आचानक आए संकट से निपटने में सक्षम बनाना है । इसका उद्देश्य ऐसे कुटुंब के किसी सदस्य को मृतक द्वारा धारण किए गए पद से बहुत कमतर पद देना नहीं है । इसके अतिरिक्त, किसी कर्मचारी की मृत्यु मात्र से उसके कुटुंब को आजीविका के ऐसे स्रोत का अधिकार नहीं मिल जाता है । सरकार या संबंधित सार्वजनिक प्राधिकरण को मृतक के कुटुंब की वित्तीय स्थिति की जांच करनी होती है, प्रयोजन के लिए, कुटुंब उस संकट को पूरा करने में समर्थ नहीं होगा कि कुटुंब के योग्य सदस्य के रूप में नौकरी की पेशकश की जानी है । तृतीय और चतुर्थ श्रेणी के पद गैर-मैनुअल और मैनुअल श्रेणियों में सबसे निचले पद हैं और इसलिए अकेले उन्हें अनुकंपा के आधार पर पेश किया जा सकता है, जिसका उद्देश्य कुटुंब को वित्तीय अभाव से राहत देना और आपातकाल से उबरने में मदद करना है । नियम को अपवाद

बनाकर ऐसे सबसे निचले पदों पर नियोजन का प्रावधान उचित और वैध है क्योंकि यह भेदभावपूर्ण नहीं है । ऐसे पदों पर मृतक कर्मचारी के ऐसे आश्रितो के साथ दिए गए अनुकूल व्यवहार का प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य अर्थात् निर्धनता के खिलाफ राहत, के साथ एक तर्कसंगत संबंध है । इस उद्देश्य के लिए सार्वजनिक प्राधिकरणों द्वारा कोई अन्य पद दिए जाने की अपेक्षा या आवश्यकता नहीं है । इस संबंध में यह याद रखना चाहिए कि मृतक के निराश्रित कुटुंब के विपरीत, लाखों अन्य पद दिए जाने की अपेक्षा या आवश्यकता नहीं है । इस संबंध में यह याद रखना चाहिए कि मृतक के निराश्रित कुटुंब के विपरीत, लाखों अन्य कुटुंब हैं जो अन्य जो समान रूप से, यदि अधिक नहीं तो निराश्रित है ।

इस विधि की स्थिति पर ध्यान दिए बिना, कुछ सरकारें और सार्वजनिक प्राधिकरण कभी-कभी मृतक के कुटुंब की आर्थिक स्थिति के बावजूद और कभी-कभी तृतीय और चतुर्थ श्रेणी से ऊपर के पदों पर भी अनुकंपा नियोजन की प्रस्ताव कर रहे हैं, जो विधिक रूप से अस्वीकार्य है ..... ।

वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय ने ठीक ही इंगित किया है कि राज्य सरकार के निदेश द्वितीय श्रेणी के पदों पर अनुकंपा के आधार पर नियोजन को उचित नहीं ठहराते हैं । तथापि, निर्णय से यह प्रतीत होता है कि राज्य सरकार ने कम से कम एक अपवाद किया था और विशिष्ट आधार पर द्वितीय श्रेणी के पद पर अनुकंपा नियोजन प्रदान किया था कि संबंधित व्यक्ति कि तकनीकी योग्यताएं जैसे कि एम.बी.बी.एस., बी.ई, बी.टेक आदि । इस प्रकार का अपवाद, जैसा कि ऊपर बताया गया है, अवैध है, क्योंकि यह सामान्य नियम को अपवाद बनाने के उद्देश्य के विपरीत है । अनुकंपा नियोजन को सही ठहराने वाला एकमात्र आधार मृतक के कुटुंब की दयनीय स्थिति है न तो उसके आश्रित की योग्यता और न ही वह पद जो उसके पास था, प्रासंगिक है । यही कारण है कि हम आक्षेपित निर्णय में उच्च न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों को समझने में असमर्थ हैं –

> हमारा यह मत है कि असाधारण परिस्थितियों में असाधारण उपायों की आवश्यकता होती है और यह सरकार के लिए सम्भव है कि वह वास्तविक कठिन मामलों में निदेशों के अक्षर और भावना से भटक जाए और उन मामलों में अनुतोष प्रदान करे जहां यह आवश्यक है । विधि की दृष्टि से यह मानना कि सरकार केवल तृतीय और चतुर्थ श्रेणी के पदों के लिए नियुक्ति प्रदान करने की नीति से सूक्ष्मता से भी विचलित नहीं होगा । यह अपेक्षा करना हास्यास्पद होगा कि एक मृतक प्रथम श्रेणी के अधिकारी के आश्रित को प्रथम श्रेणी या चतुर्थ श्रेणी के पद पर नियुक्ति का प्रस्ताव दिया जाना चाहिए । जबकि हम यह सरकार पर छोड़ते हैं कि वह अनुकंपा के आधार पर प्रथम या द्वितीय श्रेणी के पदों पर नियुक्तियां करने में विवेकपूर्ण तरीके से अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करे, फिर भी सावधानी बरतने की आवश्यकता है । यह ध्यान देने योग्य है कि इस प्रकार की नियुक्तियों का आदेश दुर्लभतम मामलों में और बहुत ही असाधारण परिस्थितियों में दिया जाना चाहिए । वस्तुतः हम अनुशंसा करेगें कि सरकार को ऐसी नियुक्तियों के लिए एक नीति बनानी चाहिए ।

उपर्युक्त चर्चाओं से यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय द्वारा धारण किए गए पदों के समकक्ष पदों पर अनुकंपापूर्वक नियुक्ति करने की राज्य सरकार की नीति का समर्थन करता है कि मृतक कर्मचारी और तृतीय श्रेणी और चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी से ऊपर है। यह पुनरावृत्ति करना आवश्यक है कि ये टिप्पणियां विधि के विपरीत हैं । यदि मृतक कर्मचारी के आश्रित को पद के प्रस्ताव को प्रतिग्रहण करना उसकी गरिमा से कम लगता है तो वह प्रस्ताव को अस्वीकार करने के लिए स्वतंत्र है । इस पद के प्रस्ताव उनकी स्थिति को पूरा करने के लिए नहीं की गई है, बल्कि कुटुंब की आर्थिक संकट कम करने के लिए है ।

26. इस प्रकार, तथ्यों के समग्र रूप से विचार करने पर, मध्य

प्रदेश उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ ने जैसा कि मध्य प्रदेश राज्य में लागू अनुकंपा नियुक्ति के नियमों के नियम 7 के संदर्भ में उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में पूर्व में बताया गया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अनुकंपा नियुक्ति के अनुदान के लिए नियमों के अधीन परिकल्पित नुियक्ति पर विचार करने के लिए तत्काल और आकस्मिक आवश्यकता को पूरा करने के लिए उद्देश्यों के लिए की गई है कि किसी विशेष सामाजिक उद्देश्य को पूरा करने के लिए नियमों के अधीन निर्दिष्ट की गई अनिवार्यता को इतना लचीला नहीं बनाया जा सकता है कि दावेदार को अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए उसकी अपेक्षाओं को व्यापक मापदंडो की परिधि से परे भी बढ़ाया जा सके जो माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पहले ही उल्लिखित निर्णयों में निर्धारित किए गए हैं और विशेष रूप से यदि उक्त सिद्धांतों को विद्मान मामले की परिस्थितियों में लागू किया गया है, जहां अनुकंपा नियुक्ति देने का उद्देश्य 1 जनवरी, 2013 के आदेश द्वारा याची को नियुक्ति प्रदान करके पूरा किया गया था, जिसे याची की अपेक्षा के अनुसार बदला नहीं जा सकता है और वह भी नियुक्ति की स्वीकृति के 8 वर्षों के बाद अत्यधिक विलम्ब से है । इसलिए, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ द्वारा निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला गया है, यदि उन सिद्धांतों को लागू किया जाता है, तो उस स्थिति में, मौजूदा मामले में याची द्वारा मांगी गई प्रार्थना उपलब्ध नहीं होगी ।

"निष्कर्ष"

हमारा विनिश्चय यह नहीं है कि तीसरे प्रत्यर्थी को किसी भी उपचार से वंचित किया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय ने बार-बार कहा है कि अभिरक्षा में मौत के मामले में कुटुंब को प्रतिकर दिया जाना चाहिए । यह आश्चर्य की बात है कि राज्य सरकार ने तीसरे प्रत्यर्थी को इस प्रकार का प्रतिकर देने का विकल्प नहीं चुना है, भले ही उसने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया हो कि तीसरे प्रत्यर्थी के पति की मृत्यु विशेष पुलिस प्रतिष्ठान की अभिरक्षा में रहते हुए असंदिग्ध परिस्थितियों में हुई थी । यह उचित होगा यदि राज्य सरकार ऐसे मामलों में मानदंड के अनुसार प्रतिकर देकर तीसरे प्रत्यर्थी और उसके कुटुंब के प्रति सहानुभूति

और करूणा दिखाती है और एच. आई. श्रेणी के पद पर नियुक्ति भी प्रदान करती है । जैसा कि आरम्भ में कहा गया है, अत्यधिक अनिच्छा के साथ हम मामले में हस्तक्षेप कर रहे हैं । लेकिन, इस तरह का हस्तक्षेप आत्यन्तिक रूप से आवश्यक है । यदि अनुकंपा नियुक्तियों से संबंधित सिद्धांतों का उल्लंघन करने वाली नियुक्ति को अबाधित छोड़ दिया जाता है, तो यह इस प्रकार की अवैध नियुक्तियों को जन्म देती है ।

उपरोक्त कारणों से हम इस याचिका को निम्नानुसार मंजूर करते हैं कि :–

(i) तृतीय प्रत्यर्थी को वाणिज्यिक कर अधिकारी (द्वितीय श्रेणी) के रूप में नियुक्त करने का तारीख 23 अगस्त, 2004 का आदेश अभिखंडित किया जाता है ।

(ii) तथापि, हम राज्य सरकार से सिफारिश करते हैं कि हिरासत में अन्य मृत्यु के मामलों में दिए गए उचित प्रतिकर की पेशकश तृतीय प्रत्यर्थी को की जानी चाहिए ।

(iii) नियुक्ति के आदेश को रद्द करना, राज्य सरकार द्वारा स्वर्गीय आर. के. जैन के कुटुंब को दी जाने वाली ऐसी रियायत और सुविधाओं के मार्ग में नहीं आएगा, जो कुटुंब के एक सदस्य को एच.आई. श्रेणी के पद पर नियुक्ति के प्रस्ताव सहित विधि के अधीन अनुज्ञेय हैं ।

(iv) पक्षकार अपने-अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे । याची द्वारा जमा की गई धनराशि उसे वापस की जाए ।

27. प्रत्यर्थी नं. 3 ने अपने प्रति-शपथपत्र के पैरा 9 में उक्त स्थिति को दोहराया है कि याची द्वारा अपनी सहमति से और बिना किसी आक्षेप के उक्त पद को ग्रहण करने से यह समझा जाएगा कि याची द्वारा पद के परिवर्तन की प्रार्थना को त्याग दिया गया है, इसका कारण यह है कि सेवाकाल के दौरान मृत्यु नियम, 2003 सेवाकाल के दौरान के नियम या मृत्यु नियम, 1974 वर्ष 2003 के डाईंग इन हार्नेस नियम या डाईंग इन हार्नेस नियम, 1974 पहले के नियम, किसी भी यह अनुमति नहीं देते हैं कि एक उम्मीदवार जिसकी पात्रता पर अनुकंपा

के आधार पर नियुक्ति के लिए विचार किया गया था, जब उसे नियोक्ता द्वारा नियुक्ति का प्रस्ताव किया गया था, तो कुटुंब की कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए किया गया था, क्योंकि इसका उद्देश्य एक विशेष कल्याणकारी उद्देश्य को पूरा करना था और यही कारण है कि नियमों ने स्वयं कभी भी किसी कर्मचारी की नियुक्ति को बदलने के लिए कोई गुंजाइश या प्रावधान नहीं किया है जहां कर्मचारी ने किसी भी आपत्ति के बिना पहले से ही पद को स्वीकार कर लिया हो ।

28. इसी प्रकार, प्रत्यर्थी सं. 3 ने यह दलील दी है कि प्रति-शपथपत्र के पैरा 10 में नगर पंचायत, लाल कुआं जिला नैनीताल में क्लर्क का ऐसा कोई रिक्त पद नहीं है, जो 2013 के समय उपलब्ध था, जब नियुक्ति के लिए याची के दावे पर अनुकंपा के आधार पर विचार किया जा रहा था और रिक्त पद की उपलब्धता की अनुपस्थिति में, याची को उस पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता था जैसा कि अब उसके द्वारा दावा किया जा रहा है ।

29. प्रत्यर्थी सं. 3 ने आगे दलील दी है कि यदि याची की नियुक्ति के बाद कोई नया पद सृजित होता है, जो कि तृतीय श्रेणी के पद की बढ़ोतरी होती है तो स्वयं नगर पंचायत के कैडर विवरण के अनुसार जो स्वयं भर्ती का स्त्रोत है और तृतीय श्रेणी कर्मचारी का उक्त पद, केवल सीधी भर्ती के माध्यम से या पदोन्नति के माध्यम से भरने के लिए ही उपलब्ध है, किन्तु इसे याची की नियुक्ति को बदलकर समायोजित या उपलब्ध नहीं कराया जा सकता है और वह भी विलंबित चरण में यानी उसकी प्रारंभिक नियुक्ति के लगभग 7 वर्ष बाद जो 2013 में की गई थी ।

30. जहां तक प्रत्यर्थी द्वारा फाइल प्रति-शपथपत्र की सं. 4 और 5 का संबंध है, उसने अपने प्रति-शपथपत्र के पैरा 5 और 11 में विशेष रूप से यह कहा है कि याची द्वारा फाइल की गई याचिका, कि याची को तृतीय श्रेणी कर्मचारी के रूप में समायोजित करने का आश्वासन दिया गया था, आत्यन्तिक रूप से मान्य नहीं है, क्योंकि ऐसा कोई आश्वासन याची को कभी दिया ही नहीं गया था और न ही यह दिखाने के लिए अभिलेख पर ऐसा कोई दस्तावेज है कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा याची को कभी कोई लिखित आश्वासन दिया गया था और उन्होंने भी विशेष रूप

से याची के दावे को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया था कि चूंकि याची ने कोई आपत्ति उठाए बिना स्वेच्छा से प्रस्तावित पद स्वीकार कर लिया था, वह इस विलंबित प्रथम पर संवर्ग में परिवर्तन का दावा नहीं कर सकता है, जो विधायी मंशा और नियुक्ति के उपयोग में सेवा के दौरान मृत्यु नियमों के उपबंधों के विपरीत है और वह भी विशेष रूप से तब जब प्रत्यर्थी सं. 4 और 5 द्वारा एक समान रुख भी अपनाया गया है कि लिपिक का कोई पद नहीं था जो 2013 में प्रासंगिक समय पर रिक्त था ।

31. याची की दलील नियुक्ति के परिवर्तन से संबंधित है । प्रत्यर्थियों द्वारा अपने प्रति-शपथपत्र में पद की अनुपलब्धता के मुद्दे को विशिष्ट रूप से इनकार किया है कि ऐसा कोई आश्वासन कभी भी दिया गया था, और चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के पद पर याची के स्वैच्छिक रूप से नियुक्ति स्थापित तथ्य है, जो आम तौर पर प्रत्यर्थी सं. 3, 4 और 5 के संबंधित प्रति हलफनामे में, अनुरोध किया गया था, चूंकि याची द्वारा इसका खंडन नहीं किया गया था क्योंकि याची द्वारा कोई प्रत्युत्तर हलफनामा फाइल नहीं किया गया था, जब पहली बार तारीख 3 दिसंबर, 2019 को समय दिया गया था, जब तक की मामले की सुनवाई तारीख 29 जुलाई, 2021 को की गई थी, यह माना जाएगा कि प्रत्यर्थी द्वारा अपने प्रति-शपथपत्र में लिए गए रुख से इनकार नहीं किया गया था और यह माना जाएगा कि यह तथ्य की स्वीकृति होगी, जो अन्यथा याची द्वारा रिट याचिका में कोई अभिवचन उद्भूत या इसके विपरीत अनुरोध नहीं किया गया था । उस स्थिति में, रिट याचिका में कोई गुणागुण नहीं है और यह खारिज किए जाने योग्य है ।

32. तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है । तथापि, खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

महीं./क.

चंदन मंकेर

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य

(2012 की रिट याचिका सं. 1241)

तारीख 5 जनवरी, 2022

न्यायमूर्ति पार्थ प्रतीम साहू

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित छत्तीसगढ़ अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग (सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र का विनियमन), 2013 के नियम II] – रिट – अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति संवर्ग के लिए आरक्षित लोक सेवक पद पर नियुक्ति – 27 वर्षों की सेवा के पश्चात् यह पाया जाना कि पदधारी ने फर्जी जाति प्रमाणपत्र के आधार पर कपटपूर्वक नियुक्ति प्राप्त की थी – नियुक्ति रद्द होना – सेवानिवृत्ति लाभों की मांग करना – नामंजूर होना – यदि कोई लोक सेवक फर्जी जाति प्रमाणपत्र के आधार पर अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति संवर्ग के लिए आरक्षित पद पर कपटपूर्वक नियुक्ति प्राप्त कर लेता है तो उसकी नियुक्ति का आधार ही विधिविरुद्ध हो जाता है, इसलिए, उसे सेवानिवृत्ति के पश्चात् मिलने वाले लाभों को भी प्रदान नहीं किया जा सकता है क्योंकि सेवानिवृत्ति लाभों को वही लोक सेवक प्राप्त कर सकता है जिसकी नियुक्ति विधि में वैध और न्यायोचित होती है ।

वर्तमान मामले में, याची के पिता वर्ष 1969 में महाराष्ट्र राज्य से तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य में चले गए, महानदी जलाशय परियोजना प्रभाग, धमतरी में दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी के रूप में नियुक्त हुए और वर्ष 1972 में याची के पिता की सेवा 'टाइपिस्ट' के पद पर नियमित हो गई । याची का जन्म तारीख 6 अगस्त, 1983 को हुआ, उसका जन्म सांख्यिकी विभाग में तारीख 3 दिसंबर, 2009 को पंजीकृत हुआ, जैसा कि उपाबंध पी-3 से प्रदर्शित होता है । याची ने कक्षा 8वीं तक शासकीय स्कूल रुद्री, जिला धमतरी में पढ़ाई की ; कक्षा 9वीं से

कक्षा 12वीं तक मनोनाइट हाई स्कूल धमतरी में पढ़ाई की । याची ने शासकीय विज्ञान महाविद्यालय, रायपुर (पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर से संबद्ध) से स्नातक की डिग्री और एल.एल.बी. की डिग्री दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर (पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर से संबद्ध) से किया । वर्ष 2008 में राज्य सरकार ने 'सहायक जिला लोक अभियोजन अधिकारी' के पद पर नियुक्ति हेतु आवेदन आमंत्रित करते हुए विज्ञापन प्रकाशित किया था । तारीख 3 अगस्त, 2011 के आदेश के द्वारा याची को 'सहायक जिला लोक अभियोजन अधिकारी' के पद पर नियुक्त किया गया था । नियुक्ति आदेश जारी करने के पूर्व तारीख 17 अगस्त, 2021 के आदेश के अधीन जिन उम्मीदवारों ने अपनी सामाजिक जाति की स्थिति का लाभ प्राप्त करने हेतु आवेदन पत्र प्रस्तुत किया था, उन्हें संबंधित विभाग से अपने जाति प्रमाणपत्र का सत्यापन कराने के निदेश दिए गए थे । याची ने सत्यापन के लिए प्रत्यर्थी सं. 2 के पास सुसंगत दस्तावेज प्रस्तुत किए, जिसके आधार पर जांच की गई और जांच के पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 2 इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि याची आरक्षण का लाभ पाने का हकदार नहीं है । सतर्कता से हम आदेश को चुनौती देते हुए याची आरक्षण का लाभ पाने का हकदार नहीं है । सतर्कता से सेरम के आदेश को चुनौती देते हुए याची ने 2009 की रिट याचिका डब्ल्यू. पी. एस. सं. 7353 को फाइल किया । न्यायालय द्वारा रिट याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – याची के विद्वान् काउंसेल के निवेदनों का मूल्यांकन करने के लिए, मामले के निर्विवाद तथ्यों पर विचार करना उचित होगा । याची के मामले के अनुसार, उसके पिता धमतरी आए, जोकि तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य का भाग था ; महानदी जलाशय परियोजना बांध प्रभाग, धमतरी, जिला रायपुर में दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी के रूप में सेवा में सम्मिलित हुए और बाद में वर्ष 1972 में 'टाइपिस्ट' के पद पर नियमित हो गए । याची के पिता को कभी भी किसी सेवा शर्त के अधीन धमतरी में प्रवास करने और अपनी सेवा में सम्मिलित होने के लिए विवश नहीं किया गया था । वास्तव में, यह धमतरी के उक्त विभाग में उनकी पहली नौकरी थी । याची के पूर्वज अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य की भौगोलिक सीमा के स्थाई निवासी नहीं हैं, बल्कि वे कोरी गांव, जिला

वर्धा (महाराष्ट्र) के निवासी थे । अधिसूचना में विनिर्दिष्ट जातियों और विनिर्दिष्ट राज्यों में उनके मूल संबंध में राष्ट्रपति की अधिसूचना वर्ष 1950 में जारी की गई है । सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र/जाति प्रमाणपत्र के आधार पर आरक्षण का लाभ उठाने के उद्देश्य से किसी भी व्यक्ति की आवासीय स्थिति को वर्ष 1950 में राष्ट्रपति की अधिसूचना जारी करने की तारीख के अनुसार माना जाएगा । राष्ट्रपति की अधिसूचना जारी होने के पश्चात्, यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य राज्य में प्रवास करता है, जहां प्रवासी की जाति भी अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग की श्रेणी में दिखाई जाती है, जैसा भी मामला हो, तो प्रवासी को प्रवासित राज्य में आरक्षण का लाभ नहीं मिल सकता है प्रवासी अपने मूल राज्य में आरक्षण के लाभ के लिए हकदार होगा । भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के प्रमाणपत्र जारी करने के संबंध में तारीख 22 मार्च, 1977 को स्पष्टीकरण अधिसूचना (उपबंध आर–2) जारी की । अधिसूचना तारीख 22 मार्च, 1977 का सुसंगत भाग वर्तमान संदर्भ के लिए उद्धृत है – "..... इस प्रकार किसी विशेष व्यक्ति का किसी विशेष स्थान में निवास विशेष महत्व रखता है । इस निवास को शब्द के शाब्दिक या साधारण अर्थ में नहीं समझा जाना चाहिए । दूसरी ओर, यह उस स्थान के संबंध में उसकी जाति/जनजाति को निर्धारित करने वाले राष्ट्रपति के आदेश की अधिसूचना की तिथि पर किसी व्यक्ति के स्थाई निवास को प्रदर्शित करता है । इस प्रकार कोई व्यक्ति जो अपने मामले में लागू राष्ट्रपति के आदेश की अधिसूचना के समय अस्थाई रूप से अपने स्थाई निवास स्थान से दूर है, उदाहरण के लिए, जीविकोपार्जन या शिक्षा प्राप्त करने आदि के लिए, उसे भी अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के रूप में माना जा सकता है, जैसा भी मामला हो, यदि उसकी जाति/जनजाति उसके राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में उस आदेश में निर्दिष्ट की गई है । लेकिन उसे अपने अस्थाई निवास स्थान के संबंध में ऐसा नहीं माना जा सकता है, इस तथ्य के बावजूद कि राष्ट्रपति के किसी भी आदेश में उस क्षेत्र के संबंध में उसकी जाति/जनजाति का नाम निर्धारित किया गया है । किसी व्यक्ति के स्थाई निवास और उसकी

जाति/जनजाति जिससे वह संबंधित होने का दावा करता है, की सत्यता सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार ने ऐसे प्रमाणपत्र जारी करने के लिए विहित प्रारूप में विशेष उपबंध किया है । पात्र व्यक्तियों को प्रमाणपत्र जारी किए जाएं, इसके लिए यह आवश्यक है कि ऐसे प्रमाणपत्र जारी करने से पहले मुख्य रूप से राजस्व अभिलेखों पर आधारित उचित सत्यापन किया जाए तथा यदि आवश्यक हो तो विश्वसनीय जांच के माध्यम से सत्यापन किया जाए । ..... इस प्रकार एक जिले का राजस्व प्राधिकारी दूसरे जिले के व्यक्तियों के संबंध में ऐसा प्रमाणपत्र जारी करने के लिए सक्षम नहीं होगा न ही एक राज्य/संघ शासित प्रदेश का ऐसा प्राधिकारी ऐसे व्यक्तियों के संबंध में ऐसे प्रमाणपत्र जारी कर सकता है जिनका स्थाई निवास स्थान किसी विशेष राष्ट्रपति आदेश की अधिसूचना के समय किसी अन्य राज्य/संघ शासित प्रदेश में रहा हो । सुसंगत राष्ट्रपति आदेश की अधिसूचना की तारीख के पश्चात् जन्में ऐसे व्यक्तियों के मामले में, अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का दर्जा प्राप्त करने के प्रयोजन के लिए निवास स्थान, राष्ट्रपति आदेश की अधिसूचना के समय उनके माता-पिता का स्थाई निवास स्थान होगा, जिसके अधीन वे ऐसी जाति/जनजाति से संबंधित होने का दावा करते हैं । ..... असत्य प्रमाणपत्र जारी होने पर रोक लगाने के लिए सत्यापन का प्रश्न और भी महत्वपूर्ण हो जाता है....." भारत सरकार ने तारीख 22 फरवरी, 1985 को एक स्पष्टीकरण अधिसूचना जारी की जिनका सुसंगत भाग इस प्रकार है – "यह भी स्पष्ट किया जाता है कि अनुसूचित जाति/जनजाति का व्यक्ति जो शिक्षा, रोजगार आदि की तलाश के लिए अपने मूल राज्य से किसी अन्य राज्य में प्रवास कर गया है, उसे अपने मूल राज्य का अनुसूचित जाति/जनजाति माना जाएगा तथा वह अपने मूल राज्य से लाभ प्राप्त करने का हकदार होगा, न कि उस राज्य से जहां वह प्रवास कर गया है । यह पत्र इस मंत्रालय के तारीख 18 नवंबर, 1982 के समसंख्यक पूर्ववर्ती पत्र का स्थान प्रतिस्थापित करता है ।" छत्तीसगढ़ सरकार ने भी वर्ष 2003 और 2004 में परिपत्र जारी किए थे । तारीख 21 जुलाई, 2003 के जारी परिपत्र में 'प्रवासी' और 'अस्वैच्छिक प्रवासी' शब्दों को परिभाषित

किया गया है । तारीख 21 जुलाई, 2003 को जारी परिपत्र का उद्देश्य, जैसा कि प्रतीत होता है, आवेदकों को आवेदनपत्र के साथ संपूर्ण दस्तावेज संलग्न करने में कुछ छूट देने और जाति प्रमाणपत्र प्रदान करने के लिए आवेदन पर विचार करने और सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र जारी करने के तरीके के बारे में दिशानिर्देश तय किए गए हैं । परिपत्र तारीख 21 जुलाई, 2003 के खण्ड (5) में यह जांच करने की बात कही गई है कि क्या आवेदक के पूर्वज वर्ष 1950 के पूर्व से छत्तीसगढ़ राज्य में निवास कर रहे हैं या वे किसी अन्य राज्य से आकर वर्ष 1950 के बाद छत्तीसगढ़ राज्य में बस गए हैं । परिपत्र तारीख 6 जुलाई, 2004 में आरक्षण का लाभ मध्य प्रदेश राज्य के पुनर्गठन पर कैडर के विभाजन के आधार पर 'अस्वैच्छिक प्रवासियों' अर्थात् सरकारी कर्मचारियों या नगर निगम जैसे अन्य विभागों के कर्मचारियों को दिया गया है । भारत सरकार और छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा जारी किए गए बाद के परिपत्रों के प्रकाश में, याची के पिता का मामला 'अस्वैच्छिक प्रवासी' की परिधि में नहीं आता है । इसलिए, याची के विद्वान् काउंसेल का यह निवेदन है कि चूंकि याची के पिता वर्ष 1969 से अर्थात् मध्य प्रदेश राज्य के पुनर्गठन से पहले धमतरी में कार्यरत थे, याची 'अस्वैच्छिक प्रवासी' के लाभों के लिए हकदार है, यह कायम रखे जाने योग्य नहीं है । याची द्वारा प्रस्तुत विवरण के आधार पर जांच करते समय, तारीख 26 जुलाई, 2011 को ग्राम कोरी, तहसील समुद्रपुर, जिला वर्धा (महाराष्ट्र) में एक बैठक (पी.के.सी.के) बुलाई गई, जिसमें ग्रामीण उपस्थित हुए, जिनसे याची के पिता और उनके पूर्वजों के संबंध में पूछताछ की गई । तारीख 2 अगस्त, 2011 की जांच रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है कि राष्ट्रपति की अधिसूचना तारीख 10 अक्तूबर, 1950 के जारी होने से पूर्व, याची के पिता ग्राम कोरी, जिला वर्धा (महाराष्ट्र) के निवासी थे, न कि मध्य प्रदेश या छत्तीसगढ़ राज्य के भौगोलिक सीमा के किसी भाग के निवासी थे । याची के पिता वर्ष 1968 में ही धमतरी आए थे । सतर्कता रिपोर्ट में याची का वंश वृक्ष सम्मिलित था, जिस पर याची ने कोई विवाद नहीं किया । जहां तक कि याची को विद्वान् काउंसेल द्वारा वर्ष 2007 की डब्ल्यू. पी. एस. संख्या 3338 तथा अन्य संबंधित मामलों में पारित

तारीख 19 अगस्त, 2010 के आदेश के आधार पर प्रस्तुत किए गए निवेदन का संबंध है, उस आदेश के आधार पर याची की रिट याचिका को स्वीकार कर लिया गया था, मामले को सतर्कता प्रकोष्ठ का गठन करके तथा याची के सुनवाई का अवसर देकर जाति प्रमाणपत्र के संबंध में नए सिरे से जांच करने के लिए वापस भेज दिया गया था । इस न्यायालय के समक्ष याची का यह पक्षकथन नहीं है कि जांच समुचित रूप से नहीं की गई, बल्कि याची का मामला केवल यह है कि चूंकि याची के पिता 'अस्वैच्छिक प्रवासी' की श्रेणी में आते हैं, इसलिए, याची आरक्षण के लाभों का हकदार है । तारीख 19 अगस्त, 2010 के आदेश के अनुसार, पिछली रिट याचिका को स्वीकार करने के बाद प्रत्यर्थी सं. 2 ने याची के संपूर्ण दावे पर पुनर्विचार किया तथा आक्षेपित आदेश द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि याची का सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र त्रुटिपूर्ण है । (पैरा 9, 10, 11 और 12)

माननीय उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, यदि वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार किया जाए, तो यह स्पष्ट है कि याची के पिता वर्ष 1968 में महाराष्ट्र से तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य में चले गए थे ; उन्हें दैनिक मजदूरी पर रोजागर मिला और बाद में उनकी सेवाएं नियमित कर दी गईं । इसलिए, याची के पिता को 'अस्वैच्छिक प्रवासी' नहीं कहा जा सकता । याची के पिता का मूल राज्य महाराष्ट्र राज्य है । माननीय उच्चतम न्यायालय और बॉम्बे उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ के उपरोक्त आदेश में, याची को प्रवासी राज्य अर्थात् छत्तीसगढ़ राज्य में आरक्षण का लाभ नहीं मिल सकता है । याची के विद्वान् काउंसेल का यह निवेदन है कि चूंकि याची के पिता तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य में कार्यरत थे ; मध्य प्रदेश राज्य के पुनर्गठन और छत्तीसगढ़ राज्य के गठन के पश्चात् ही याची के पिता छत्तीसगढ़ के क्षेत्र में आए, इसलिए याची आरक्षण के हकदार हैं, भी त्रुटिपूर्ण है । याची के पिता 1950 से पूर्व अर्थात् राष्ट्रपति के आदेश जारी होने की तारीख से पूर्ववर्ती मध्य प्रदेश राज्य के स्थाई निवासी नहीं थे । याची का पक्षकथन यह है कि याची के पिता वर्ष 1968 में महाराष्ट्र से पूर्ववर्ती मध्य प्रदेश राज्य में आए थे । इसलिए, याची को आरक्षण का लाभ राज्य सरकार/नगर निगम या अन्य वैधानिक निकायों के

कर्मचारियों की तरह नहीं दिया जा सकता है, क्योंकि उन्हें अनैच्छिक प्रवासी माना जाता है क्योंकि वे कैडर वितरण के आधार पर छत्तीसगढ़ राज्य में आए थे । इसलिए, इस न्यायालय की राय में, याचिका किसी भी सार से रहित होने के कारण खारिज किए जाने योग्य है । याची का पक्षकथन यह भी नहीं है कि याची जाति सत्यापन की कोई कार्रवाई करने से पूर्व लंबे समय तक सेवा में बने रहे, बल्कि यह ऐसा मामला है जहां चयन सूची में याची का नाम आने के तुरंत पश्चात्, याची और अन्य को समिति से अपने सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र को सत्यापित करने के लिए कहा गया और उसके तुरंत बाद यह रिपोर्ट दी गई कि याची वर्ष 2009 में ही प्रमाणपत्र के आधार पर आरक्षण के लाभ के लिए हकदार नहीं है । (पैरा 17, 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2021]	2021 एस. सी. ऑनलाइन 616 : **पंकज सिंह** बनाम **झारखंड राज्य ;**	5,20
[2017]	(2017) 8 एस. सी. सी. 670 : **भारतीय खाद्य निगम** बनाम **जगदीश बलराम बहिरा और अन्य ;**	6,13,16
[2014]	(2014) 4 एस. सी. सी. 434 : **आर. उन्नीकृष्णन् और एक अन्य** बनाम **वी. के. महीनदेवन और अन्य ;**	16
[2012]	(2012) 8 एस. सी. सी. 430 : **कविता सोलंकी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य ;**	16
[2010]	2010 (2) एम. एच. एल. जे. 904 : **कुमारी श्वेता शांतालाल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य ;**	**1**5
[2009]	(2009) 15 एस. सी. सी. 458 : **सुभाष चंद्र और एक अन्य** बनाम **दिल्ली अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड** और **अन्य ;**	14

[2004] (2004) 9 एस. सी. सी. 481 :
सुधाकर विट्ठल कुंभारे बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य ;** 5

[2001] (2001) 1 एस. सी. सी. 4 :
महाराष्ट्र राज्य बनाम **मिलिंद और अन्य ;** 5,16

[1995] ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 9 :
माधुरी पाटिल बनाम **अतिरिक्त आयुक्त, आदिवासी विकास ;** 4

[1995] ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 1506 :
निदेशक, आदिवासी कल्याण आंध्र प्रदेश बनाम **लावेटी गिरी** । 4

रिट (सिविल) अधिकारिता : 2012 की रिट याचिका संख्या 1241.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री पराग कोटेचा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री विमलेश बाजपेयी, सरकारी अधिवक्ता

न्यायमूर्ति पार्थ प्रतीम साहू – यह रिट याचिका याची द्वारा तारीख 29 फरवरी, 2012 के आदेश को चुनौती देते हुए फाइल की गई है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 उच्च स्तरीय जाति जांच समिति ने याची के पक्ष में जारी जाति प्रमाणपत्र को रद्द कर दिया था । इससे पूर्व भी सतर्कता प्रकोष्ठ ने जांच की थी, तारीख 3 अगस्त, 2011 को रिपोर्ट प्रस्तुत की थी कि चूंकि याची के पूर्वज महाराष्ट्र राज्य के निवासी हैं इसलिए याची छत्तीसगढ़ राज्य में आरक्षण के लाभ के लिए हकदार नहीं है ।

2. याची ने निम्नलिखित अनुतोषों की ईप्सा करते हुए यह रिट याचिका फाइल की है :–

"I. प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा जारी तारीख 29 फरवरी, 2012 (उपाबंध पी-6) के आदेश को अभिखंडित/अपास्त किया जाए ।

II. प्रत्यर्थी सं. 2 को याची को अनुसूचित जाति का सत्यापित जाति प्रमाणपत्र जारी करने के निदेश दिया जाए ।

III. प्रत्यर्थी प्राधिकारी को निदेश दिया जाए कि वह याची को सहायक जिला लोक अभियोजक अधिकारी के पद पर कायम रहने को अनुज्ञात करें ।

IV. माननीय न्यायालय कृपया प्रत्यर्थियों से मामले के अभिलेखों को मंगवाने की कृपा करें ।

V. कोई अन्य अनुतोष, जिसे यह माननीय न्यायालय मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन उचित और न्याय के हित में उचित समझे, वह भी प्रदान की जा सकती है ।"

3. संक्षेप में, मामले के तथ्य ये हैं कि याची के पिता वर्ष 1969 में महाराष्ट्र राज्य से तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य में चले गए (याची के मामले के अनुसार), महानदी जलाशय परियोजना प्रभाग, धमतरी में दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी के रूप में नियुक्त हुए और वर्ष 1972 में याची के पिता की सेवा 'टाइपिस्ट' के पद पर नियमित हो गई । याची का जन्म तारीख 6 अगस्त, 1983 को हुआ, उसका जन्म सांख्यिकी विभाग में तारीख 3 दिसंबर, 2009 को पंजीकृत हुआ, जैसा कि उपाबंध पी-3 से प्रदर्शित होता है । याची ने कक्षा 8वीं तक शासकीय स्कूल रुद्री, जिला धमतरी में पढ़ाई की ; कक्षा 9वीं से कक्षा 12वीं तक मनोनाइट हाई स्कूल धमतरी में पढ़ाई की । याची ने शासकीय विज्ञान महाविद्यालय, रायपुर (पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर से संबद्ध) से स्नातक की डिग्री और एल.एल.बी. की डिग्री दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर (पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर से संबद्ध) से किया । वर्ष 2008 में राज्य सरकार ने 'सहायक जिला लोक अभियोजन अधिकारी' के पद पर नियुक्ति हेतु आवेदन आमंत्रित करते हुए विज्ञापन प्रकाशित किया था । तारीख 03 अगस्त, 2011 के आदेश के द्वारायाची को 'सहायक जिला लोक अभियोजन अधिकारी' के पद पर नियुक्त किया गया था । नियुक्ति आदेश जारी करने के पूर्व तारीख 17 अगस्त, 2021 के आदेश (उपाबंध पी-5) के अधीन जिन उम्मीदवारों ने अपनी सामाजिक जाति की स्थिति का लाभ प्राप्त करने हेतु आवेदन पत्र प्रस्तुत किया था, उन्हें संबंधित विभाग से अपने जाति प्रमाणपत्र का सत्यापन कराने के निदेश दिए गए थे । याची ने सत्यापन के लिए प्रत्यर्थी सं. 2 के पास

सुसंगत दस्तावेज प्रस्तुत किए, जिसके आधार पर जांच की गई और जांच के पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 2 इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि याची आरक्षण का लाभ पाने का हकदार नहीं है । सतर्कता से हम आदेश को चुनौती देते हुए, याची आरक्षण का लाभ पाने का हकदार नहीं है । सतर्कता से सेरम के आदेश को चुनौती देते हुए याची ने 2009 की रिट याचिका डब्ल्यू. पी. एस. सं. 7353 को फाइल किया, जिसका तारीख 17 फरवरी, 2011 के आदेश (उपाबंध पी-4) के अधीन निम्नलिखित निदेशों को साथ निपटारा किया गया :–

> "4. तद्नुसार, प्रत्यर्थी सं. 2 को यह निर्देश दिया जाता है कि वह दिनेश कुमार भगोरिया वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय को दृष्टिगत करते हुए याची के मामले की परीक्षा करने और यथासंभव शीघ्र, अधिमानत: आज से छह सप्ताह की अवधि के भीतर, विधि के अनुसार समुचित आदेश पारित करें ।"

4. 2009 की डब्ल्यू. पी. एस. सं. 7353 में पारित तारीख 17 फरवरी, 2011 (उपाबंध पी-4) के आदेश के अनुसार, प्रत्यर्थी सं. 2 ने नई जांच की और आक्षेपित आदेश के अनुसार अभिलिखित किया कि याची के पूर्वज गांव कोरी, तहसील समुद्रपुर, जिला वर्धा (महाराष्ट्र) के निवासी हैं, याची के पिता का जन्म तारीख 24 जून, 1945 को गांव कोरी में हुआ था और उन्होंने तारीख 26 जून, 1968 को तहसीलदार, हिंगणघाट, जिला वर्धा (महाराष्ट्र) के कार्यालय से सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र प्राप्त किया था, जो उन्हें 'महार' समुदाय का सदस्य होने का प्रमाण देता है । विस्तृत जांच के पश्चात्, 2009 की डब्ल्यू. पी. एस. सं. 7353 में उच्च न्यायालय द्वारा जारी निदेशों को ध्यान में रखते हुए और **माधुरी पाटिल** बनाम **अतिरिक्त आयुक्त, आदिवासी विकास**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा जारी निदेशों पर विचार करते हुए, **निदेशक, आदिवासी कल्याण आंध्र प्रदेश** बनाम **लावेटी गिरी**[2] वाले मामले को और भारत सरकार द्वारा विभिन्न तारीखों पर जारी अधिसूचनाओं/परिपत्रों से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि उपविभागीय

---

[1] ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 9.

[2] ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 1506.

अधिकारी (शहर), रायपुर ने तारीख 21 फरवरी, 2006 को याची के पक्ष में त्रुटिवश से जाति प्रमाणपत्र जारी कर दिया था और उसे रद्द किया जाता है, यह निदेश देते हुए कि याची, भारत सरकार द्वारा जारी तारीख 22 फरवरी, 1985 के आदेश को ध्यान में रखते हुए जाति प्रमाणपत्र प्राप्त कर सकता है ।

5. याची के विद्वान् काउंसेल श्री पराग कोटेचा ने निवेदन किया कि याची के पिता ने प्रारंभ में अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य अर्थात् धमतरी में दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी के रूप में अपनी सेवा प्रारंभ की थी ; तत्पश्चात् वर्ष 1972 में याची को नियमित कर दिया गया ; छत्तीसगढ़ राज्य तारीख 1 नवंबर, 2000 को अस्तित्व में आया, इसलिए, याची के पिता को 'अस्वैच्छिक प्रवासी' माना जाएगा । याची जिस 'महार' जाति से संबंधित है, वह भी छत्तीसगढ़ राज्य में अनुसूचित जाति की श्रेणी में आती है, इसलिए, याची आरक्षण के लाभ का हकदार है । उन्होंने दलील दी कि याची का जन्म और उसकी पूरी शिक्षा धमतरी (छत्तीसगढ़) में हुई है । यहां तक कि पूर्ववर्ती मध्य प्रदेश राज्य में भी 'महार' जाति अनुसूचित जाति श्रेणी की सूची में सम्मिलित है । छत्तीसगढ़ सरकार ने अपने परिपत्र तारीख 6 जुलाई, 2004 (उपाबंध पी-5) में स्पष्ट किया है कि राज्य सरकार, निगमों, आयोगों और सावर्जनिक क्षेत्रों के कर्मचारी, जो मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ राज्य के बीच कैडर के विभाजन के बाद छत्तीसगढ़ आए हैं, उन्हें 'अस्वैच्छिक प्रवासी' माना जाएगा और वे आरक्षण के लाभ के हकदार होंगे । उक्त परिपत्र से पूर्व, छत्तीसगढ़ सरकार ने आरक्षण के लिए पात्र व्यक्तियों द्वारा सुसंगत दस्तावेज प्रस्तुत न करने की कठिनाइयों पर विचार करते हुए तारीख 21 जुलाई, 2003 को परिपत्र जारी किया था । परिपत्र तारीख 21 जुलाई, 2003 के खंड (5) में कहा गया है कि यदि कोई आवेदक छत्तीसगढ़ राज्य के स्थाई निवास का कोई दस्तावेज प्रस्तुत करने में असफल रहता है, तो संबंधित प्राधिकारी अपने पास उपलब्ध जानकारी के आधार पर जांच करेगा और जाति प्रमाणपत्र जारी करेगा । छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा जारी तारीख 27 जून, 2007 के परिपत्र का हवाला देते हुए जिसमें 'स्थाई निवास' शब्द को परिभाषित किया गया है, उन्होंने प्रस्तुत किया कि याची के पिता छत्तीसगढ़ में आबंटित होने के कारण 'स्थाई निवासी'

श्रेणी में आते हैं । उच्च न्यायालय ने रिट याचिकाओं के एक समूह में, जिसका प्रमुख मामला 2007 की डब्ल्यू. पी. एस. सं. 3338 था, तथा जिसमें दिनेश कुमार बनाम छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य पक्षकार थे, उसमें तारीख 19 अगस्त, 2010 का विस्तृत आदेश (उपाबंध पी-7) यह विनिर्दिष्ट करता है कि आवेदक को सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र जारी करने के लिए जाति की समिति द्वारा संवीक्षा कैसे की जानी है तथा सतर्कता प्रकोष्ठ आदि द्वारा जांच कैसे की जानी है । उन्होंने तारीख 19 अगस्त, 2010 के आदेश के खंड (जे) और पैरा 29 को भी निर्दिष्ट किया तथा दलील दी है कि उच्च न्यायालय ने पूर्वोक्त आदेश में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **सुधाकर विट्ठल कुंभारे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में पारित निर्णयों पर विचार किया था तथा समान स्थिति वाले व्यक्तियों को लाभ प्रदान करने पर मत व्यक्त किया था । 2007 की डब्ल्यू. पी. एस. सं. 3338 में तारीख 19 अगस्त, 2010 के पारित आदेश के पैरा 29 को निर्दिष्ट करते हुए यह तर्क दिया गया है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **मिलिंद और अन्य**[2] वाले मामले में, यह अभिनिर्धारित किया है कि याची के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए । याची द्वारा फाइल 2009 की डब्ल्यू. पी. एस. सं. 7353 की याचिका को समान शर्तों के साथ मंजूर किया गया था, इसलिए, प्रत्यर्थी सं. 2 को सक्षम प्राधिकारी द्वारा याची को पहले से जारी जाति प्रमाणपत्र रद्द नहीं करना चाहिए था । उप-मंडल अधिकारी (शहर), रायपुर की योग्यता या अधिकारिता क्षेत्र के आधार पर जाति प्रमाणपत्र नहीं किया गया था, जिन्होंने याची के पक्ष में सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र जारी किया था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने हाल ही में **पंकज सिंह** बनाम **झारखंड राज्य**[3] वाले मामले में राज्य के पुनर्गठन के कारण पलायन करने वाले व्यक्ति की स्थिति पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि राज्य के पुनर्गठन के कारण प्रवास करने वाला व्यक्ति उत्तराधिकारी राज्य में विशेषाधिकारों और आरक्षण का लाभ लेने का हकदार है, उन्होंने

---

[1] (2004) 9 एस. सी. सी. 481.

[2] (2001) 1 एस. सी. सी. 4.

[3] 2021 एस. सी. ऑनलाइन 616.

निवेदन किया कि तारीख 29 फरवरी, 2021 का आदेश, जो उपाबंध पी-6 का भाग है, को अपास्त किया जाए और याची को उसके सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र (उपाबंध पी-1) के आधार पर उसकी नियुक्ति के स्थान पर सहायक जिला लोक अभियोजन अधिकारी के रूप में कार्य करना जारी रखने को मंजूर किया जाए ।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान् सरकारी अधिवक्ता श्री विमलेश बाजपेयी ने याची के विद्वान् काउंसेल की निवेदनों का विरोध किया और निवेदन किया है कि याची उस रूप में सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र जारी करने का हकदार नहीं है जिस रूप में उसे प्रमाणपत्र जारी किया जाता है क्योंकि याची के पूर्वज महाराष्ट्र राज्य के क्षेत्रों में आने वाले क्षेत्र के निवासी थे । जाति प्रमाणपत्र के सत्यापन के लिए प्रस्तुत आवेदन में, याची ने उल्लेख किया कि उसके पूर्वज गांव कोरी, तहसील समुद्रपुर, जिला वर्धा (महाराष्ट्र) के निवासी हैं । चूंकि याची के पूर्वज तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य की भौगोलिक सीमा के स्थाई निवासी नहीं हैं और याची के पिता महाराष्ट्र से धमतरी, जो तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य का हिस्सा था, में प्रवास कर गए थे, याची द्वारा सामाजिक स्थिति जाति के प्रमाणपत्र के सत्यापन के लिए आवेदन प्रस्तुत करने पर, याची द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर एक विस्तृत जांच की गई । जांच में याची को सुनवाई का अवसर भी दिया गया । जांच करने के पश्चात्, सतर्कता सेल ने राय दी कि याची छत्तीसगढ़ राज्य में आरक्षण के लाभ के लिए हकदार नहीं है । प्रत्यर्थी सं. 2 ने 2007 की डब्ल्यू. पी. एस. सं. 3338 में उच्च न्यायालय द्वारा जारी निदेश पर विचार करते हुए याची द्वारा प्रस्तुत जाति प्रमाणपत्र का सत्यापन किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि याची को जाति प्रमाणपत्र त्रुटिवश जारी किया गया है और उसे रद्द कर दिया, जिसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । उन्होंने बताया कि याची ने गलत सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र प्राप्त किया है, इसलिए, उसे कोई लाभ नहीं दिया जा सकता है और उसे उसके जाति प्रमाणपत्र को रद्द किए जाने के परिणाम का सामना करना होगा । उन्होंने **भारतीय खाद्य निगम** बनाम **जगदीश बलराम बहिरा और अन्य**[1]

[1] (2017) 8 एस. सी. सी. 670.

वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया है ।

7. मैंने दोनों पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना है तथा दोनों पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर लाए गए दस्तावेजों का परिशीलन किया है ।

8. याची के विद्वान् काउंसेल के निवेदनों के आधार पर, इस न्यायालय के विचारार्थ निम्नलिखित प्रश्न उद्भूत होते हैं :–

• क्या याची के पिता, छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा जारी तारीख 21 जुलाई, 2003 और तारीख 6 जुलाई, 2004 के परिपत्रों के अंतर्गत प्रवासी हैं ?

• क्या याची के पिता की स्थिति 'अस्वैच्छिक प्रवासी' की है ?

9. याची के विद्वान् काउंसेल के निवेदनों का मूल्यांकन करने के लिए, मामले के निर्विवाद तथ्यों पर विचार करना उचित होगा । याची के मामले के अनुसार, उसके पिता धमतरी आए, जो कि तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य का भाग था ; महानदी जलाशय परियोजना बांध प्रभाग, धमतरी, जिला रायपुर में दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी के रूप में सेवा में सम्मिलित हुए और बाद में वर्ष 1972 में 'टाइपिस्ट' के पद पर नियमित हो गए । याची के पिता को कभी भी किसी सेवा शर्त के अधीन धमतरी में प्रवास करने और अपनी सेवा में सम्मिलित होने के लिए विवश नहीं किया गया था । वास्तव में, यह धमतरी के उक्त विभाग में उनकी पहली नौकरी थी । याची के पूर्वज अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य की भौगोलिक सीमा के स्थाई निवासी नहीं हैं, बल्कि वे कोरी गांव, जिला वर्धा (महाराष्ट्र) के निवासी थे । अधिसूचना में विनिर्दिष्ट जातियों और विनिर्दिष्ट राज्यों में उनके मूल संबंध में राष्ट्रपति की अधिसूचना वर्ष 1950 में जारी की गई है । सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र/जाति प्रमाणपत्र के आधार पर आरक्षण का लाभ उठाने के उद्देश्य से किसी भी व्यक्ति की आवासीय स्थिति को वर्ष 1950 में राष्ट्रपति की अधिसूचना जारी करने की तारीख के अनुसार माना जाएगा । राष्ट्रपति की अधिसूचना जारी होने के पश्चात्, यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य राज्य में प्रवास करता है, जहां प्रवासी की जाति भी अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग की श्रेणी में दिखाई जाती है, जैसा भी

मामला हो, तो प्रवासी को प्रवासित राज्य में आरक्षण का लाभ नहीं मिल सकता है प्रवासी अपने मूल राज्य में आरक्षण के लाभ के लिए हकदार होगा । भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के प्रमाणपत्र जारी करने के संबंध में तारीख 22 मार्च, 1977 को स्पष्टीकरण अधिसूचना (उपबंध आर-2) जारी की । अधिसूचना तारीख 22 मार्च, 1977 का सुसंगतभाग वर्तमान संदर्भ के लिए नीचे उद्धृत है :–

> "2. ..... इस प्रकार किसी विशेष व्यक्ति का किसी विशेष स्थान में निवास विशेष महत्व रखता है । इस निवास को शब्द के शाब्दिक या साधारण अर्थ में नहीं समझा जाना चाहिए । दूसरी ओर, यह उस स्थान के संबंध में उसकी जाति/जनजाति को निर्धारित करने वाले राष्ट्रपति के आदेश की अधिसूचना की तिथि पर किसी व्यक्ति के स्थाई निवास को प्रदर्शित करता है । इस प्रकार कोई व्यक्ति जो अपने मामले में लागू राष्ट्रपति के आदेश की अधिसूचना के समय अस्थाई रूप से अपने स्थाई निवास स्थान से दूर है, उदाहरण के लिए, जीविकोपार्जन या शिक्षा प्राप्त करने आदि के लिए, उसे भी अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के रूप में माना जा सकता है, जैसा भी मामला हो, यदि उसकी जाति/जनजाति उसके राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के संबंध में उस आदेश में निर्दिष्ट की गई है । लेकिन उसे अपने अस्थाई निवास स्थान के संबंध में ऐसा नहीं माना जा सकता है, इस तथ्य के बावजूद कि राष्ट्रपति के किसी भी आदेश में उस क्षेत्र के संबंध में उसकी जाति/जनजाति का नाम निर्धारित किया गया है ।
>
> 3. किसी व्यक्ति के स्थाई निवास और उसकी जाति/जनजाति जिससे वह संबंधित होने का दावा करता है, की सत्यता सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार ने ऐसे प्रमाणपत्र जारी करने के लिए विहित प्रारूप में विशेष उपबंध किया है । पात्र व्यक्तियों को प्रमाणपत्र जारी किए जाएं, इसके लिए यह आवश्यक है कि ऐसे प्रमाणपत्र जारी करने से पहले मुख्य रूप से राजस्व अभिलेखों पर आधारित उचित सत्यापन किया जाए तथा यदि आवश्यक हो तो विश्वसनीय जांच के माध्यम से सत्यापन किया जाए, ... इस

प्रकार एक जिले का राजस्व प्राधिकारी दूसरे जिले के व्यक्तियों के संबंध में ऐसा प्रमाणपत्र जारी करने के लिए सक्षम नहीं होगा न ही एक राज्य/संघ शासित प्रदेश का ऐसा प्राधिकारी ऐसे व्यक्तियों के संबंध में ऐसे प्रमाणपत्र जारी कर सकता है जिनका स्थाई निवास स्थान किसी विशेष राष्ट्रपति आदेश की अधिसूचना के समय किसी अन्य राज्य/संघ शासित प्रदेश में रहा हो । सुसंगत राष्ट्रपति आदेश की अधिसूचना की तारीख के पश्चात् जन्में ऐसे व्यक्तियों के मामले में, अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का दर्जा प्राप्त करने के प्रयोजन के लिए निवास स्थान, राष्ट्रपति आदेश की अधिसूचना के समय उनके माता-पिता का स्थाई निवास स्थान होगा, जिसके अधीन वे ऐसी जाति/जनजाति से संबंधित होने का दावा करते हैं ।

4. ..... असत्यप्रमाणपत्र जारी होने पर रोक लगाने के लिए सत्यापन का प्रश्न और भी महत्वपूर्ण हो जाता है....."

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

भारत सरकार ने तारीख 22 फरवरी, 1985 को एक स्पष्टीकरण अधिसूचना जारी की जिनका सुसंगत भाग इस प्रकार है :–

"2. यह भी स्पष्ट किया जाता है कि अनुसूचित जाति/जनजाति का व्यक्ति जो शिक्षा, रोजगार आदि की तलाश के लिए अपने मूल राज्य से किसी अन्य राज्य में प्रवास कर गया है, उसे अपने मूल राज्य का अनुसूचित जाति/जनजाति माना जाएगा तथा वह अपने मूल राज्य से लाभ प्राप्त करने का हकदार होगा, न कि उस राज्य से जहां वह प्रवास कर गया है ।

3. यह पत्र इस मंत्रालय के तारीख 18 नवंबर, 1982 के समसंख्यक पूर्ववर्ती पत्र का स्थान प्रतिस्थापित करता है ।"

10. छत्तीसगढ़ सरकार ने भी वर्ष 2003 और 2004 में परिपत्र जारी किए थे । तारीख 21 जुलाई, 2003 के जारी परिपत्र में 'प्रवासी' और 'अस्वैच्छिक प्रवासी' शब्दों को परिभाषित किया गया है । तारीख 21 जुलाई, 2003 को जारी परिपत्र का उद्देश्य, जैसा कि प्रतीत होता है,

आवेदकों को आवेदन पत्र के साथ संपूर्ण दस्तावेज संलग्न करने में कुछ छूट देने और जाति प्रमाणपत्र प्रदान करने के लिए आवेदन पर विचार करने और सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र जारी करने के तरीके के बारे में दिशानिर्देश तय किए गए हैं । परिपत्र तारीख 21 जुलाई, 2003 के खण्ड (5) में यह जांच करने की बात कही गई है कि क्या आवेदक के पूर्वज वर्ष 1950 के पूर्व से छत्तीसगढ़ राज्य में निवास कर रहे हैं या वे किसी अन्य राज्य से आकर 1950 के बाद छत्तीसगढ़ राज्य में बस गए हैं । परिपत्र तारीख 6 जुलाई, 2004 में आरक्षण का लाभ मध्य प्रदेश राज्य के पुनर्गठन पर कैडर के विभाजन के आधार पर 'अस्वैच्छिक प्रवासियों' अर्थात् सरकारी कर्मचारियों या नगर निगम जैसे अन्य विभागों के कर्मचारियों को दिया गया है । भारत सरकार और छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा जारी किए गए बाद के परिपत्रों के प्रकाश में, याची के पिता का मामला 'अस्वैच्छिक प्रवासी' की परिधि में नहीं आता है । इसलिए, याची के विद्वान् काउंसेल का यह निवेदन है कि चूंकि याची के पिता वर्ष 1969 से अर्थात् मध्य प्रदेश राज्य के पुनर्गठन से पहले धमतरी में कार्यरत थे, याची 'अस्वैच्छिक प्रवासी' के लाभों के लिए हकदार है, यह कायम रखे जाने योग्य नहीं है ।

11. याची द्वारा प्रस्तुत विवरण के आधार पर जांच करते समय, तारीख 26 जुलाई, 2011 को ग्राम कोरी, तहसील समुद्रपुर, जिला वर्धा (महाराष्ट्र) में एक बैठक (पी. के. सी. के) बुलाई गई, जिसमें ग्रामीण उपस्थित हुए, जिनसे याची के पिता और उनके पूर्वजों के संबंध में पूछताछ की गई । तारीख 2 अगस्त, 2011 की जांच रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है कि राष्ट्रपति की अधिसूचना तारीख 10 अक्तूबर, 1950 के जारी होने से पूर्व, याची के पिता ग्राम कोरी, जिला वर्धा (महाराष्ट्र) के निवासी थे, न कि मध्य प्रदेश या छत्तीसगढ़ राज्य के भौगोलिक सीमा के किसी भाग के निवासी थे । याची के पिता वर्ष 1968 में ही धमतरी आए थे । सतर्कता रिपोर्ट में याची का वंश वृक्ष सम्मिलित था, जिस पर याची ने कोई विवाद नहीं किया ।

12. जहां तक कि याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा वर्ष 2007 की डब्ल्यू. पी. एस. संख्या 3338 तथा अन्य संबंधित मामलों में पारित

तारीख 19 अगस्त, 2010 के आदेश के आधार पर प्रस्तुत किए गए निवेदन का संबंध है, उस आदेश के आधार पर याची की रिट याचिका को स्वीकार कर लिया गया था, मामले को सतर्कता प्रकोष्ठ का गठन करके तथा याची के सुनवाई का अवसर देकर जाति प्रमाणपत्र के संबंध में नए सिरे से जांच करने के लिए वापस भेज दिया गया था । इस न्यायालय के समक्ष याची का यह पक्षकथन नहीं है कि जांच समुचित रूप से नहीं की गई, बल्कि याची का मामला केवल यह है कि चूंकि याची के पिता 'अस्वैच्छिक प्रवासी' की श्रेणी में आते हैं, इसलिए, याची आरक्षण के लाभों का हकदार है । तारीख 19 अगस्त, 2010 के आदेश के अनुसार, पिछली रिट याचिका को स्वीकार करने के बाद प्रत्यर्थी सं. 2 ने याची के संपूर्ण दावे पर पुनर्विचार किया तथा आक्षेपित आदेश द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि याची का सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र त्रुटिपूर्ण है ।

13. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **जगदीश बलराम बहिरा** (उपर्युक्त) वाले मामले में अपने पूर्व विनिश्चयों पर विचार करने के पश्चात् इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

> "24. अगला विनिश्चय जो इस विवाद्यक पर सुसंगत है, वह आर. विश्वनाथ पिल्लई **बनाम** केरल राज्य, [2004] 1 एस. सी. आर. 360 वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों का निर्णय है । उस मामले में अपीलार्थी जो निर्दिष्ट आरक्षित समुदाय से संबंधित नहीं था, ने जाति प्रमाणपत्र प्राप्त किया और अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीट पर पुलिस उपाधीक्षक के रूप में चुना गया । तथापि, एक शिकायत पर पाया गया कि अपीलार्थी अनुसूचित जाति से संबंधित नहीं था और जांच समिति ने उसके दावे को खारिज कर दिया । जांच समिति के आदेश को उच्च न्यायालय और इस न्यायालय ने कायम रखा । इसके बाद अपीलार्थी के कहने पर केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण ने निदेश दिया कि अनुच्छेद 311 के अधीन प्रक्रिया का पालन किए बिना उसे सेवा से समाप्त नहीं किया जाना चाहिए । उच्च न्यायालय ने उस विनिश्चय को उलट दिया और अपीलार्थी को सेवा से खारिज कर दिया गया । इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी ने अन्य बातों

के साथ-साथ सुरक्षा की ईप्सा की क्योंकि उसने लगभग 27 वर्ष की सेवा की थी ।

15. इसके अलावा, अपीलार्थी ने अनुसूचित जाति समुदाय से होने के आधार पर सेवा में नियुक्ति प्राप्त की थी । जब जांच समिति ने पाया कि वह अनुसूचित जाति समुदाय से नहीं है, तो उसकी नियुक्ति का मूल आधार ही समाप्त हो गया । कानून की दृष्टि में उसकी नियुक्ति कोई नियुक्ति नहीं थी । वह पद पर बने रहने के अधिकार का दावा नहीं कर सकता, क्योंकि उसने कपट करके और गलत जाति प्रमाणपत्र प्रस्तुत करके आरक्षित उम्मीदवार के लिए निर्धारित पद को हड़प लिया था, जब तक अपीलार्थी अपनी नियुक्ति के आधार पर पद पर बने रहने का दावा नहीं कर सकता क्योंकि वह संविधान के अनुच्छेद 311 के अधीन दी गई संवैधानिक गारंटी का दावा नहीं कर सकता । चूंकि उसने गलत जाति प्रमाणपत्र के आधार पर नियुक्ति प्राप्त की थी, इसलिए, उसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 के अर्थ में पद धारण करने वाला व्यक्ति नहीं अभिनिर्धारित किया जा सकता । जांच समिति द्वारा अभिलिखित किया गया निष्कर्ष कि अपीलार्थी ने गलत जाति प्रमाणपत्र के आधार पर नियुक्ति प्राप्त की है, अंतिम हो गया है, इसलिए, स्थिति यह है कि अपीलार्थी ने उस पद को हड़प लिया है जो अनुसूचित जाति के सदस्य को मिलना चाहिए था । जांच समिति द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्ष और इस न्यायालय द्वारा कायम रखे गए निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए उन्होंने स्वयं को पद धारण करने के लिए अयोग्य घोषित कर दिया है । नियुक्ति प्रारंभ से ही शून्य थी । यह नहीं कहा जा सकता है कि उक्त शून्य नियुक्ति अपीलार्थी को यह दावा करने में सक्षम बनाएगी कि वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 के अर्थ के भीतर एक सिविल पद धारण कर रहा था, क्योंकि अपीलार्थी को कपट का लाभ उठाने और यह दावा करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 या उसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार निपटाए जाने वाले पद का धारक था ।

जहां किसी सेवा में नियुक्ति कपट या प्रवंचना करके प्राप्त की गई है, ऐसी नियुक्ति विधि में, सेवा में नियुक्ति नहीं है ऐसी स्थिति में संविधान का अनुच्छेद 311 बिल्कुल भी लागू नहीं होता है ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

तीन न्यायाधीशों की पीठ ने इस निवेदन को भी खारिज कर दिया कि चूंकि अपीलार्थी ने 27 साल की सेवा की है, इसलिए, उसकी खारिजी के आदेश को अनिवार्य सेवानिवृत्ति या निष्कासन के आदेश से प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए ताकि उसके पेंशन संबंधी लाभों की रक्षा की जा सके । न्यायालय ने टिप्पणी की :–

"19. ..... सावर्जनिक सेवा में वेतन, पेंशन और अन्य सेवा लाभों के अधिकार पूरी तरह से कानूनी प्रकृति के हैं । अपीलार्थी ने एक आरक्षित उम्मीदवार के लिए निर्धारित पद पर गलत जाति प्रमाणपत्र प्रस्तुत करके और कपट करके नियुक्ति प्राप्त की है । इस पद पर उसकी नियुक्ति, विधि की दृष्टि में शून्य और गैर-कानूनी थी । सेवानिवृत्ति के पश्चात् वेतन या पेंशन का अधिकार एक वैध और विधिक रूप से नियुक्ति से प्राप्त होता है । पेंशन और मौद्रिक लाभों का परिणामी अधिकार केवल तभी दिया जा सकता है जब नियुक्ति वैध और विधिक हो । ऐसे लाभ उस स्थिति में नहीं दिए जा सकते, जब नियुक्ति कपटपूर्वक प्राप्त की गई हो और झूठे जाति प्रमाणपत्र पर आधारित हो । एक व्यक्ति जो गलत जाति प्रमाणपत्र प्रस्तुत करके सेवा में आया हो और अनुसूचित जाति के लिए निर्धारित पद पर उस समुदाय को नियुक्ति से वंचित किया हो, वह इस न्यायालय की किसी भी सहानुभूति या अनुग्रह का पात्र नहीं है । एक व्यक्ति जो न्याय चाहता है, उसे साफ हाथों से आना चाहिए । जो व्यक्ति असत्य दावों के साथ न्यायालय में आता है, वह न्याय का अभिवाक् नहीं कर सकता और न ही न्यायालय उसके पक्ष में न्याय के अधिकार का प्रयोग करने के लिए न्यायानुमत होगा । जो व्यक्ति साम्यता चाहता है, उसे निष्पक्ष और साम्यतापूर्ण रूप से कार्य करना चाहिए । किसी ऐसे व्यक्ति के मामले में साम्यता अधिकार क्षेत्र

का प्रयोग नहीं किया जा सकता है, जिसने फर्जी जाति प्रमाणपत्र के आधार पर धोखाधड़ी करके नियुक्ति प्राप्त की हो । कोई भी सहानुभूति और साम्यता विचार उसके बचाव में नहीं आ सकता । हमारा मानना है कि ऐसे मामले में जहां किसी व्यक्ति ने कपट करके कोई पद अर्जित किया हो, साम्यता या अनुकंपा को विधि की भुजाओं को मोड़ने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती ।"

पूर्वोक्त विनिश्चयों और उनमें की गई टिप्पणियों पर विचार करने के पश्चात्, माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित निष्कर्ष अभिलिखित किए :–

"69. इन कारणों से, हम अभिनिर्धारित करते हैं और घोषणा करते हैं कि –

69.1 मिलिंद वाले मामले में दिए गए विनिश्चय के पैरा 38 में इस न्यायालय की संविधान न्यायपीठ द्वारा जारी किए गए निदेश संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन इस न्यायालय को प्रदत्त शक्तियों के अनुसरण में थे ;

69.2 माधुरी पाटिल वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा तारीख 2 सितंबर, 1994 को दिए गए विनिश्चय के पश्चात् से, उन निदेशों के अनुसरण में क्षेत्र पर नियंत्रण रखने वाली सरकार ने निम्नलिखित के लिए एक विस्तृत प्रक्रिया की परिकल्पना की थी –

(क) जाति प्रमाण त्रों को जारी करना ;

(ख) राज्य सरकार द्वारा गठित की जाने वाली जांच समितियों द्वारा जाति और जनजाति के दावों की जांच और सत्यापन ;

(ग) दावे की प्रामाणिकता की जांच करने की प्रक्रिया ;

(घ) यदि दावा असत्यता वास्तविक नहीं पाया जाता तो जाति प्रमाणपत्र रद्द करना और अधिहरण करना ;

(ङ) किसी नियुक्ति की समाप्ति, किसी शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश को रद्द करने या किसी चुनावी कार्यालय से अयोग्य ठहराए जाने के संदर्भ में लाभों को वापस लेना, इस आधार पर कि उम्मीदवार आरक्षित श्रेणी से संबंधित है ; तथा

(च) किसी आपराधिक अपराध के लिए अभियोजन ;

69.3 आर. विश्वनाथ पिल्लई और दत्तात्रेय वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय, जो तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठों द्वारा दिए गए थे, ने विधि का सिद्धांत अधिकथित किया कि जहां किसी व्यक्ति द्वारा कोई लाभ प्राप्त किया जाता है जैसे किसी पद पर नियुक्ति या किसी शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश इस आधार पर कि उम्मीदवार उस आरक्षित श्रेणी से संबंधित है जिसके लिए लाभ आरक्षित है, सत्यापन पर जाति या जनजाति के दावे को अमान्य घोषित करने के परिणामस्वरूप नियुक्ति या, जैसा भी मामला हो, प्रवेश शून्य या अमान्य हो जाएगा,

69.4 उपरोक्त सिद्धांत का अपवाद उन मामलों में था जहां इस न्यायालय ने पूर्ण न्याय प्रदान करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग किया था ;

69.5 महाराष्ट्र अधिनियम XXIII, 2001 द्वारा माधुरी पाटिल में प्रतिपादित व्यापक सिद्धातों का विधायी संहिताकरण किया गया है । यह कानून जाति प्रमाणपत्र जारी करने को विनियमित करने के लिए एक वैधानिक ढांचा प्रदान करता है (धारा 4) ; दावों के सत्यापन के लिए जांच समितियों के गठन (धारा 6), जाति प्रमाणपत्रों के सत्यापन के लिए आवेदन प्रस्तुत करना [धारा 6(2) और धारा 6(3)] ; जाति प्रमाणपत्रों को रद्द करना (धारा 7) ; सबूत का भार (धारा 8) ; दावे के अविधिमान्य होने पर प्राप्त लाभों को वापस

लेना (धारा 10) ; और अभियोजन का प्रारंभ (धारा 11), अन्य बातों के अलावा ।

69.6 दावे को सत्यापित करने के लिए छानबीन समिति को धारा 7 द्वारा प्रदत्त शक्ति तारीख 18 अक्तूबर, 2001 को अधिनियम के लागू होने से पूर्व और उसके पश्चात् जारी किए गए जाति प्रमाणपत्रों के संबंध में है । किसी जाति प्रमाणपत्र (या लाभ प्राप्त करने के दावे) के लिए अंतिमता नहीं जुड़ी होती है, जहां व्यक्ति का आरक्षित जाति, जनजाति या वर्ग से संबंधित होने का दावा अभी तक जांच समिति द्वारा सत्यापित नहीं किया गया है;

69.7 जाति के दावे के आधार पर प्राप्त लाभों को वापस लेना, जो असत्य पाया गया है और अमान्य कर दिया गया है, एक आवश्यक परिणाम है जो जाति के दावे के अविधिमान्य होने से निकलता है और भूतलक्षी प्रभाव का कोई विवाद्यक नहीं उठेगा ;

69.8 कविता सोलंकी और शालिनी वाले मामले में दो विद्वान् न्यायाधीशों के विनिश्चयों को खारिज किया जाता है । शालिनी वाले मामले में, जहां तक धारा 10 के उपबंध के लागू होने के लिए बेईमान आशय की आवश्यकता को अनुबंधित किया गया है, वह त्रुटिपूर्ण है और विधि में ठीक स्थिति को प्रतिबिंबित नहीं करता है ;

69.9 धारा 11 में अंतर्विष्ट दंड उपबंधों में आपराधिक मनोस्थिति एक तत्व है । धारा 11 भावी है और उन स्थितियों में लागू होगी जहां अपराध का गठन करने वाला कार्य उसके लागू होने की तारीख के पश्चात् हुआ है ;

69.10 **अरूण सोनोने** (उपरोक्त) वाले मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय की पूर्णन्यायपीठ का निर्णय स्पष्ट रूप से त्रुटिपूर्ण है और खारिज किया जाता है ;

69.11 यद्यपि संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन उच्चतम न्यायालय की शक्ति पूर्ण न्याय प्रदान करने के लिए न्यायालय में निहित एक संवैधानिक शक्ति है और यह एक ऐसी शक्ति है जो व्यापक शब्दों में व्यक्त की गई है, अधिकारिता के प्रयोग में विधायी जनादेश को उचित सम्मान दिया जाना चाहिए, जहां महाराष्ट्र अधिनियम**,** 2001 का 23 जैसे विधिका क्षेत्राधिकार है ।"

14. **सुभाष चंद्र और अन्य** बनाम **दिल्ली अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने प्रवासित राज्य में आरक्षण का लाभ प्राप्त करने के लिए प्रवासियों की स्थिति पर विचार करते हुए इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

"40. जो प्रश्न उठाया गया था, वह राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति, जैसा भी मामला हो, के लिए राज्य या संघ राज्य क्षेत्र या राज्य के भाग के विनिर्देश के प्रभाव का था । यह उल्लिखित करते हुए कि विनिर्देश "इस संविधान के प्रयोजनों के लिए" था, यह अवधारित करना आवश्यक पाया गया कि 'उस राज्य के संबंध में' अभिव्यक्ति क्या व्यक्त करना चाहती है । इस न्यायालय ने न केवल संविधान के विभिन्न उपबंधों को उल्लिखित किया, बल्कि इस क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले पहले के विनिश्चयों के साथ-साथ संविधान सभा डॉ. बी. आर. अंबेडकर के मतों पर यह अभिनिर्धारित करने के लिए किया है, ताकि यह अभिनिर्धारित किया जा सके : (मरी चंद्र शेखर राव मामला 1, एस. सी.सी. पृष्ठ 147, पैरा 22)

"22. उस मामले को ध्यान में रखते हुए हमारा मत है कि याची महाराष्ट्र में अनुसूचित जनजाति प्रमाणपत्र के आधार पर चिकित्सा महाविद्यालय में प्रवेश पाने का हकदार नहीं है । हमने यह मत अपनाया है कि याची के अधिवासी होने के नाते प्रवेश पाने के अधिकार का प्रश्न विचार करने योग्य नहीं है ।"

---

[1] (2009) 15 एस. सी. सी. 458.

15. **कुमारी श्वेता शांतालाल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ में इस प्रकार से अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "26. इतना कहने के पश्चात्, अब हम संदर्भ का उत्तर दे सकते हैं । अनुसूचित जाति से संबंधित प्रवासी के मामले में, जो तारीख 10 मार्च, 1950 को उस क्षेत्र में सामान्य रूप से निवासी नहीं था जो अब महाराष्ट्र राज्य का गठन करता है और एस. टी. के मामले में, नियम 5 पर विचार करते हुए, तारीख 6 सितंबर, 1950 को, महाराष्ट्र राज्य में एस. सी./एस. टी. के रूप में आरक्षण के लाभों के हकदार नहीं होंगे । वे और उनकी संतानें मूल राज्य में आरक्षण का लाभ प्राप्त करना जारी रखेंगी । संदर्भ का उत्तर तदनुसार दिया जाता है ।"

16. 2018 की रिट अपील सं. 50 में, पक्षकार छत्तीसगढ़ हस्तशिल्प विकास बोर्ड और अन्य बनाम दिलीप हेडाऊ और अन्य थे, तारीख 2 जनवरी, 2017 के आदेश को चुनौती दी गई थी, जिसके द्वारा विद्वान् एकल न्यायाधीश ने **मिलिंद** (उपर्युक्त) वाले मामले को माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों पर विचार करते हुए **कविता सोलंकी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य**[2] और **आर. उन्नीकृष्णन् और एक अन्य** बनाम **वी. के. महीनदेवन और अन्य**[3] में याची की रिट को अनुज्ञात किया । सेवा से समाप्ति के आदेश को अपास्त कर दिया और उन्हें पूर्ण बकाया वेतन के साथ सेवा में बहाल कर दिया, इस उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **जगदीश बलराम बहिरा** (उपर्युक्त) वालेमामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय पर विचार करते हुए इस प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

> "22. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **भारतीय खाद्य निगम** (उपर्युक्त) में बहुत ही संक्षिप्त और स्पष्ट रूप से मत व्यक्त किया है कि विधिक प्रणाली को उन लोगों को सहायता प्रदान करने के

---

[1] 2010 (2) एम. एच. एल. जे. 904.

[2] (2012) 8 एस. सी. सी. 430.

[3] (2014) 4 एस. सी. सी. 434.

माध्यम के रूप में नहीं देखा जा सकता है जो किसी जाति या जनजाति या सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग से संबंधित होने का असत्य दावा करते हैं । ये लाभ संवैधानिक योजना के अनुसार केवल अनिहित जातियों, जनजातियों या वर्गों को प्रदान किए जाते हैं और उन लोगों द्वारा हड़पे नहीं जा सकते जो उनसे संबंधित नहीं हैं । यदि राज्य विधि के बावजूद संविधान के अनुच्छेद 142 द्वारा प्रदत्त संवैधानिक शक्तियों के प्रयोग में ऐसे दावों की रक्षा की जाती है, तो न केवल विधिक प्रणाली बल्कि न्यायिक प्रक्रिया की विश्वसनीयता भी खत्म हो जाएगी ।

23. यह न्यायालय वर्तमान मुकदमे से जुड़े विवाद्यक को किसी भी बेहतर शब्दों में नहीं बता सकता है, इसलिए, निजी प्रत्यर्थी के लिए कानून की कठोरता से कोई बच नहीं सकता है । वास्तव में, विद्वान् एकल न्यायाधीश के तारीख 2 जनवरी, 2017 के आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप न करके, संवैधानिक न्यायालय निजी प्रत्यर्थी द्वारा अवैधता को कायम रखने और संविधान का अतिक्रमण करने को मंजूर करके अपने कर्तव्य में असफल हो जाएगा ।"

17. माननीय उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, यदि वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार किया जाए, तो यह स्पष्ट है कि याची के पिता 1968 में महाराष्ट्र से तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य में चले गए थे; उन्हें दैनिक मजदूरी पर रोजागर मिला और बाद में उनकी सेवाएं नियमित कर दी गई । इसलिए, याची के पिता को 'अस्वैच्छिक प्रवासी' नहीं कहा जा सकता । याची के पिता का मूल राज्य महाराष्ट्र राज्य है । माननीय उच्चतम न्यायालय और बॉम्बे उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ के उपरोक्त आदेश में, याची को प्रवासी राज्य अर्थात् छत्तीसगढ़ राज्य में आरक्षण का लाभ नहीं मिल सकता है ।

18. याची के विद्वान् काउंसेल का यह निवेदन है कि चूंकि याची के पिता तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य में कार्यरत थे; मध्य प्रदेश राज्य के पुनर्गठन और छत्तीसगढ़ राज्य के गठन के पश्चात् ही याची के पिता छत्तीसगढ़ के क्षेत्र में आए, इसलिए याची आरक्षण के हकदार हैं, भी त्रुटिपूर्ण है । याची कि पिता 1950 से पूर्व अर्थात् राष्ट्रपति के आदेश

जारी होने की तारीख से पूर्ववर्ती मध्य प्रदेश राज्य के स्थाई निवासी नहीं थे । याची का पक्षकथन यह है कि याची के पिता 1968 में महाराष्ट्र से पूर्ववर्ती मध्य प्रदेश राज्य में आए थे । इसलिए, याची को आरक्षण का लाभ राज्य सरकार/नगर निगम या अन्य वैधानिक निकायों के कर्मचारियों की तरह नहीं दिया जा सकता है, क्योंकि उन्हें अनैच्छिक प्रवासी माना जाता है क्योंकि वे कैडर वितरण के आधार पर छत्तीसगढ़ राज्य में आए थे । इसलिए, इस न्यायालय की राय में, याचिका किसी भी सार से रहित होने के कारण खारिज किए जाने योग्य है ।

19. याची का पक्षकथन यह भी नहीं है कि याची जाति सत्यापन की कोई कार्रवाई करने से पूर्व लंबे समय तक सेवा में बने रहे, बल्कि यह ऐसा मामला है जहां चयन सूची में याची का नाम आने के तुरंत पश्चात्, याची और अन्य को समिति से अपने सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र को सत्यापित करने के लिए कहा गया और उसके तुरंत बाद यह रिपोर्ट दी गई कि याची वर्ष 2009 में ही प्रमाणपत्र के आधार पर आरक्षण के लाभ के लिए हकदार नहीं है ।

20. जहां तक **पंकज कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय का संबंध है, जिस पर याची के विद्वान् काउंसेल ने अवबंल लिया है, तथ्यों के आधार पर यह निर्णय पूर्ण रूप से भिन्न होने के कारण याची के लिए कोई मदद नहीं करता है । उस मामले में, अपीलार्थी के पिता मूल रूप से बिहार राज्य के पटना जिले के थे । अपीलार्थी का जन्म हजारीबाग में हुआ था, जहां उसके पिता रहते थे और जो पूर्ववर्ती बिहार राज्य का हिस्सा था । लेकिन, बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 के लागू होने के पश्चात्, जिला हजारीबाग झारखंड के उत्तराधिकारी राज्य का हिस्सा बन गया और उस मामले के तथ्यों में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के सदस्यों के एक राज्य से दूसरे राज्य में स्वैच्छिक और अस्वैच्छिक प्रवास के विवाद्यक पर विचार किया और सावर्जनिक रोजगार सहित सभी व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उत्तराधिकारी राज्य में अपीलार्थी को विशेषाधिकारों और लाभों सहित आरक्षण का लाभ संरक्षित किया । इसलिए, इस न्यायालय की राय में,

याची को उसके द्वारा लिए गए निर्णय के अवलंब का कोई लाभ नहीं दिया जा सकता है ।

21. जहां तक कि याची के विद्वान् काउंसेल के इस निवेदन का सवाल है कि प्रत्यर्थी सं. 2 ने एक ओर याची का जाति प्रमाणपत्र अपास्त कर दिया और दूसरी ओर उसे तारीख 22 फरवरी, 1985 के परिपत्र के आधार पर जाति प्रमाणपत्र के लिए आवेदन करने का निदेश दिया, ऊपर निर्दिष्ट परिपत्र भारत सरकार द्वारा जारी किया गया है, जो प्रवासियों को उस राज्य से सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र प्राप्त करने में होने वाली कठिनाई से बचाता है, जहां से वे प्रवास कर रहे हैं । छत्तीसगढ़ अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग (सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र का विनियमन) नियम, 2013 (संक्षेप में 2013 के नियम') के नियम 11 में दूसरे राज्य से छत्तीसगढ़ राज्य में प्रवास करने वाले आवेदकों को प्ररूप-सी में प्रमाणपत्र जारी करने का भी उपबंध है । इसलिए, याची 2013 के नियम 11 के अधीन आवेदन कर सकता है और फॉर्म-सी में सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र प्राप्त कर सकता है । यदि याची द्वारा नियम, 2013 के नियम 11 के अधीन ऐसा कोई आवेदन प्रस्तुत किया जाता है, तो सक्षम प्राधिकारी उस नियम पर 2013 तथा भारत सरकार एवं छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा जारी परिपत्रों/ अधिसूचनाओं के अनुसार कड़ाई से विचार कर सकेगा ।

22. तद्नुसार रिट याचिका खारिज की जाती है ।

रिट याचिका खारिज की जाती है ।

अर्म./क.

(2022) 1 सि. नि. प. 633 **दिल्ली**

ध्रुव कृष्ण मग्गू

बनाम

भारत संघ और अन्य

(2020 की रिट याचिका सं. 5454)

तारीख 8 जनवरी, 2021

न्यायमूर्ति मनमोहन और न्यायमूर्ति संजीव नरुला

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226, 246, 246क और 20 [सपठित केन्द्रीय माल और सेवा कर अधिनियम, 2017 की धारा 69, 73, 74 और 132 तथा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 का अध्याय-12] – रिट याचिका – केन्द्रीय संसद् को माल और सेवा कर लगाने के संबंध में विधान बनाने की शक्ति – विनियमन – अधिनियम की धारा 69 और 132 को इस आधार पर चुनौती देना कि वे मनमाना और अनुचित है – यदि केन्द्रीय संसद् अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए कोई अधिनियम बनाती है तो उसे तभी मनमाना और अनुचित कहा जा सकता है जब वह संविधान के अधिकारातीत है और संवैधानिक मापदण्डों के अनुसरण में नहीं है और यदि उस अधिनियम का दुरुपयोग करते हुए, किसी व्यक्ति के विरुद्ध बिना किसी आधार के प्रपीड़क कार्यवाही की जाती है तो वह खण्डनीय है और विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं होगा ।

वर्तमान मामले में, 2020की सिविल प्रकीर्ण सं. 32276 को याची द्वारा 2020 की रिट याचिका सं. 10130 में अंतरिम संरक्षण की ईप्सा करते हुए फाइल किया गया है, 2020 की सिविल प्रकीर्ण सं. 28105 को प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 के द्वारा 2020 की सिविल प्रकीर्ण सं. 5454 में पारित तारीख 20 अगस्त, 2020 के आदेश द्वारा मंजूर किए गए अंतरिम संरक्षण को वातिल करने के लिए फाइल किया गया है ।यह इंगित करना उचित है कि जब 2020 की रिट याचिका (सिविल) सं. 5454 को पहली बार इस न्यायालय के समक्ष तारीख 20 अगस्त, 2020 को सूचीबद्ध किया गया था जिसमें श्री चेतन शर्मा विद्वान् अतिरिक्त

सॉलिसिटर जनरल ने निष्पक्ष रूप से कहा था कि इसी तरह के मामले में उच्चतम न्यायालय ने निदेश दिया था कि इसमें याची के विरुद्ध कोई दंडात्मक कार्रवाई नहीं की जाए । उक्त कथन के आधार पर, इस न्यायालय ने याची को अंतरिम संरक्षण मंजूर किया था । 2020 की रिट याचिका (सिविल) सं. 5454 में न्यायालय के द्वारा पारित किया तारीख 20 अगस्त, 2020 के आदेश के संबंधित भाग को इसमें नीचे उल्लिखित किया गया है – "वर्तमान रिट याचिका में यह घोषणा करने की ईप्सा की गई है कि सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 69 और 132 मनमाना और अनुचित हैं और संसद् की विधायी क्षमता से परे होने के कारण संविधान के अधिकारातीत हैं । श्री चेतन शर्मा, श्री अतिरिक्त महासालिसिटर जनरल स्पष्ट रूप से कहता है कि उच्चतम न्यायालय ने इसी तरह के मामले में 2020 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 184 में नोटिस जारी किया है और निदेश दिया है कि इसमें याची के विरुद्ध कोई दंडात्मक कार्रवाई नहीं की जाए । पूर्वोक्त आदेश को ध्यान में रखते हुए, यह निदेश दिया जाता है कि, अगले आदेश तक, वर्तमान मामले में याची की जमानत को रद्द नहीं किया जाएगा ।" तत्पश्चात्, प्रत्यर्थियों द्वारा अंतरिम संरक्षण को समाप्त करने के लिए इस आधार पर एक आवेदन फाइल किए जाने पर कि 2020 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 184 में अंतरिम आदेश को उच्चतम न्यायालय द्वारा 31 अगस्त, 2020 के आदेश द्वारा समाप्त कर दिया गया था । इस न्यायालय ने 6 नवंबर, 2020 के आदेश के माध्यम से नोटिस जारी किया था । इसके अलावा, 2020 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 10130 में याची ने अंतरिम आवेदन अर्थात् 2020की सिविल प्रकीर्ण सं. 32276 में प्रत्यर्थी सं. 2 एवं 3 द्वारा फाइल प्रति-शपथपत्र के प्रत्युत्तर को अभिलेख पर लाने की अनुमति के लिए सिविल प्रकीर्ण 2021 की सिविल प्रकीर्ण सं. 344 फाइल किया था । उपरोक्त आवेदन को तारीख 6 जनवरी, 2021 के आदेश के माध्यम से अनुमति दी गई थी और प्रत्युत्तर को ध्यान में रखते हुए मामले की फिर से सुनवाई की गई थी ।न्यायालय द्वारा रिट याचिकाओं/आवेदनों का भागतः निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – जहां तक रिट याचिका (सिविल) सं. 10130/2020 में

उठाए गए अधिकारिता के मुद्दे का संबंध है, यह न्यायालय प्रथमदृष्ट्या विद्वान् अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल के निवेदनों में बल पाता है कि केंद्रीय कर अधिकारियों को सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 6 के अधीन राज्य कर प्रशासन को सौंपें गए करदाताओं के खिलाफ बौद्धिक – आधारित प्रवर्तन कार्रवाई करने के लिए सशक्त किया गया है । इस अंतरिम चरण में, हम परिसर की तलाशी की कार्रवाई को इस आधार पर दूषित नहीं कर सकते कि यह अभिकथन कि तलाशी लेने वाला अधिकारी अक्षम था । विद्वान् अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल ने समझाया है कि याचिकाकर्ता का पता सी.जी.ए.टी. – दिल्ली उत्तर की अधिकारिता में आता है, इसलिए अतिरिक्त आयुक्त, सी.जी.ए.टी. – दिल्ली पूर्व ने तारीख 22 नवंबर, 2020 के पत्र के माध्यम से अतिरिक्त आयुक्त, सी.जी.ए.टी. – दिल्ली उत्तर से सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 67(2) के अधीन तलाशी प्राधिकार जारी करने और उक्त पते पर तलाशी के उद्देश्य से सी.जी.ए.टी. – दिल्ली उत्तर के एक निरीक्षक को नियुक्त करने का अनुरोध किया था । निश्चित रूप से इस दलील को याचिकाकर्ता द्वारा विवादित किया गया तथा अन्तिम चरण में, इसकी गहराई से जांच की जानी चाहिए, लेकिन अभी के लिए, हम अधिकारिता के बिना तलाशी की कार्रवाई नहीं चाहते हैं । प्रथमदृष्ट्या प्रक्रम पर, जो आशंकाएं हैं वह यह है कि प्रत्यर्थियों का पक्षकथन है कि एक कर संग्रह तंत्र को एक संवितरण तंत्र में परिवर्तित किया गया है जैसे कि यह एक आर्थिक सहायता योजना थी । वर्तमान मामलों के तथ्यों की ओर ध्यान देते हुए, रिट याचिका (सि.) सं. 5454/2020 में रोक हटाने के आवेदन में, प्रत्यर्थियों द्वारा निम्नलिखित प्रकथन किए गए हैं – "(iii) उक्त 4 फर्मों के स्वत्वधारियों के बयान दर्ज किए गए थे । अपने बयानों में, स्वत्वधारियों अर्थात् मैसर्स मोनल एंटरप्राइजेज के दीपक कुमार मिश्रा, मैसर्स माइक्रा ओवरसीज के श्री संतोष प्रसाद और मैसर्स गणेशी आईएनसी. के श्री मनोज कुमार ने कहा कि उन्हें इन फर्मों के बारे में कुछ भी पता नहीं है, उन्होंने केवल श्री मुकेश कुमार को अपनी आईडी जैसे पैन कार्ड और आधार कार्ड प्रदान किए हैं और बहुत सारे कागजात/दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किए हैं । यह कि जांच में अब तक कुल 23 फर्जी/नकली फर्मों का पता चला है जो मजदूरों, ड्राइवरों,

रसोइयों, गली में फेरीवालों आदि के नाम पर खोले गए हैं । इन 23 फर्मों ने 63 करोड़ रुपए से अधिक के फर्जी आईजी.एस.टी. रिफंड का दावा किया है । उपरोक्त फर्मों के संबंध में तलाशी/सत्यापन भी किए गए थे और सभी उक्त फर्मों को अस्तित्वहीन/गैर-कार्यात्मक पाया गया है । (v) जांच में आगे पता चला कि फर्मों के स्वत्वधारी छद्म व्यक्ति हैं जिन्हें माल के निर्यात पर धोखाधड़ी वाले आईजी.एस.टी. रिफंड का लाभ उठाने के लिए विभिन्न दस्तावेजों/कागजातों पर हस्ताक्षर करने के लिए लुभाया/ मजबूर किया गया है । यह खुलासा हुआ है कि श्री दीपक कुमार मिश्रा, जिसे मैसर्स मोनल एंटप्राइजेज के स्वत्वधारी और लाभार्थी के रूप में दर्शाया गया है, वास्तव में हरियाणा के गुरूग्राम में मैसर्स डुडलीज किचन में एक रसोइया के रूप में कार्यरत था, जिसकी पुष्टि, मैसर्स डुडलीज किचन के प्रबंधक ने अपने तारीख 15 मई, 2019 के पत्र के माध्यम से की है । यह कि, वर्तमान मामले में, श्री मनोज कुमार और श्री संतोष प्रसाद के साक्ष्य तारीख 27 अगस्त, 2019 को तथा श्री ज्ञानेंद्र कुमार (मैसर्स क्यूबो एंटरप्राइजेज के स्वत्वधारी) का साक्ष्य तारीख 4 सितंबर, 2019 को दर्ज किया गया था, जिसमें उन्होनें स्पष्ट रूप से बताया है कि श्री ध्रुव मग्गू आईजी.एस.टी. रिफंड रैकेट के धोखाधड़ी वाले लाभ में श्री रमेश वढ़ेरा जो इस रैकेट का मुख्य मास्टरमाइंड है, उसके पिता श्री संजीव मग्गू और उसका भाई श्री अखिल कृष्ण मग्गू के साथ सक्रिय रूप से शामिल है । यहां यह उल्लेख करना उचित है कि एस. रमेश वढ़ेरा के खिलाफ डीआरआई/सीमा शुल्क के कई पुराने मामले हैं और वह एक आदतन अपराधी है और उसने प्रत्यर्थी के पिता श्री संजीव मग्गू के साथ पहले भी आर्थिक अपराध के इसी तरह के रैकेट को अंजाम दिया है, जिसमें सरकारी राजकोष को धोखा देने के उद्देश्य से भोले-भाले व्यक्तियों के नाम पर स्वत्वधारी/साझेदारी फर्म बनाई गई थी.....। सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 70 सहपठित आईजी.एस.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 20 के अंतर्गत श्री ध्रुव मग्गू का स्वैच्छिक साक्ष्य दर्ज किया गया था, जिसमें उसने स्वीकार किया है कि उसका भाई श्री अखिल मग्गू और वह व्यापारिक भागीदार हैं, यह कि उन्होंने विभिन्न गरीब व्यक्तियों के नाम पर कई फर्म और उनके बैंक खाते खोले हैं जिनकी आईडी श्री मुकेश कुमार के माध्यम से हासिल की

गई हैं, जो उनके प्रबंधक हैं, भुगतान के आधार पर, जी.एस.टी. पंजीकरण प्रक्रिया और प्रलेखीकरण उनके तीन भागीदारों द्वारा श्री मुकेश कुमार के सहयोग से संभाला जाता है । सामानांतर रूप से, इन फर्मों के संबंध में डीजीएफटी से आईईसी भी प्राप्त किया जाता है । फिर वे कचरे या निम्न गुणवत्ता वाले सामान की व्यवस्था करते हैं और उपरोक्त निर्मित फर्मों के नाम पर उसी का निर्यात करते हैं, सामानांतर रूप से, वे इन फर्मों के जी.एस.टी. रिटर्न दाखिल करते हैं और इन फर्मों से आईटीसी द्वारा जी.एस.टी. देयता का भुगतान करते हैं । फिर वे सरकार से नकली आईटीसी द्वारा निर्यात पर भुगतान किए गए जी.एस.टी. के संबध में आईजी.एस.टी. रिफंड का दावा करते हैं । फिर निर्यातक फर्मों के खाते में प्राप्त आईजी.एस.टी. रिफंड राशि उसके भागीदारों द्वारा अन्य खातों में स्थानांतरित कर दी जाती है और फिर इन अन्य खातों से नकदी के रूप में पैसा निकाल लिया जाता है । इस प्रकार निकाली गई नकदी उसके भागीदारों द्वारा प्राप्त की जाती है और फिर निर्यात की पूरी प्रक्रिया के दौरान कमीशन या अन्य खर्चों को समायोजित करने के बाद भागीदारों के बीच वितरित की जाती है । यह कि वह बीजक जारी करने के बाद, वह उन्हें या तो अपने भाई श्री अखिल मग्गू या अपने पिता श्री संजीव मग्गू या श्री रमेश वढ़ेरा को सौंप देता था, जो फिर उन्हीं बीजकों का उपयोग करके निर्यात से संबंधित प्रलेखीकरण औपचारिकताओं को पूर्ण करते हैं । "इसी प्रकार, रिट याचिका (सिविल) सं. 10130/2020 में याचियों के खिलाफ गंभीर आरोप लगाए गए हैं । प्रति-शपथपत्र का प्रासंगिक भाग अधोलिखित रूप से उद्धृत है – सिस्टम से प्राप्त डाटा के अवलोकन पर पाया गया है कि मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड ने 196.28 करोड़ रुपए के बीजक जुटाए थे जिसमें वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड को 5.88 करोड़ रुपए जिसमें एन.एस. सॉफ्टवेयर को 46.72 लाख रुपए की जी.एस.टी. शामिल थी जो कुल मिलाकर वस्तुओं का मूल्य 211.86 करोड़ रुपए का है तथा 6.35 करोड़ रुपए के बीजक जुटाए थे जिसमें मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड ने 211.81 करोड़ रुपए के बीजक जुटाए थे जिसमें मैसर्स के.पी. एंड संस को 6.35 करोड़ रुपए की जी.एस.टी. शामिल है और मैसर्स के.पी. एंड संस ने 211.89 करोड़ रुपए के बीजक जुटाए थे जिसमें

मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड को 6.35 करोड़ रुपए की जी.एस.टी. शामिल है जिससे पूरा चक्र पूर्ण हो जाता है । इन पक्षों के बीच उपरोक्त लेन-देन केवल पांच महीनों में हुआ है अर्थात् जनवरी, 2018, फरवरी, 2018, मार्च, 2018, फरवरी, 2019 और मार्च, 2019 । साथ ही, यह पाया गया कि इन सभी कंपनियों ने एक ही दिन अपने बीच बीजक जुटाए हैं । उदाहरण के लिए, तारीख 30 जनवरी, 2018 को, मैसर्स के.पी. एंड संस ने 2,70,000/- रुपए का एक बिक्री बीजक जुटाया जिसमें मैसर्स राजदरबार कमेडिटीज प्राइवेट लिमिटेड को 8,10,000/- रुपए की जी.एस.टी. शामिल है, मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड को 8,09,730/- रुपए का जी.एस.टी. शामिल है, मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड ने तब 2,69,95,500/- रुपए का बिक्री बीजक तारीख 30 जनवरी, 2018 जुटाया जिसमें 8,09,865/- रुपए का जी.एस.टी. शामिल है । इन सभी पक्षकारगण द्वारा आपस में उठाए गए सभी बीजकों हेतु इस प्रथा का पालन किया गया है । यह कि तारीख 30 जनवरी, 2018 को, पहली बार जब मैसर्स के.पी. एंड संस ने मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड के लिए जी.एस.टी.आर-2ए के अनुसार 4.5 करोड़ रुपए के स्वर्ण सर्राफा बाजार के लिए बिक्री बीजक तैयार किया था तब उनके पास केवल 2.95 करोड़ रुपए मूल्य के स्वर्ण सर्राफा बाजार के स्टॉक में थे । इसलिए, केवल 2.95 करोड़ रुपए मूल्य के स्वर्ण सर्राफा बाजार के स्टॉक के साथ, मैसर्स के. पी. एंड संस ने मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड के लिए 211.89 करोड़ रुपए के बिक्री बीजक जुटाए थे और मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड से कुल 211.81 करोड़ रुपए के स्वर्ण बुलियन खरीदे । उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि इन उपरोक्त संस्थाओं द्वारा एक दूसरे के साथ माल का व्यापार किया जा रहा था और इन फर्मों द्वारा सभी जी.एस.टी. भुगतान आईटीसी के माध्यम से एक-दूसरे को किए जाते रहे । इसके अलावा, इन फर्मों के जी.एस.टी.आर-2ए के विश्लेषण से पाया गया है कि उपरोक्त लेन-देन को छोड़कर उपरोक्त में से किसी भी फर्म ने न तो स्थानीय रूप से और न ही आयत द्वारा 211 करोड़ रुपए का सोना खरीदा है । उपर्युक्त सभी स्थानों पर तारीख 23 नवंबर, 2020 को तलाशी ली गई और श्री वासुदेव गर्ग, मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज

प्राइवेट लिमिटेड के निदेशक का बयान मौके पर दर्ज किया गया । श्री वासुदेव गर्ग ने सूचित किया कि मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड, मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड और मैसर्स एन. एस. सॉफ्टवेयर सभी राजदरबार समूह की फर्में हैं । उसने आगे कहा कि माल अर्थात् मैसर्स के.पी. एंड संस, मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड, मैसर्स एन.एस. सॉफ्टवेयर और मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड के बीच किए गए व्यापारिक लेन-देन में शामिल स्वर्ण की सर्राफा बाजार में कोई आपूर्ति नहीं हुई थी । उसने अपनी गलती मानी और डीआरसी-3 चालानों के माध्यम से अब तक तारीख 24 नवंबर, 2020, 1 जनवरी, 2020, 3 दिसंबर, 2020, और 8 दिसंबर, 2020 को 4.5 करोड़ रुपए बतौर जी.एस.टी. जमा किए । डीआईएन सं. 20201151 जेडके 000044254ए के अंतर्गत जारी समन के जवाब में तारीख 26 नवंबर, 2020 को अभिलिखित श्री गौरव अग्रवाल, मैसर्स के.पी. एंड संस के स्वत्वधारी का साक्ष्य भी दर्ज किया गया था । श्री गौरव अग्रवाल ने स्वेच्छा से दर्ज किए गए अपने साक्ष्य में यह भी कहा कि माल अर्थात् स्वर्ण सर्राफा बाजार में कभी परिवर्तन नहीं किया क्योंकि वे मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड से समान मात्रा में गोल्ड बुलियन खरीदते थे जो वे मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड को उसी दिन बेचते थे । श्री गौरव अग्रवाल ने अपनी गलती स्वीकार की तथा दलील दी कि वह लागू ब्याज और जुर्माने के साथ किसी भी बकाया या देनदारियों का भुगतान करने के लिए तैयार हैं । निष्कर्षतः, प्रथमदृष्ट्या प्रक्रम से जो उद्भूत होता है वह यह है कि यह प्रत्यर्थी का पक्षकथन है कि एक कर संग्रह तंत्र को एक संवितरण तंत्र में परिवर्तित कर दिया गया है जैसे कि यह कोई आर्थिक सहायता सब्सिडी योजना थी । गंभीर आरोपों को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय इस प्रक्रम पर और रिट कार्यवाहियों में भी हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं समझता है । उसी समय पर, निर्दोष व्यक्तियों को गिरफ्तार या प्रताड़ित नहीं किया जा सकता है । परिणामत: पक्षकारों को संवैधानिक उपचारों का लाभ उठाने की स्वतंत्रता के साथ अंतरिम संरक्षण हेतु आवेदनों को खारिज किया जाता है । यह सुस्थिर विधि है कि यद्यपि संवैधानिक न्यायालयों की शक्तियां व्यापक और विवेकाधीन हैं, फिर भी ऐसी

शक्तियों के प्रयोग में कुछ बंधन मौजूद हैं । इस तथ्य के बावजूद कि उत्तर प्रदेश में गिरफ्तारी-पूर्व जमानत के सम्बन्ध में उपबंध इसे का विनिर्दिष्टतः लोप है, रिट अधिकारिता के अधीन शक्ति का प्रयोग अत्यंत संयम से किया जाना चाहिए । इस न्यायालय का मत है कि यह आरोप कि कर संग्रह तंत्र को संवितरण तंत्र में परिवर्तित कर दिया गया है, में निश्चित रूप से जांच की आवश्यकता है । तद्नुसार, यह न्यायालय इस प्रक्रम पर और वह भी रिट कार्यवाही में जांच में हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं समझता है । साथ ही, निर्दोष व्यक्तियों को गिरफ्तार या परेशान नहीं किया जा सकता है । इस न्यायालय को कोई संदेह नहीं है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने जमानत या रिमांड या जमानत रद्द करने पर विचार करते समय 'गेहूं को भूसे से अलग करेगा और यह सुनिश्चित करेगा कि किसी निर्दोष व्यक्ति जिसके खिलाफ निराधार आरोप लगाए गए हैं, उसे पुलिस/ न्यायिक हिरासत में न भेजा जाए । (पैरा 50, 51, 52, 53, 54 और 55)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 2 एस. सी. सी. 599 : **यू.ओ.आई.** बनाम **मोहित मिनरल्स** ;	15
[2019]	2019 की आर/विशेष सिविल आवेदन सं. 13679 : **विमल यशवंतगिरी गोस्वामी** बनाम **गुजरात राज्य** ;	42
[2019]	2019 की एस.एल.पी. (दांडिक) सं. 4322-4324 : **भारत संघ** बनाम **सपना जैन और अन्य** ;	47,48
[2018]	2018 की रिट याचिका (सि.) सं. 2658 : **गौतम खैतान** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	43
[2014]	(2014) 4 एस. सी. सी. 453 : **हेमा मिश्रा** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	54
[2013]	(2013) 1 एस. सी. सी. 745 : **नमित शर्मा** बनाम **भारत संघ** ;	30

[1994] (1994) 3 एस. सी. सी. 440 :
प्रवर्तन निदेशालय बनाम **दीपक महाजन** ; 17,44,46

[1994] (1994) 3 एस. सी. सी. 569 :
करतार सिंह बनाम **पंजाब राज्य** ; 40

[1975] [1975] 1 एस. सी. आर. 1 :
मगनलाल छगनलाल (प्रा.) लिमिटेड बनाम **ग्रेटर बॉम्बे नगर निगम और अन्य** ; 31

[1947] ए. आई. आर. 1947 पी. सी. 60 :
प्रफुल्ल कुमार बनाम **बैंक ऑफ कॉमर्स** ; 36

[1940] [1940] एफ. सी. आर. 188 :
सुब्रमण्यम् चेट्टियार बनाम **मुत्तुस्वामी गुन्दन**। 37

रिट (सिविल) अधिकारिता : 2020 की रिट याचिका सं. 5454 और 2020 की रिट याचिका सं. 10130.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री जगमोहन बंसल, अधिवक्ता के साथ अखिल कृष्ण मग्गू, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री एस.वी. राजू, एएसजी. के साथ रवि प्रकाश, आदित्य शेखर, शहान उल्ला, फरमान अली, गुन्टुर प्रमोद कुमार, अन्नाम वेंकटेश, सुश्री सायरिका एस. राजू, सूर्या आर. राय, सुश्री जियल शाह, अधिवक्तागण भारत संघ की ओर से

प्रत्यर्थी सं. 4/डीजीजीआई की ओर से सर्वश्री चेतन शर्मा, एएसजी के साथ अक्षय गंडोक और सहज गर्ग, अधिवक्तागण

2020 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 10130

याचियों की ओर से श्री जे. के. मित्तल,अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री एस.वी. राजू, एएसजी. के साथ रवि प्रकाश, आदित्य शेखर, शहान उल्ला, फरमान अली, गुन्टुर प्रमोद कुमार, अन्नाम वेंकटेश, सुश्री सायरिका एस. राजू, सूर्या आर. राय, सुश्री जियल शाह, अधिवक्तागण, प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मनमोहन ने दिया ।

न्या. मनमोहन – 2020 की सिविल प्रकीर्ण सं. 32276 को याची द्वारा 2020 की रिट याचिका सं. 10130 में अंतरिम संरक्षण की ईप्सा करते हुए फाइल किया गया है, 2020 की सिविल प्रकीर्ण सं. 28105 को प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 के द्वारा 2020 की सिविल प्रकीर्ण सं. 5454 में पारित तारीख 20 अगस्त, 2020 के आदेश द्वारा मंजूर किए गए अंतरिम संरक्षण को वातिल करने के लिए फाइल किया गया है ।

2. यह इंगित करना उचित है कि जब 2020 की रिट याचिका (सिविल) सं. 5454 को पहली बार इस न्यायालय के समक्ष तारीख 20 अगस्त, 2020 को सूचीबद्ध किया गया था जिसमें श्री चेतन शर्मा विद्वान् अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल ने निष्पक्ष रूप से कहा था कि इसी तरह के मामले में उच्चतम न्यायालय ने निदेश दिया था कि इसमें याची के विरुद्ध कोई दंडात्मक कार्रवाई नहीं की जाए । उक्त कथन के आधार पर, इस न्यायालय ने याची को अंतरिम संरक्षण मंजूर किया था । 2020 की रिट याचिका (सिविल) सं. 5454 में न्यायालय के द्वारा पारित किया तारीख 20 अगस्त, 2020 के आदेश के संबंधित भाग को इसमें नीचे उल्लिखित किया गया है :–

> "वर्तमान रिट याचिका में यह घोषणा करने की ईप्सा की गई है कि सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 69 और 132 मनमाना और अनुचित हैं और संसद् की विधायी क्षमता से परे होने के कारण संविधान के अधिकारातीत हैं ।

*** *** ***

श्री चेतन शर्मा, श्री अतिरिक्त महासालिसिटर जनरल स्पष्ट रूप से कहता है कि उच्चतम न्यायालय ने इसी तरह के मामले में 2020 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 184 में नोटिस जारी किया है और निदेश दिया है कि इसमें याची के विरुद्ध कोई दंडात्मक कार्रवाई नहीं की जाए ।

पूर्वोक्त आदेश को ध्यान में रखते हुए यह निदेश दिया जाता है कि, अगले आदेश तक, वर्तमान मामले में याची की जमानत को रद्द नहीं किया जाएगा ।"

3. तत्पश्चात्, प्रत्यर्थियों द्वारा अंतरिम संरक्षण को समाप्त करने के लिए इस आधार पर एक आवेदन फाइल किए जाने पर कि 2020 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 184 में अंतरिम आदेश को उच्चतम न्यायालय द्वारा 31 अगस्त, 2020 के आदेश द्वारा समाप्त कर दिया गया था । इस न्यायालय ने 6 नवंबर, 2020 के आदेश के माध्यम से नोटिस जारी किया था ।

4. यह न्यायालय इस आदेश के माध्यम से संबंधित रिट याचिकाओं में दोनों आवेदनों में अंतरिम संरक्षण के सम्बन्ध में सामान्य विवाद्यकों का निर्णय कर रहा है ।

5. इसके अलावा, 2020 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 10130 में याची ने अंतरिम आवेदन अर्थात् 2020की सिविल प्रकीर्ण सं. 32276 में प्रत्यर्थी सं. 2 एवं 3 द्वारा फाइल प्रति-शपथपत्र के प्रत्युत्तर को अभिलेख पर लाने की अनुमति के लिए सिविल प्रकीर्ण 2021 की सिविल प्रकीर्ण सं. 344 फाइल किया था । उपरोक्त आवेदन को तारीख 6 जनवरी, 2021 के आदेश के माध्यम से अनुमति दी गई थी और प्रत्युत्तर को ध्यान में रखते हुए मामले की फिर से सुनवाई की गई थी ।

याचियों की ओर दलीलें

6. याचियों की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री जनमोहन बंसल और श्री जे.के. मित्तल ने निवेदन किया कि केंद्रीय माल और सेवा कर

अधिनियम, 2017 की धारा 69 और 132 (संक्षिप्त के लिए 'सी.जी.ए.टी. अधिनियम') दांडिक प्रकृति के उपबंध होने के कारण असंवैधानिक हैं, उन्हें भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 246क के अधीन अधिनियमित नहीं किया जा सकता था । उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि गिरफ्तार करने और मुकदमा चलाने की शक्ति, वस्तु और सेवा कर लगाने और एकत्र करने की शक्ति के लिए सहायक और/या आनुषंगिक नहीं है ।

7. उन्होंने आगे दलील दी है कि चूंकि माल और सेवा कर लगाने की शक्ति अनुच्छेद 246-क के अधीन प्रदान की गई है, इसलिए, उसके संबंध में शक्ति का पता अनुच्छेद 246 या सातवीं अनुसूची की किसी भी प्रविष्टि से नहीं लगाया जा सकता है ।

8. वैकल्पिक रूप से, उन्होंने दलील दी है कि सूची 1 की प्रविष्टि 93 केवल सूची 1 के मामलों के संबंध में दांडिक विधि बनाने के लिए संसद् को अधिकारिता प्रदान करती है और सी.जी.एस.टी. में नहीं । इसलिए, उनके अनुसार, धारा 69 और 132 संसद् की विधायी क्षमता से बाहर हैं ।

9. उन्होंने यह भी दलील दी है कि सी.जी.एस.टी. अधिनियम के अधीन निर्धारित प्रक्रिया न्यायसंगत, निष्पक्ष और उचित नहीं है । उसने कथन कियाकि ऐसे कई मामले थे जहां एक निर्धारिती को जांच के प्रारंभिक चरण में हिरासत मेंलिया गया था, लेकिन विभाग बाद में न्यायिक कार्यवाही में अपना मामला साबित करने में विफल रहा था और इस प्रक्रिया में, निर्धारिती को गिरफ्तारी के कारण अपूरणीय क्षति हुई थी । उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि वर्तमान मामलों में,याचियों को प्रत्यर्थियों द्वारा किसी भी अदत्त कर, अल्प भुगतान कर, या गलत वापसी या जहां इनपुट टैक्स क्रेडिट का गलत तरीके से लाभ उठाया गया या उपयोग किया गया हो, के लिए सी.जी.एस.टी. अधिनियम की धारा 73 या धारा 74 के अधीन कोई कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया गया था ।

10. उन्होंने कथन किया कि प्रत्यर्थियों ने गलती से दावा किया है

कि चूंकि वे पुलिस अधिकारी नहीं हैं और सी.जी.एस.टी. अधिनियम एक विशेष अधिनियम है जिसमें गिरफ्तारी, तलाशी और जब्ती आदि के उपबंध हैं । प्रत्यर्थी दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (दं. प्र. सं. संक्षिप्त में) के किसी भी उपबंध से बंधे नहीं हैं जो जांच शुरू करने, केस डायरी बनाए रखने आदि को नियंत्रित करता है । उन्होंने दलील दी कि सी.जी.एस.टी. अधिकारियों को किसी अपराध की जांच करते समय पुलिस अधिकारियों के साथ-साथ सिविल न्यायालय की शक्तियांनिहित होने के बावजूद, कार्यवाही को 'जांच' कहा जाता है और तलब किया गया व्यक्ति 'आरोपी' नहीं होता है । उन्होंने बताया कि चूंकि सी.जी.एस.टी. अधिकारी पुलिस अधिकारी नहीं हैं, इसलिए,समन किए गए व्यक्तियों को अनुच्छेद 20 (3) के अधीन कोई संरक्षण उपलब्ध नहीं है – जिससे वे अत्यधिक पूर्वाग्रह का शिकार हो जाते हैं ।

11. याचियों के विद्वान् कांउसेलों ने यह भी दलील दी कि उच्चतम न्यायालय ने कई मामलों में, जहां सी.जी.एस.टी. अधिनियम के अधीन जांच की जा रही थी, में आदेश दिया है कि निर्धारिती के खिलाफ कोई दंडात्मक कदम नहीं उठाए जाएं । अपने दलील के समर्थन में, उन्होंने उच्चतम न्यायालय द्वारा रिट याचिका (दांडिक) सं. 221/2020, श्याम खेमानी बनाम म.प्र. राज्य एवं अन्य, तारीख 31 अगस्त, 2020; रिट याचिका (दांडिक) 118/2019, मुकेश मानकचन्द केसरी बनाम भारत संघ और एक अन्य, तारीख 26 अप्रैल, 2019; रिट याचिका (दांडिक) 212/2019 गजराज सिंह बैद बनाम भारत संघ और अन्य तारीख 9 अगस्त, 2019; रिट याचिका (दांडिक) सं. 336/2018, राधिका अग्रवाल बनाम भारत संघ और अन्य, तारीख 8 जनवरी, 2019; और रिट याचिका (दांडिक) सं. 267/2019, नम्रता जैन और, तारीख 30 सितंबर, 2019 में पारित निर्णयों का अवलंब लिया है ।

12. याची के विद्वान् काउंसेल श्री जे.के मित्तल ने 2020 की रिट याचिका (सिविल) सं. 10130 में एक घोषणा के लिए प्रार्थना की थी कि केंद्रीय कर अधिकारियों को अधिकारिता सौंपा गया था । उन्होंने 2020 की रिट याचिका (सिविल) 10130 में पेपर बुक के पृष्ठ 97 और 98 पर परिपत्र का अवलंब लेकर दलील दी है कि उक्त मामले में जांच करने की अधिकारिता राज्य, दिल्ली ज़ोन, ज़ोन-2, वार्ड-16 में निहित है ।

13. उन्होंने यह भी इंगित किया कि प्रत्यर्थी सं. 1 के द्वारा (रि.या. (सि.) सं. 10130/2020 में) जारी तारीख 19 जून, 2017 की अधिसूचना द्वारा याचिकाकर्ता सं. 1 के लिए आयुक्त क्षेत्राधिकारिता को उत्तर दिल्ली कमिश्नरी के रूप में न कि पूर्व दिल्ली कमिश्नरी के रूप में निर्दिष्ट किया गया था ।

प्रत्यर्थियों की ओर से दलील

14. इसके विपरीत, प्रत्यर्थियों के लिए विद्वान् ए.एस.जी श्री एस.वी. राजू ने निवेदन किया कि अनुच्छेद 246क में माल और सेवा कर के संबंध में विधि बनाने के लिए विशेष उपबंध हैं । उनके अनुसार, धारा 69 और 132 माल और सेवा कर के संबंध में हैं और इस विषय पर विधि बनाने की शक्ति अनुच्छेद 246क द्वारा प्रदान की गई है । उन्होंने जोर देकर कहा कि अनुच्छेद 246क में विषयवस्तु के साथ-साथ संसद् और राज्य विधानसभाओं के बीच शक्तियों का वितरण भी शामिल है । इसलिए, उन्होंने दलील दीकि सातवीं अनुसूची में किसी भी विधायी प्रविष्टि के भीतर सी.जी.एस.टी. अधिनियम के अधीन अपराधों को अधिनियमित करने की शक्ति का स्रोत पता लगाना आवश्यक नहीं था ।

15. वैकल्पिक रूप से, उन्होंने दलील दी कि अनुच्छेद 246 संसद् और राज्य विधानमंडलों के बीच विधि बनाने की शक्ति का वितरण करता है । उन्होंने आगे दलील दीकि अनुच्छेद 246 संसद् या राज्य विधानमंडलों द्वारा बनाए जाने वाले कानूनों की विषयवस्तु की गणना नहीं करता है क्योंकि इन्हें सातवीं अनुसूची की तीन सूचियों में गिना गया है । उन्होंने यह भी दलील दीकि अनुच्छेद 246 में अभिव्यक्ति 'विधि बनाना' संसद् को विधि बनाने की पूर्ण शक्तियां प्रदान करती है और राज्य विधानमंडलों में विषय मामलों के संबंध में अपराधों के संबंध में विधि बनाने की शक्ति शामिल है । अपने अनुरोध के समर्थन में, उन्होंनेउच्चतम न्यायालय के निर्णय **यू. ओ. आई.** बनाम **मोहित मिनरल्स**[1] वाले मामले का अवलंब लिया ।

16. विद्वान् ए.एस.जी. ने दलील दी कि यदि सी.जी.एस.टी.

[1] (2019) 2 एस. सी. सी. 599.

अधिनियम की धारा 69 और 132 को अधिनियमित करने की शक्ति भारत के संविधान के अनुच्छेद 246क द्वारा प्रदान नहीं की गई है तो विधि बनाने की उक्त शक्ति को अनुच्छेद 246(2) के साथ पढ़ी गई सूची ।।। की प्रविष्टि 1 और 2 के आधार पर संसद् को प्रदान की गई समझी जाएगी । उन्होंने इंगित किया कि अपराध के लिए संसद् की शक्ति सूची 1 की प्रविष्टि 93 तक सीमित नहीं है क्योंकि अन्यथा समवर्ती सूची के अधीन किए गए अधिनियमों में कोई अपराध प्रदान नहीं किए जा सकते है ।

17. विद्वान् ए.एस.जी. ने आगे दलील दी कि सी.जी.एस.टी. अधिनियम एक विशेष अधिनियम है और उक्त अधिनियम में इसके विपरीत विशिष्ट उपबंध की अनुपस्थिति में, दं.प्र.सं. में निर्धारित सामान्य उपबंध का पालन करना पड़ता है । अपने अनुरोध के समर्थन में, उसने उच्चतम न्यायालय के **प्रवर्तन निदेशालय** बनाम **दीपक महाजन**[1] वाले मामले का अवलंब लिया ।

18. उन्होंने इंगित किया कि मंजूरी दिए जाने पर, एक सी.जी.एस.टी. अधिकारी द्वारा द.प्र.सं. के अधीन सामान्य दांडिक प्रक्रिया का पालन करके न्यायिक दंडाधिकारी के समक्ष एक दांडिक शिकायत दर्ज की जाती है । उन्होंने द.प्र.सं. के अधीन इस पर जोर दिया । शिकायत करने के तरीके, प्रारूप या पात्र व्यक्ति के संबंध में कोई उपबंध नहीं है । उनके द.प्र.सं. के अधीन इस पर जोर दिया । शिकायत करने के तरीके, प्रारूप या पात्र व्यक्ति के संबंध में कोई प्रावधान नहीं है । उनके अनुसार, सी.जी.एस.टी. अधिनियम के अधीन शिकायत करने के उपबंध की अनुपस्थिति में सी.जी.एस.टी. अधिनियम की धारा 69 और 132 के अधिकारों को चुनौती देने का आधार नहीं हो सकती है ।

19. उन्होंने यह भी कथन किया कि द.प्र.सं. की धारा 190 के अधीन एक दंडाधिकारी किसी शिकायत या पुलिस रिपोर्ट या किसी अपराध के होने के बारे में किसी जानकारी पर अपराध का संज्ञान लेने के लिए सक्षम है । उन्होंने दलील दी कि यदि द.प्र.सं. किसी अपराध का

[1] (1994) 3 एस. सी. सी. 440.

संज्ञान लेने की दंडाधिकारी की शक्ति को सीमित नहीं करता है, ऐसा कोई कारण नहीं है कि आक्षेपित प्रावधानों को शिकायतें दर्ज करने के लिए एक विशिष्ट तरीका प्रदान नहीं करने के लिए अधिकारातीत क्यों ठहराया जा सकता है ।

20. उन्होंने कथन किया कि सी.जी.एस.टी. अधिनियम के अधीन किसी व्यक्ति को केवल तभी गिरफ्तार किया जा सकता है, जब कर चोरी की राशि 2 करोड़ रुपए से अधिक हो । उन्होंने आगे कथन किया कि ऐसे सभी अपराध जिनमें कर चोरी 5 करोड़ और उससे अधिक कर चोरी से जुड़े केवल गंभीर अपराध गैर-जमानतीय और संज्ञेय हैं ।

21. विद्वान् ए.एस.जी. ने कथन किया कि याचिकाकर्ता द्वारा 2020 की रिट याचिका (सि.) 10130 में उठाए गए अधिकारिता का मुद्दा तथ्यों के विपरीत था और कानून में असमर्थनीय था । उन्होंने दलील दी कि सी.जी.एस.टी. अधिनियम की धारा 6(2) के अधीन, केंद्रीय कर के उचित अधिकारी अधिनियम के अधीन कार्यवाही करने के लिए अधिकृत हैं यदि राज्य कर या केंद्र शासित प्रदेश कर के अधिकारियों द्वारा समानांतर कार्यवाही शुरू नहीं की गई हो ।

22. उन्होंने यह इंगित किया कि चूंकि रि. याचिका (सि.) सं. 10130/2020 में याचिकाकर्ता सी.जी.एस.टी. – उत्तरी दिल्ली के अधिकारिता में स्थित था, इसलिए अतिरिक्त आयुक्त, सी.जी.एस.टी. – पूर्वी दिल्ली ने सी.जी.एस.टी. – उत्तरी दिल्ली में अपने समकक्ष से अनुरोध किया था वह सी.जी.एस.टी. – उत्तरी दिल्ली के एक अधिकारी को सी.जी.एस.टी. – पूर्वी दिल्ली के अधिकारियों के साथ उक्त परिसर में तलाशी लेने के लिए तैनात करें । उन्होंने जोर देकर कहा कि 23 नवंबर, 2020 का सर्च वारंट अतिरिक्त आयुक्त, सी.जी.एस.टी. - उत्तरी दिल्ली द्वारा डी.आई.एन. सं. 20201151ZJZI000041414B के द्वारा सी.जी.एस.टी. – उत्तरी दिल्ली के निरीक्षक के नाम पर याचिकाकर्ता के पंजीकृत कार्यालय परिसर की तलाशी लेने के लिए दुकान सं. 313, तीसरी मंजिल, 1170, कुचा महाजनी, चांदनी चौक, दिल्ली-110006 तारीख 23 नवंबर, 2020 पर जारी किया गया था उक्त वारंट तलाशी के दौरान याचिकाकर्ता को भी दिया गया था इसलिए, उनके अनुसार, रिट याचिका

(सि.) सं. 1000130/2020 में याचिकाकर्ता का दावा कि गैर-न्यायिक अधिकारियों द्वारा तलाशी ली गई थी, पूरी तरह से गलत था ।

23. उन्होंने जोर देकर कहा कि वर्तमान मामलों में कई गैर-कार्यात्मक और फर्जी फर्म शामिल हैं जिन्होंने धोखाधड़ी से आई.जी.एस.टी. रिफंड और/या आई.टी.सी. क्रेडिट का लाभ उठाया था और भारत सरकार को पर्याप्त नुकसान पहुंचाया था । उन्होंने कथन किया कि अब तक की गई जांच के अनुसार, रिट याचिका (सिविल) 5454/2020 के मामले में धोखाधड़ी पूर्ण आई.जी.एस.टी. रिफंड 63 करोड़ रुपए से अधिक था और रिट याचिका (सिविल) 10130/2020 के मामले में दावा किया गया धोखाधड़ी वाला आई.टी.सी. 6.35 करोड़ रुपए से अधिक था ।उन्होंने आगे कथन किया कि रिट याचिका (सिविल) 10130/2020 में जांच से पता चला है कि उसमें याचिकाकर्ता ने 211.89 करोड़ रुपये के बिक्री का बिल बनाया है जबकि केवल 2.95 करोड़ रुपए की कीमत के स्टॉक थे जो इंगित करता है कि याचिकाकर्ता धोखाधड़ी वाले बिल बढ़ाकर सर्कुलर ट्रेडिंग में लिप्त रहा है । उक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, उन्होंने प्रार्थना की कि याचियों को कोई अंतरिम संरक्षण नहीं दी जाए ।

2020 की रिट याचिका (सिविल) सं. 10130 में प्रत्युत्तर निवेदन

24. याचिकाकर्ता के विद्वान् काउंसेल श्री जे.के. मित्तल ने दलील दी कि यह एक स्वीकृत तथ्य है कि याचिकाकर्ता सी.जी.एस.टी. – उत्तरी दिल्ली के क्षेत्रीय अधिकारिता के अधीन आता है और सी.जी.एस.टी. – पूर्वी दिल्ली के अधिकारीगण याचिकाकर्ता के परिसर पर अधिकारिता का प्रयोग नहीं कर सकते हैं । श्री मित्तल ने आग्रह किया कि जब सी.जी.एस.टी. – उत्तरी दिल्ली द्वारा उस प्रभाग के एक अधिकारी को तलाशी प्राधिकार जारी किया गया था, तो सी.जी.एस.टी. – पूर्वी दिल्ली से संबंधित अधिकारी के लिए याचिकाकर्ता के परिसर में वास्तविक तलाशी लेने की अनुमति नहीं थी, वह भी सी.जी.एस.टी. – उत्तरी दिल्ली के किसी अधिकारी की अनुपस्थिति में । इसके अलावा, श्री मित्तल द्वारा यह दलील दी गई थी कि तलाशी प्राधिकार केवल याचिकाकर्ता के कार्यालय परिसर के लिए था, जबकि सी.जी.एस.टी. – पूर्वी दिल्ली के अधिकारियों ने आवसीय परिसरों में भी तलाशी ली थी । श्री मित्तल के अनुसार, यह स्पष्ट रूप से अवैध और दुर्भावनापूर्ण था ।

25. किंचित तौर पर भिन्न टिप्पण पर, श्री मित्तल ने इसदलील पर भी जोर दिया कि जी.एस.टी. परिषद् द्वारा जारी परिपत्र सं. 1 के अनुसार, याचिकाकर्ता को तारीख 20 सितंबर, 2017 को राज्य कर अधिकारियों को सौंपा गया था जिसमें कहा गया था कि केंद्रीय कर अधिकारियों के पास याचिकाकर्ता काअन्वेषण करने के लिए अपेक्षित अधिकारिता नहीं थी ।

प्रत्यर्थियों द्वारा प्रत्युत्तर का जवाब

26. प्रत्युत्तर के जवाब में, श्री एस. वी. राजू, विद्वान् अतिरिक्त महासालिसिटर जनरल ने दलील दी कि इस तथ्य के बारे में कोई विवाद नहीं है कि याचिकाकर्ता के परिसर के लिए तारीख 23 नवंबर, 2020 को तलाशी की अनुमति अपर आयुक्त, सी.जी.ए.टी. – दिल्ली, उत्तर द्वारा जारी की गई थी । उन्होंने बताया कि चूंकि याचिकाकर्ता का पता सी.जी.ए.टी. – उत्तर दिल्ली के क्षेत्राधिकारिता में आता है, इसलिए, अपर आयुक्त, सी.जी.ए.टी. – पूर्व दिल्ली ने तारीख 22 नवंबर, 2020 के पत्र के माध्यम से अपर आयुक्त, सी.जी.ए.टी. – दिल्ली, उत्तर से सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 67(2) के अधीन तलाशी की अनुमति जारी करने और उक्त पते पर तलाशी के उद्देश्य से सी.जी.ए.टी. – दिल्ली, उत्तर के एक निरीक्षक को नियुक्त करने का अनुरोध किया था । अपर आयुक्त सी.जी.ए.टी. – दिल्ली, उत्तर ने 23 नवंबर, 2020 को सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 67(2) के अधीन सीओएसटी – दिल्ली, उत्तर के निरीक्षक के नाम पर तलाशी के लिए सीओएसटी – दिल्ली, पूर्वी अधिकारियों की टीम के साथ जाने के लिए तलाशी की अनुमति को जारी किया । उसने कथन किया कि यह उन मामलों हेतु मानदंड हैं जहां तलाशी अन्य क्षेत्राधिकारिता में की जानी है । इसके अलावा, विद्वान् अतिरिक्त महासालिसिटर जनरल ने रिट याचिका के पृष्ठ 78 की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया जो इंगित करता है कि सी.जी.ए.टी. – दिल्ली और सी.जी.ए.टी. – उत्तर दोनों ही प्रधान मुख्य आयुक्त, दिल्ली के समादेश के अंदर आते हैं । इसलिए, उन्होंने दलील दीकि इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि किस डिवीजन/प्रभाग द्वारा तलाशी की अनुमति को जारी किया गया क्योंकि याचिकाकर्ता के साथ कोई पक्षपात नहीं हुआ था ।

27. श्री मित्तल द्वारा दी गई दूसरी दलील का विद्वान् अतिरिक्त महासालिसिटर जनरल द्वारा इस आधार पर विरोध किया गया कि वास्तव में, परिपत्र सं. 01/2017 तारीख 20 सितंबर, 2017 के अनुसरण में, जी.एस.टी. अधिकारियों का क्रॉस-अधिकारिता प्राप्त हुई थी । उपरोक्त परिपत्र के अनसुरण में, केंद्रीय उत्पाद शुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड ने एक अधिसूचनासं. 39/2017- केंद्रीय कर तारीख 13 अक्तूबर, 2017 जारी की जो राज्य और केंद्र शासित प्रदेश जी.एस.टी. अधिकारियों को सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 के अधीन धन वापसी के उद्देश्य के लिए उचित अधिकारियों के रूप में कार्य करने के लिए क्रॉस अधिकारिता प्रदान करता है । इस स्थिति को केंद्रीय उत्पाद एवं सीमाशुल्क बोर्ड द्वारा जारी पत्र सं. एफ.सं. सी.बी.ई.सी.-20/10/07/2019-जी.एस.टी. तारीख 22 जून, 2020 द्वारा स्पष्ट किया गया था जिसमें कहा गया था कि आसूचना-आधारित प्रवर्तन कार्यवाहियों के संबंध में राज्य कर और केंद्रीय कर अधिकारियों को क्रॉस-अधिकारिता देने के लिए किसी अलग अधिसूचना की आवश्यकता नहीं होगी । इसलिए, विद्वान् अतिरिक्त महासालिसिटर जनरल ने कहा कि केंद्रीय कर अधिकारी सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 6 और एस.जी.एस.टी./यू.टी.जी.एस.टी. अधिनियमों के संबंधित प्रावधानों के अधीन राज्य प्रशासन को सौंपे गए कर दाताओं के खिलाफ आसूचना-आधारित प्रवर्तन कार्यवाही करने के लिए पूर्ण अधिकार है ।

28. अंत में, विद्वान् अतिरिक्त महासालिसिटर जनरल दवारा यह प्रतिवाद किया गया था कि ये मुद्दे वर्तमान अंतरिम आवेदन के स्तर पर प्रासंगिक नहीं हैं क्योंकि आवेदन गिरफ्तारी से अंतरिम संरक्षण के बारे में है ।

न्यायालय का तर्क

किसी भी अधिनियमिति या उसके किसी भी भाग की संवैधानिकता के बारे में हमेशा एक धारणा होती है और यह दर्शाने का कि संवैधानिक सिद्धांतों का स्पष्ट उल्लंघन हुआ है, का दायित्व उस व्यक्ति पर होता है जो ऐसी अधिनियमिति को आक्षेपित करता है । आगे, विधियों को इस काल्पनिक सिद्धांत पर असंवैधानिक घोषित नहीं किया जाना चाहिए

कि शक्ति को किसी भी अवास्तविक रूप में या एक निर्वात में या इस आधार पर कि शक्ति के दुरुपयोग की एक व्यापक संभावना है ।

29. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के साथ प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 द्वारा फाइल तारीख 22 दिसंबर, 2020 के प्रति-शपथपत्र का परिशीलन करने के बाद, इस न्यायालय की राय है कि किसी अधिनियमिति या उसके किसी भाग की संवैधानिकता पर न्यायनिर्णयन करने के सिद्धांत सुस्थिर हैं ।

30. किसी भी अधिनियमिति या उसके किसी भी भाग की संवैधानिकता के पक्ष में हमेशा एक धारणा होती है और यह दर्शाने का कि संवैधानिक सिद्धांतों का स्पष्ट उल्लंघन हुआ है का दायित्व उस व्यक्ति पर होता है जो ऐसी अधिनियमिति को आक्षेपित करता है । साथ ही, जब भी किसी उपबंध की संवैधानिकता को इस आधार पर चुनौती दी जाती है कि यह एक मौलिक अधिकार का उल्लंघन करता है, तो कानून के प्रत्यक्ष और अपरिहार्य प्रभाव/परिणाम के ध्यान में रखा जाना चाहिए । **नमित शर्मा** बनाम **भारत संघ**[1], में उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है :–

> "20. हिंसा विरोधक संघ **बनाम** मिर्जापुर मोती कुरेशी जमात [(2008) 5 एस. सी. सी. 33] वाले मामले में बूचड़खानों को बंद करने के मामले को निपटाते हुए, न्यायालय ने ए. पी. **बनाम** पी. लक्ष्मी देवी [(2008) 4 एस. सी. सी. 720] में अपने पहले के निर्णय को ध्यान में रखते हुए, न्यायालयों को ऐसीअधिकारिता का प्रयोग के लिए एक नियम प्रस्तुत किया जिसमें कहा गया कि न्यायालय को संविधि की संवैधानिक वैधता पर निर्णय करते समय या यहां तक कि किसी प्रत्यायोजित विधान की संवैधानिक वैधता को परखते हुएन्यायिक संयम का प्रयोग करना चाहिए और यह तभी किया जाना चाहिए जब युक्तियुक्त संदेह से परे किसी सांविधानिक उपबंधों का स्पष्ट उल्लंघन होता है तभी न्यायालय को किसी उपबंध को असंवैधानिक घोषित करना चाहिए... ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

[1] (2013) 1 एस. सी. सी. 745.

31. आगे, विधियों को इस काल्पनिक सिद्धांत पर असंवैधानिक घोषित नहीं किया जाना चाहिए कि शक्ति को किसी भी अवास्तविक रूप में या एक निर्वात में या इस आधार पर कि शक्ति के दुरुपयोग की एक व्यापक संभावना है । वास्तव में, यह मान लिया जाना चाहिए, जब तक कि यह विपरीत साबित न हो जाए कि किसी विशेष कानून का प्रशासन और उसे लागू करना "बुरी नजर और असमान हाथों द्वारा नहीं किया जाएगा" । उच्चतम न्यायालय ने **मगनलाल छगनलाल (प्रा.) लिमिटेड** बनाम **ग्रेटर बॉम्बे नगर निगम और अन्य**[1] वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "हमारे समक्ष प्रस्तुत दो संवर्गों के मामलों में विधि स्वयं उनके पीछे के उद्देश्य को स्पष्ट रूप से निर्धारित करती है, वह यह है कि निगम और सरकार से संबंधित परिसर पर अनधिकृत व्यक्तियों के कब्जे को बेदखल करने के मामले में त्वरित प्रक्रिया से कार्य होना चाहिए । जिन अधिकारियों से अपेक्षा की जाती है कि वे अधिनियमों द्वारा निर्धारित प्रक्रियाओं का लाभ उठाएंगे और साधारण सिविल न्यायालय की विलंबकारी प्रक्रिया का सहारा नहीं लेंगे । यहां तक कि आम तौर पर कोई भी एक अधिकारी के पास दो प्रक्रियाओं का विकल्प होने की कल्पना नहीं कर सकता है, एक जो उसे संपत्ति का कब्जा जल्दी से प्राप्त करने में सक्षम बनाता है और दूसरा विकल्प जो लम्बा होगा और बाद वाले विकल्प का सहारा लेने का होगा । <u>प्रशासनिक अधिकारी, जो न्यायालयों से कम नहीं हैं, शून्य में कार्य नहीं करते हैं । यह अभिनिर्धारित करना अत्यंत अवास्तविक होगा कि कोई प्रशासनिक अधिकारी सरकारी संपत्ति या नगरपालिका संपत्ति के अनधिकृत अधिभोगियों की बेदखली के लिए कार्यवाही करने में दो अधिनियमों द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का और दूसरे में साधारण सिविल न्यायालय का सहारा लें । इन दोनों अधिनियमों के प्रावधानों को इस काल्पनिक सिद्धांत पर खारिज नहीं किया जा सकता है कि शक्ति का प्रयोग इस तरह के अवास्तविक तरीके से किया जाएगा । इस बात पर विचार करते</u>

[1] [1975] 1 एस. सी. आर. 1.

हुए कि क्या अधिकारी व्यक्तियों के एक समूह और दूसरे समूह के बीच विभेद कर रहे हैं, इसके लिए सामान्य मानवीय व्यवहार को ध्यान में रखना होगा न कि उस व्यवहार को जो असामान्य है । यहां विभेद की कोई काल्पनिक संभावना नहीं है, लेकिन विभेद के वास्तविक जोखिम को हमें ध्यान में रखना चाहिए । यह उन मामलों में से एक नहीं है जहां कानून के समक्ष विभेद एकदम स्पष्ट है । विभेद होना संभाव्य है परन्तु बहुत असंभव नहीं है और यदि वास्तविक व्यवहार में विभेद है तो यह न्यायालय शक्तिहीन नहीं है । इसके अलावा, यह तथ्य कि विधायिका ने माना कि सामान्य प्रक्रिया सरकारी और निगम की संपत्ति के अनधिकृत अधिभोगियों को बेदखल करने में अपर्याप्त या अप्रभावी है और इसलिए, एक विशेष त्वरित प्रक्रिया प्रदान की है, अनधिकृत अधिभोगियों को बेदखल करने के लिए जिम्मेदार अधिकारियों के लिए एक स्पष्ट मार्गदर्शन है । इसलिए, हम उत्तरी भारत केटरर्स के मामले में बहुमत से सहमत होने में असमर्थ हैं ।'

वस्तु एवं सेवा कर एक विशिष्ट कर है, क्योंकि शक्ति के रूप में और साथ ही साथ विधि की पृष्ठभूमि महत्वपूर्ण रूप से व्यापक है क्योंकि यह वस्तु और सेवा कर के संबंध में सभी कानूनों को बनाने की शक्ति प्रदान करता है ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

32. इस न्यायालय की प्रथमदृष्टया राय है कि वस्तु एवं सेवा कर एक विशिष्ट कर है, क्योंकि शक्ति साथ ही साथ विधायन के क्षेत्र मेंएकमात्र अनुच्छेद 246क ही पाया जाता है । अनुच्छेद 246क काक्षेत्र काफी व्यापक है क्योंकि यह न केवल दोनों संसद् और राज्य विधानसभाओं को जी.एस.टी. अधिनियम लागू करने और/या अधिनियमित करने को सशक्त करता है अपितु यह वस्तु और सेवा कर के संबंध में सभी कानूनों को बनाने की शक्ति भी देता है ।

33. यह सुस्थिरविधि है कि जब तक कि संविधान स्वयं अभिव्यक्त तौर पर इस विषय पर विधान को पूर्णतः या सशर्त रूप में

निषिद्ध नहीं करता है, तब तक किसी विधानमंडल की अपनी विधायी क्षमता के भीतर विधान अधिनियमित करने की शक्ति सर्वांगीण है । साथ ही, विधायी शक्ति प्रदान करने वाले संवैधानिक अधिनियमिति में दिए शब्दों/अभिव्यक्ति को व्यापक आयाम और आशय से निर्वचन कियाजाना चाहिए, उनके विनिर्माण पर अत्यधिक उदार दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए ।

34. वास्तव में, अधिनियम की धारा 69 द्वारा प्रदत्त गिरफ्तारी की शक्ति गिरफ्तारी की सामान्य शक्ति नहीं है, अपितु कुछ अपराधों तक ही सीमित है जो अधिनियम की धारा 69 में दिए गए हैं अर्थात् कुछ अपराध जो अधिनियम की धारा 132 के अधीनआते हैं और इस तरह बताए गए सभी अपराध वस्तु और सेवा कर से संबंधित अपराध हैं । परिणामस्वरूप, इस न्यायालय का प्रथमदृष्ट्या यह मत है कि अनुच्छेद 246क में प्रयुक्त वस्तु और सेवा कर "के संबंध में" अभिव्यक्ति, एक संवैधानिक उपबंध होने के नाते इसको व्यापक आयाम दिया जाना चाहिए और इसमें वस्तु और सेवा कर के संबंध में दांडिक विधि अधिनियमित करने की शक्ति शामिल है ।

35. यहां अनुच्छेद 246क और अनुच्छेद 246 के प्रवर्तन के बीच भी कोई विरोधाभास नहीं है क्योंकि अनुच्छेद 246क में एक सर्वोपरि खंड जोड़ा गया है, यहस्पष्ट करने के लिए कि वस्तु और सेवा कर के संबंध में दोनों, संसद् और राज्य विधानमंडलों के पास एक समान शक्तियां हैं । तद्नुसार, इस शक्ति का अर्थान्वयन उदारतापूर्वक किया जाना चाहिए जो संसद् को वस्तु और सेवा कर के संबंध में कानून बनाने के लिए अधिकार देती है और यह अनुच्छेद 246 और 254 में प्रदान की गई विधायी शक्ति के वितरण से अप्रभावित रहती हैं (स्किल लोट्टो सॉल्यूशंस प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत संघ, रिट याचिका सं. 961/2018 तारीख 3 दिसंबर, 2020 में देखें) । इस न्यायालय की प्रथमदृष्ट्या राय है कि सी.जी.एस.टी. अधिनियम का सार और तत्व एक विषय पर है जिस पर संसद् को कानून बनाने की शक्ति है जैसे कि गिरफ्तार करने और अभियोजन चलाने की शक्ति आनुषंगिक है और/या

वस्तु और सेवा कर को वसूलने और एकत्रित करने की शक्ति प्रासंगिक है ।

36. यह भी समान रूप से स्थापित है कि जब किसी कानून को विधायिका शक्तियों के क्षेत्राधिकार से अधिकारातीत होने के आधार पर चुनौती दी जाती है, तो विधान के वास्तविक चरित्र को समग्र रूप से सुनिश्चित करना होगा । इस न्यायालय का विचार है कि जब एक सूची में किसी विषय पर विचार करने वाली विधि दूसरी सूची में किसी विषय को भी स्पर्श करती है, तो अधिनियमिति का सार और तत्व अर्थात् विधान का वास्तविक उद्देश्य सुनिश्चित करना होगा । यदि, कानून की जांच करने पर, यह पाया जाता है कि विधान का तत्व विधायिका को सौंपे गए मामले पर है जो उस कानून को लागू करता है, तब उसे अपनी संपूर्णता में वैध माना जाना चाहिए भले ही वह अपनी क्षमता से परे के मामलों में हस्तक्षेप करे । प्रासंगिक अतिक्रमण निषिद्ध नहीं है । लार्ड पोर्टर ने **प्रफुल्ल कुमार** बनाम **बैंक ऑफ कॉमर्स**[1] वाले मामले में कहा, प्रश्न जरूर पूछा जाना चाहिए सार और अस्तित्व में जो होता है वो ही अधिनियमिति का प्रभाव होता है जिसकी शिकायत की जाती है । आक्षेपित विधान के सार को पता लगाने में, अधिनियमिति को एक समग्र रूप से देखा जाना चाहिए और साथ ही उसके उद्देश्य और उसके प्रावधानों और प्रभाव कापता लगाने में, अधिनियमिति को एक समग्र रूप से देखा जाना चाहिए और साथ ही उसके उद्देश्य और उसके प्रावधानों और प्रभाव को ध्यान में रखा जाना चाहिए ।

37. सार और तत्व के सिद्धांत का औचित्य यह है कि परिसंघीय संविधान में, संघ और राज्य विधानमंडलों की शक्तियों के बीच स्पष्ट अंतर करना संभव नहीं है । अतिव्यापक होना तय है और ऐसे सभी मामलों में यह पूछना उचित है कि पूरी समग्रता में विधि का उद्देश्य या लक्ष्य क्या है । एक कठोर व्याख्या के परिणामस्वरूप अतिव्यापी होने के आधार पर बड़ी संख्या में कानूनों को अमान्य घोषित किया जाएगा । यदि विधायिका को उसे दी गई शक्तियों का प्रयोग करने की पूरी

[1] ए. आई. आर. 1947 पी. सी. 60.

गुंजाइश हो, तो यह मानना आवश्यक है कि संविधान किसी विधायिका को ऐसे मामलों से निपटने से नहीं रोकता है जो किसी और मामले में प्रासंगिक रूप से दूसरे विधायिका के कार्यक्षेत्र को प्रभावित कर सकता है । सी.जे. ग्वायर ने **सुब्रमण्यम् चेट्टियार** बनाम **मुत्तुस्वामी गुन्दन**[1] में सार और तत्व के सिद्धांत की वैधता की व्याख्या करते हुए अभिनिर्धारित किया है कि :–

> "यह अनिवार्य रूप में समय-समय पर होता है कि विधान यद्यपि एक सूची के किसी विषय पर विचार करने के लिए तात्पर्यित है, दूसरी सूची के किसी विषय को भी स्पर्श करता है, और अधिनियम के विभिन्न उपबंध इतने निकटता से जुड़े हो सकते हैं कि कड़ाई से मौखिक व्याख्या के अंधाधुंध पालन के परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में विधियों को अमान्य घोषित किया जा सकता है क्योंकि उन्हें अधिनियमित करने वाली विधायिका एक वर्जित क्षेत्र में विधान बनाता प्रतीत हो सकता है ।"

38. परिणामस्वरूप्, इस न्यायालय की प्रथमदृष्ट्या राय है कि सी.जी.एस.टी. अधिनियम का सार और तत्व एक ऐसे विषय पर है, जिस पर संसद् को कानून बनाने की शक्ति है क्योंकि गिरफ्तारी और मुकदमा चलाने की शक्ति आनुषंगिक है और/या वस्तु और सेवा कर वसूलने और एकत्र करने की शक्ति प्रासंगिक है ।

<u>यदि यह मान लिया जाए कि वस्तुओं और सेवा कर के अपवंचन करने के संबंध में अपराधबनाने की शक्ति अनुच्छेद 246क के अधीन नहीं आती हैअपितुउसे सूची-III की प्रविष्टि 1 में भी पाया जा सकता है । उपरोक्त प्रविष्टि में प्रयुक्त शब्द 'दांडिक विधि' महत्वपूर्ण रूप से व्यापक है और अपवादों को छोड़कर सभी दांडिक कानूनों को शामिल करता है ।</u>

39. इस न्यायालय का प्रथमदृष्ट्या यह मत है कि यदि यह उपधारणा की जाती है कि वस्तुओं और सेवा कर के अपवंचन करने के संबंध में अपराध करने की शक्ति अनुच्छेद 246क के अधीन नहीं पाई जाती है, तब उसको सूची-III के प्रविष्टि 1 में ढूंढा जा सकता है ।

---

[1][1940] एफ. सी. आर. 188.

उपरोक्त प्रविष्टि में प्रयुक्त शब्द 'दांडिक विधि' महत्वपूर्ण रूप से व्यापक है और अपवादों को छोड़कर अर्थात् सूची-II के विषयों के संबंध में बनाई गई विधियां,सभी दांडिक विधियों को शामिल करता है ।

40. उच्चतम न्यायालय ने **करतार सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस बात पर जोर दिया है कि पूर्वोक्त प्रविष्टि में प्रयुक्त भाषा को बहुत व्यापक शब्दों में वर्णित किया गया है और 'दांडिक विधि' शब्द के दायरे को किसी भी ऐसे मामले को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया है जो दांडिक प्रकृति का हो सकता है । उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि इस प्रविष्टि के अधीन शक्ति के प्रयोग का उदारतापूर्वक अर्थ लगाया जाना चाहिए जिससे कि विधायी आशय का पूरा लाभ मिल सके । उक्त निर्णय का सुसंगत भाग यहां नीचे पुनः प्रस्तुत किया जाता है :–

> "445. प्रयुक्त भाषा से यह स्पष्ट है कि प्रविष्टि बहुत व्यापक शब्दों में की गई है । "दांडिक विधि" शब्दावली के बाद के शब्द किसी भी ऐसे मामले के दायरे को बढ़ाते हैं जिसे वैध रूप से दांडिक प्रकृति का माना जा सकता है । इसलिए, इस प्रविष्टि के अधीन शक्ति के प्रयोग का उदारतापूर्वक अर्थ लगाया जाना चाहिए ताकि विधायी गतिविधि को पूरी तरह से उपयोग में लाया जा सके । तथापि, प्रविष्टि की व्यापकता बाद की अभिव्यक्ति द्वारा नियंत्रित की गई है जो सूची 1 या सूची 2 में विनिर्दिष्ट किसी भी विषय के संबंध में विधियों के विरुद्ध अपराधों के संबंध में विधान बनाने के लिए किसी भी विधानमंडल की शक्ति को उससे ले लेती है । चूंकि यह भाग प्रविष्टि के परिधि को प्रतिबंधित और संकीर्ण करता है, इसलिए इसका सख्ती से अर्थ लगाया जाना चाहिए । चूंकि संघीय ढांचे के अधीन संसद् द्वारा बनाए गए विधि को उच्चतमता प्राप्त है [देखें–भारत संघ **बनाम** एच. एस. ढिल्लों (1971) 2 एस. सी. सी. 779 = ए. आई. आर. 1972 एस. सी. 1061] समवर्ती सूची में प्रविष्टि के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाई गई किसी

[1] (1994) 3 एस. सी. सी. 569.

अधिनियमिति का अध्यारोही प्रभाव उन निर्बन्धनों के अधीन होगा जिन्हें प्रविष्टि से ही वर्णित किया जा सकता है । इस प्रविष्टि के अधीन वैध होने के लिए संघ संसद् द्वारा एक कानून को दो आवश्यकताओं को पूरा करना होगा; एक, कि यह दांडिक कानून से संबंधित होना चाहिए और अपराध ऐसा नहीं होना चाहिए जो सूची-II में निर्दिष्ट किसी भी मामले के संबंध में कानूनों के खिलाफ प्रदान किया गया है या किया जा सकता है । दांडिक कानून क्या है ? अपराध से संबंधित कोई भी अधिनियम या नियम, जो "आपराधिक न्याय प्रणाली के असहनीय व्यवहार के प्रति दृढ़ता से सामाजिक रक्षात्मक प्रतिक्रिया है । शुरू से ही इसे समुदाय के राजनीतिक संस्थाओं से जुड़े मूल्यों की एक स्थापित व्यवस्था की रक्षा के लिए रचे गए एक उपकरण के रूप में माना जाता था । इन मूल्यों को दर्शाने वाले कुछ महत्वपूर्ण मानदंडों के उल्लंघन को एक अपराध के रूप में देखा गया और जो इस तरह, सजा के योग्य थे ।

446. किसी दिए गए समाज में एक विशेष समय में अपराध क्या है, इसका व्यापक अर्थ है क्योंकि अपराध की अवधारणा देश के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक ढांचे में बदलाव के साथ बदलती रहती है । आर्थिक अपराधों या औद्योगिक गतिविधि के भंग या कर प्रावधान के भंग से संबंधित अपराधों से संबंधित विभिन्न कानून इसके पर्याप्त प्रमाण हैं । संविधान निर्माताओं ने संभावित स्थिति का पूर्वानुमान लगा लिया था, इसलिए उन्होंने इस संबंध में कानून बनाने के लिए केंद्रीय और राज्य दोनों विधानमंडलों को ऐसी शक्तियां प्रदान कीं । ऐसे अधिकार में अपराध को परिभाषित करने और उसके लिए सजा का उपबंध करने की शक्ति शामिल है । संविधान के प्रारंभ पर दंड संहिता, 1860 में शामिल सभी मामलों सहित शब्दावली का उपयोग इस प्रविष्टि की व्यापक प्रकृति का स्पष्ट संकेत है । यह विधायिका को न केवल दंड संहिता, 1860 के अधीन आने वाले मामलों के संबंध में कानून बनाने की शक्ति देता है, बल्कि कोई अन्य मामला जिसे यथोचित और न्यायसंगत रूप से दांडिक प्रकृति का माना जा सकता है... ।"

41. तद्नुसार, इस न्यायालय की प्रथमदृष्ट्या यह राय है कि भले ही अधिनियम की धारा 69 और 132 को अनुच्छेद 246क के अधीन शक्ति के अनुसरण में अधिनियमित नहीं किया जा सकता था, लेकिन उन्हें सूची-III की प्रविष्टि 1 के अधीन अधिनियमित किया जा सकता था, क्योंकि अपराध का निर्धारण और इसके लिए सजा का उपबंध "दांडिक विधि" है । परिणामस्वरूप, इस न्यायालय का प्रथमदृष्ट्या यह मत है कि अधिनियम की धारा 69 और 132 दोनों ही संवैधानिक हैं और संसद् की विधायी क्षमता के भीतर आती हैं ।

यह न्यायालय, अंतरिम चरण में, गुजरात उच्च न्यायालय इस दृष्टिकोण की अवहेलना नहीं कर सकता है कि न्यायालय ने सी.जी.ए.टी. अधिनियम में दं.प्र.सं. के अध्याय XII के लागू होने के संबंध में विचार व्यक्त किया है ।

42. जहां तक सी.जी.ए.टी. अधिनियम में का दं.प्र.सं. के अध्याय XII को लागू होनेके मुद्दे का संबंध है, **विमल यशवंतगिरी गोस्वामी** बनाम **गुजरात राज्य**[1] वाले मामले में गुजरात उच्च न्यायालय ने हाल ही में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है :–

> "(3) प्र. (i)क्या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 154, 155(1), 155(2), 155(3), 157, 172 के उपबंध लागू होते हैं या सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 69 के अधीन गिरफ्तारी की शक्ति को आह्वान करने के उद्देश्य से लागू किए जाने चाहिए ? दूसरे शब्दों में, क्या प्राधिकृत अधिकारी दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के उपबंधों के अधीन दंडाधिकारी द्वारा जारी गिरफ्तारी वारंट के बिना किसी ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकता है जिसने कथित रूप से असंज्ञेय और जमानतीय अपराध किए हैं ?
>
> *** *** ***
>
> (ii) जब किसी व्यक्ति को अधिकृत अधिकारी दवारा सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 69 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए गिरफ्तार किया जाता है, तो गिरफ्तारी करने वाला

[1] 2019 की आर/विशेष सिविल आवेदन सं. 13679.

अधिकृत अधिकारी दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 154 से 157 के प्रावधानों का पालन करने के लिए कानून में बाध्य नहीं है । प्राधिकृत अधिकारी को, ऐसा व्यक्ति गिरफ्तार करने के पश्चात्, ऐसी गिरफ्तारी के आधारों के बारे में उस व्यक्ति को सूचित करना होगा और गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को बिना अनावश्यक विलंब के दंडाधिकारी के समक्ष ले जाना होगा, यदि अपराध संज्ञेय औऱ गैर जमानती हैं । तथापि, संहिता की धारा 154 से 157 के उपबंध उस समय लागू नहीं होंगे । अन्यथा, धारा 69 की उप-धारा (3) जमानत देने के उपबंध जी.एस.टी. अधिकारियों के अन्वेषण और रिपोर्ट के संबंध में किसी पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी की शक्तियां प्रदान नहीं करता है । जमानत देने की शक्ति को, यह कहते हुए कि उन्हें क्या करना चाहिए या क्या नहीं करना चाहिए, विस्तार से परिभाषित करने के बजाय कुछ समान परिस्थितियों में रखे जाने पर किसी अन्य अधिकारी की शक्तियों को संदर्भित करने का छोटा और समीचीन तरीका अपनाया गया है । अपनी भाषा से, उप-धारा (3) जी.एस.टी. के अधिकारियों को पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी के साथ बराबरी नहीं करती है, न ही यह निहितार्थ से उसे ऐसा बनाती है । अतः इसका केवल यह अर्थ है कि उसे ऐसे व्यक्ति को जमानत पर रिहा करने के या अन्यथा प्रयोजन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता में परिभाषित शक्तियां प्राप्त हैं । इसका अनिवार्य रूप से यह अर्थ नहीं है कि किसी ऐसे व्यक्ति को, जिस पर गैर-संज्ञेय और जमानतीय अपराध करने का आरोप है, दंडाधिकारी द्वारा जारी वारंट के बिना गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है ।

(iii) सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 69 के अधीन गिरफ्तार करने की शक्ति का प्रयोग करने वाला अधिकृत अधिकारी पुलिस अधिकारी नहीं है और इसलिए, सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 132 के अधीन किसी अपराध के संबंध में गिरफ्तार किए गए व्यक्ति के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज करने के लिए कानून में बाध्य नहीं है ।

(iv) **ओम प्रकाश** (पूर्वोक्त) के मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय का वर्तमान मामले पर कोई प्रभाव नहीं है ।

(v) एक अधिकृत अधिकारी सी.जी.ए.टी. अधिनियम के प्रयोजनों के लिए एक 'उचित अधिकारी' है । चूंकि अधिकृत अधिकारी पुलिस अधिकारी नहीं हैं, इसलिए जांच के दौरान उनके समक्ष दिए गए बयान साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के अधीन अस्वीकार्य नहीं हैं ।

(vi) प्राधिकृत अधिकारी द्वारा किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने की शक्ति सांविधिक है और इसमें हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए । सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 69 में किसी भी दंडाधिकारी के हस्तक्षेप पर विचार नहीं किया गया है ।

(vii) **ओम प्रकाश** (पूर्वोक्त) के मामले में यह सुनिश्चित करने के लिए कि अपराध जमानतीय था या गैर-जमानती निर्णय का मुख्य जोर इस बिंदु पर था कि अपराध असंज्ञेय होने के कारण इसे जमानतीय होना था । दूसरे शब्दों में, **ओम प्रकाश** (पूर्वोक्त) इस प्रश्न से निपटता है, "क्या सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 और केंद्रीय उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1944 के अधीन अपराध जमानतीय हैं या नहीं ? हालांकि सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 69 की उप-धाराएं (2) और (3) के उपबंध, गैर-जमानतीय अपराधों और जमानतीय अपराधों के लिए गिरफ्तारी के मामले में अंतर्निहित तंत्र और प्रक्रिया प्रदान करते हैं ।"

43. इसके अतिरिक्त, इसी तरह के मामले अर्थात् **गौतम खेतान** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने आदेश तारीख 30 अक्तूबर, 2019 के माध्यम से मामले को बिना किसी अंतरिम आदेश के अनिश्चितकाल के लिए स्थगित कर दिया है, क्योंकि उक्त मुद्दा उच्चतम न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है । **गौतम खेतान** (पूर्वोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के आदेश को यहां पुनः प्रस्तुत किया जाता है :–

"दोनों पक्षों की ओर से उपस्थित काउंसेल का संयुक्त रूप से

[1] 2018 की रिट याचिका (सि.) सं. 2658.

यह कथन है कि इस रिट याचिका में शामिल मुद्दा भी कई मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष लंबित है । ऐसे ही मामलों में से एक दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 168-169/2014 है; इसलिए, यह रिट याचिका अनिश्चितकाल के लिए स्थगित की जाती है ।"

44. परिणामस्वरूप, यह न्यायालय अंतरिम स्तर पर, इस बात की अवहेलना नहीं कर सकता है कि एक अन्य उच्च न्यायालय ने याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए विवाद के विपरीत एक दृष्टिकोण अपनाया है । इसलिए, इस अंतरिम स्तर पर, हम गुजरात उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण की अवहेलना नहीं कर सकते हैं ।

प्रवर्तन निदेशालय बनाम **दीपक महाजन** (पूर्वोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय और उपरोक्त गुजरात उच्च न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए, यहदलील कि याचियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है क्योंकि वे संविधान के अनुच्छेद 20 (3) के अधीन संरक्षण नहीं ले पाए हैं और/या दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध लागू नहीं हुए जबकि सी.जी.ए.टी. अधिनियम चुप है, विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं हैं ।

45. यह ध्यान देना प्रासंगिक है कि जब किसी व्यक्ति को सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 132(5) के अधीन गिरफ्तार किया जाता है, तो उक्त व्यक्ति को गिरफ्तारी के आधारों के बारे में सूचित किया जाना चाहिए और आवश्यक रूप से चौबीस घंटे की अवधि के भीतर धारा 69(2) के अधीन दंडाधिकारी के समक्ष पेश किया जाना चाहिए । यह कार्यपालिका के कार्यों पर न्यायिक समीक्षा सुनिश्चित करता है और इसे अनुचित और/या अत्यधिक नहीं कहा जा सकता है, जैसा कि याचियों द्वारा दलील दी गई है ।

46. आगे, यह दलील कि याचियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है क्योंकि वे संविधान के अनुच्छेद 20(3) के अधीन संरक्षण नहीं ले पाए हैं और/या दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध लागू नहीं किए गए जब सी.जी.ए.टी. अधिनियम चुप था, विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है । उच्चतम न्यायालय ने **प्रवर्तन निदेशालय** बनाम **दीपक महाजन** (पूर्वोक्त)

वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित रूप से अभिनिर्धारित किया है :–

> "87. रमेश चंद्र मेहता **बनाम** पश्चिमी बंगाल राज्य {ए. आई. आर. 1970 एस. सी. 940 = [1969] 2 एस. सी. आर. 461 = 1970 (क्रि.) एल. जे. 863} में इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने समुद्री सीमा शुल्क अधिनियम, 1878 की धारा 171क के अधीन दर्ज एक बयान की ग्राह्यता की जांच करते हुए (जो अधिनियम अब निरस्त कर दिया गया है) 1962 के सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 108 के अनुरूप अभिनिर्धारित किया है कि सीमा शुल्क अधिकारी द्वारा गिरफ्तार किया गया व्यक्ति संविधान के अनुच्छेद 20(3) के अर्थ के भीतर या साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के अर्थ के भीतर किसी अपराध का अभियुक्त नहीं है ।
>
> 88. वीरा इब्राहिम **बनाम** महाराष्ट्र राज्य [(1976) 2 एस. सी. सी. 302 = 1976 एस. सी. सी. (क्रि.) 278] में इस न्यायालय की एक खण्ड पीठ ने रमेश चन्द्र मेहता {ए. आई. आर. 1970 एस. सी. 940 = [1969] 2 एस. सी. आर. 461 = 1970 (क्रि.) एल. जे. 863} में यह मत व्यक्त किया कि अनुच्छेद 20 के खंड (3) में सन्निहित गवाही हेतु मजबूर करने के विरुद्ध गारंटी के लाभ का दावा करने के लिए, सबसे पहले यह दिखाया जाना चाहिए कि बयान देने वाला व्यक्ति "किसी अपराध का अभियुक्त था"; दूसरा कि उसने मजबूरी में बयान दिया था । आगे यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब सीमा शुल्क अधिकारी द्वारा धारा 108 के अधीन किसी व्यक्ति का बयान दर्ज किया जाता है, तो वह "सीमा शुल्क अधिनियम के अधीन अपराध का आरोपी" व्यक्ति के चरित्र पर किसी भी अपराध के आरोपी के रूप में मुहर लगाएगा, केवल तभी लगाया जाता है जब सीमा शुल्क अधिकारी द्वारा सीमा शुल्क अधिनियम के प्रावधानों के अधीन किसी भी अपराध को करने की शिकायत करते हुए, उस व्यक्ति के विरुद्ध शिकायत दर्ज की जाती है ।
>
> 89. हाल के एक निर्णय में, इस न्यायालय ने पूलपंडी **बनाम**

अधीक्षक, केंद्रीय उत्पाद शुल्क [(1992) 3 एस. सी. सी. 259 = 1992 एस. सी. सी. (क्रि.) 620] में उसी दृष्टिकोण को दोहराया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि सीमा शुल्क अधिनियम या एफ.ई.आर.ए. के अधीन जांच के दौरान पूछताछ किए जाने वाला व्यक्ति संविधान के अनुच्छेद 20(3) के अधीन किसी अपराध का अभियुक्त व्यक्ति नहीं है । पर्सी रुस्तमजी बस्ता बनाम महाराष्ट्र राज्य [(1971) 1 एस. सी. सी. 847] भी देखें ।

*** *** ***

122. .... संहिता के धारा 4(2) और 26(ख) का संयुक्त प्रवर्तन यह है कि जहां अधिनियम जो अपराध पैदा करता है, कोई विशेष प्रक्रिया इंगित नहीं करता है, शिकायत किए गए अपराध की जांच या पूछताछ की जानी चाहिए या संहिता के प्रावधानों के अनुसार मुकदमा चलाया जाना चाहिए ।

*** *** ***

128. ..... संक्षेप में, इस संहिता के उपबंध संहिता के अधिकारिता या प्रयोज्यता को छोड़कर किसी भी विशेष उपबंध में किसी भी विपरीत उपबंध या विशेष अधिनियम की अनुपस्थिति में उस सीमा तक लागू होने । वास्तव में, धारा 4(2) का दूसरा अंग ही संहिता के प्रावधानों के उपयोग को सीमित करता है, "....लेकिन ऐसे अपराधों के साथ जांच करने, पूछताछ करने, प्रयास करने या अन्यथा निपटने के तरीके या स्थान को विनियमित करने वाले समय के लिए किसी भी अधिनियम के अधीन है ।"

*** *** ***

132. उपरोक्त कारणों से, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि संहिता की धारा 4(2) का प्रवर्तन प्रत्यक्षतः एफ.ई.आर.ए. और सीमाशुल्क अधिनियम सहित विशेष विधियों के अधीन अपराधों के अन्वेषण, जांच और विचारण के क्षेत्र पर लागू होता है और परिणामस्वरूप संहिता की धारा 167 को विशेष अधिनियमों के अधीन किसी अपराध की जांच या पूछताछ के दौरान भी लागू

किया जा सकता है क्योंकि धारा 167 के प्रवर्तन को छोड़कर इसके विपरीत कोई विनिर्दिष्ट उपबंध नहीं है ।"

47. मात्र इस कारण से कि सी.जी.ए.टी. अधिनियम में सिविल दायित्व और दांडिक अभियोजन दोनों के न्यायनिर्णयन का उपबंध है, इसका अभिप्राय यह नहीं है कि उक्त अधिनियम अनुचित या अयुक्तियुक्त है ।

याचियों के काउंसेल द्वारा "कोई प्रपीड़क आदेश नहीं" का अवलंब कायम रखे जाने योग्य नहीं है जैसा **भारत का संघ** बनाम **सपना जैन और अन्य**[1] तारीख 29 मई, 2019 में उच्चतम न्यायालय ने अपने विचार व्यक्त किए हैं ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

48. याचियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा लिए गए अवलंब "कोई दंडात्मक आदेश नहीं" अतंरिम आदेश हैं । यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि क्योंकि **भारत संघ** बनाम **सपना जैन और अन्य** (उपर्युक्त) तारीख 29 मई, 2019 में उच्चतम न्यायालय ने "अपने विचार दिए है" और स्पष्ट किया है कि उच्च न्यायालय गिरफ्तारी-पूर्व जमानत देने के अनुरोध पर विचार करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखेंगे कि उच्चतम न्यायालय ने तारीख 27 मई, 2019 को एस.एल.पी. (दांडिक) 4430/2019 में पारित आदेश के माध्यम से तेलंगाना उच्च न्यायालय के निर्णय एवं आदेश के खिलाफ दायर एस.एल.पी. को खारिज कर दिया था । **भारत संघ** बनाम **सपना जैन और अन्य** (पूर्वोक्त) में उच्चतम न्यायालय के आदेश के प्रासंगिक हिस्से के साथ-साथ तेलंगाना उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 18 अप्रैल, 2019 को 2019 की रिट याचिका सं. 4764, 4769, 4892, 5074, 5130, 5329, 6952 और 7583 में पारित निर्णय और आदेश को यहां नीचे पुनः दोहराया जा रहा है :–

(क) भारत संघ बनाम **सपना जैन और अन्य** (उपर्युक्त) :–

"चूंकि देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों ने इस मामले में

[1] 2019 की एस.एल.पी. (दांडिक) 4322-4324.

अलग-अलग विचार रखे हैं, हमारा मानना है कि इस न्यायालय द्वारा कानून की स्थिति स्पष्ट की जानी चाहिए । इसलिए, नोटिस ।

चूंकि उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त-प्रत्यर्थिगण को आक्षेपित आदेशों द्वारा गिरफ्तारी-पूर्व जमानत का विशेषाधिकार प्रदान किया गया है, इस चरण पर, हम उसमें हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक नहीं हैं । हालांकि, हम यह स्पष्ट करते हैं कि उच्च न्यायालय भविष्य में इस तरह के अनुरोध पर विचार करते समय, इस बात को ध्यान में रखेंगे कि इस न्यायालय ने एस.एल.पी. (दांडिक) 4430/2019 में तारीख 27 मई, 2019 को पारित आदेश द्वारा इसी तरह के मामले में तेलंगाना उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश के खिलाफ दायर विशेष अनुमति याचिका को खारिज कर दिया था, जिसमें तेलंगाना उच्च न्यायालय ने वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए मत के विपरीत मत लिया था ।

उपरोक्त से परे, हम आगे कुछ भी कहना आवश्यक नहीं समझते हैं ।"

(ख) तेलंगाना उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 18 अप्रैल, 2019 को 2019 की रि.या. सं. 4764, 4769, 4892, 5074, 5130, 5329, 6952 और 7583 में पारित निर्णय और आदेश :–

"13. तथापि, विधि के प्रस्ताव जिन्हें पूर्वोक्त निर्णयों से निकाला जा सकता है, निम्नलिखित रूप में संक्षेपित किए जा सकते हैं – ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1746 = ए. आई. आर. 1970 एस. सी. 1065 = (1970) 1 एस. सी. सी. 847 = (1976) 2 एस. सी. सी. 302 = (1992) 3 एस. सी. सी. 259 ।

(i) कि विभिन्न कर कानूनों जैसे केंद्रीय उत्पाद शुल्क अधिनियम आदि के अधीन अधिकारी पुलिस अधिकारी नहीं हैं, जिन पर भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की खंड 25 लागू होगी,

(ii) तलाशी और गिरफ्तारी के लिए विभिन्न कर अधिनियमितियों के अधीन नियुक्त अधिकारियों को प्रदत्त शक्ति वास्तव में करों और शुल्कों के उद्ग्रहण और संग्रहण के उनके मुख्य कार्य की सहायता और समर्थन करने के लिए अभिप्रेत है,

(iii) कि कोई व्यक्ति जिसके विरुद्ध कर कानूनों के प्रासंगिक प्रावधानों के अधीन जांच की जाती है, वह स्वतः ही किसी अपराध का आरोपी व्यक्ति नहीं बन जाता है, जब तक कि अभियोजन शुरू नहीं किया जाता है,

(iv) यह कि कर कानून के अधीन जांच के दौरान व्यक्तियों द्वारा दिए गए बयानों को अपराध के आरोपी व्यक्तियों द्वारा दिए गए बयानों के समान नहीं माना जा सकता है, और

(v) यह कि परिणामस्वरूप, भारत के संविधान के अनुच्छेद 20(3) के अधीन ऐसे व्यक्तियों के लिए कोई संरक्षण नहीं है, क्योंकि जांच के लिए तलब किए गए व्यक्ति भारत के संविधान के अनुच्छेद 20(3) के अध्यधीन किसी अपराध के आरोपी व्यक्ति नहीं हैं ।

**** ****

58. इसलिए, याचियों द्वारा उठाई गई सभी तकनीकी आपत्तियां, जिसमेंप्रत्यर्थियों द्वारा उन्हें गिरफ्तार करने की आवश्यकता के साथ ही साथ हक भी सम्मिलित हैं, अस्वीकार किए जाने योग्य हैं । एक बार ऐसा हो जाने के बाद, हमें इस बात की जांच करनी होगी कि क्या इन मामलों के तथ्यों और परिस्थितियों में, याची, गिरफ्तारी से संरक्षण पाने के हकदार हैं । यह याद रखना चाहिए कि याचियों को अग्रिम जमानत चाहने वालों की तुलना में उच्च स्तर पर नहीं रखा जा सकता है । दूसरी ओर, अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकारिता का संयम से उपयोग किया

जाना चाहिए, जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा **कुमारी हेमा मिश्रा** (पूर्वोक्त उद्धृत) में चेताया गया है ।

59. हमने बिना गहराई तक जाए, व्यापक रूप से यह इंगितकिया है कि याची अभिकथित तौर पर कागज पर लगभग 1,289.00 करोड़ रुपए के आवर्त के साथ सर्कुलर ट्रेडिंग में लगे हुए हैं एवं आईटीसी को 225.00 करोड़ रुपए का लाभ पहुंचाया है । जी.एस.टी. व्यवस्था अपने आरंभिक चरण में है । यह कानून अभी अपनी दूसरी वर्षगांठ तक नहीं पहुंचा है । विवरणी प्रस्तुत करने, आईटीसी दावा प्रस्तुत करने आदि के मामले में बहुत सारी तकनीकी गड़बड़ियां थीं । इन तकनीकी गड़बड़ियों को दूर करने के लिए भारत सरकार द्वारा कई परिपत्र जारी किए जाने थे ।

60. यदि, जी.एस.टी. व्यवस्था को लागू करने से पहले भी, कोई व्यक्ति कानून का फायदा उठा सकता है, बिना वस्तु की वास्तविक खरीद या बिक्री या सेवाओं को किराए पर लेने या प्रदान करने के, एक विशाल आवर्त को पेश करता है जिसका अस्तित्व केवल कागज पर ही है, जिससे लगभग 225.00 करोड़ रुपए के इनपुट टैक्स क्रेडिट का दावा उद्भूत हुआ है तो प्रत्यर्थियों का यह सोचना कुछ भी गलत नहीं है कि संलिप्त व्यक्तियों को गिरफ्तार किया जाना चाहिए। आम तौर पर, अन्य सभी राजवित्तीय विधियों में, जिन अपराधों को हम पारंपरिक रूप से जानते हैं, वे दायित्व की अपवंचन के इर्द-गिर्द घूमते हैं । ऐसे मामलों में, सरकार केवल उसके हक से वंचित रहती है । किन्तु याचियों द्वारा कथित रूप से किए गए धोखाधड़ी वाले आईटीसी के दावों की प्रकृति में, सरकार के लिए एक बड़ी देयता पैदा हो जाती है । इसलिए, याचियों के खिलाफ जिन कृत्यों की शिकायत की गई है वह अपने आरंभ से ही लघु अवधि के भीतर एक विधि के कार्यान्वयन के लिए खतरा पैदा करते हैं ।

61. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हमारे इस निष्कर्ष के बावजूद कि रिट याचिकाएं पोषणीय हैं और हमारे इस निष्कर्ष के बावजूद कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41 व 41-क के अधीन

संरक्षण, इस अधिनियम के अधीन संज्ञेय और गैर-जमानती अपराध करने वाले व्यक्तियों के लिए उपलब्ध हो सकता है और हमारे इस निष्कर्ष के बावजूद कि सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 69 एवं 132 के बीच विसंगतियां हैं, हम उन विशेष परिस्थितियों को देखते हुए, जिन्हें हमने उपर इंगित किया है, गिरफ्तारी के खिलाफ याचियों को राहत देना नहीं चाहते हैं ।"

49. परिणामस्वरूप, इस न्यायालय का विचार है कि यह दलील याचियों के मामले में कोई सहायता नहीं करता है ।

यह न्यायालय प्रथमदृष्ट्या विद्वान् अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल के निवेदनों में बल पाया है कि केंद्रीय कर अधिकारियों को सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 6 के अधीन राज्य कर प्रशासन को सौंपे गए कर दाताओं के खिलाफ बौद्धिक - आधारित प्रवर्तन कार्रवाई करने के लिए सशक्त किया गया है ।

50. जहां तक रिट याचिका (सिविल) सं. 10130/2020 में उठाए गए अधिकारिता के मुद्दे का संबंध है, यह न्यायालय प्रथमदृट्या विद्वान् अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल के निवेदनों में बल पाता है कि केंद्रीय कर अधिकारियों को सी.जी.ए.टी. अधिनियम की धारा 6 के अधीन राज्य कर प्रशासन को सौंपें गए करदाताओं के खिलाफ बौद्धिक - आधारित प्रवर्तन कार्रवाई करने के लिए सशक्त किया गया है । इस अंतरिम चरण में, हम परिसर की तलाशी की कार्रवाई को इस आधार पर दूषित नहीं कर सकते कि यह अभिकथन कि तलाशी लेने वाला अधिकारी अक्षम था । विद्वान् अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल ने समझाया है कि याचिकाकर्ता का पता सी.जी.ए.टी. - दिल्ली उत्तर कीअधिकारिता में आता है, इसलिए अतिरिक्त आयुक्त, सी.जी.ए.टी. - दिल्ली पूर्व ने तारीख 22 नवंबर, 2020 के पत्र के माध्यम से अतिरिक्त आयुक्त, सी.जी.ए.टी. - दिल्ली उत्तर से सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 67(2) के अधीन तलाशी प्राधिकार जारी करने और उक्त पते पर तलाशी के उद्देश्य से सी.जी.ए.टी. - दिल्ली उत्तर के एक निरीक्षक को नियुक्त करने का अनुरोध किया था । निश्चित रूप से इस दलील को याचिकाकर्ता द्वारा विवादित किया गया तथा अन्तिम चरण में, इसकी

गहराई से जांच की जानी चाहिए, लेकिन अभी के लिए, हम अधिकारिता के बिना तलाशी की कार्रवाई नहीं चाहते हैं ।

<u>प्रथमदृष्ट्या प्रक्रम पर, जो आशंकाएं हैं वह यह है कि प्रत्यर्थियों का पक्षकथन है कि एक कर संग्रह तंत्र को एक संवितरण तंत्र में परिवर्तित किया गया है जैसे कि यह एक आर्थिक सहायता योजना थी ।</u>

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

51. वर्तमान मामलों के तथ्यों की ओर ध्यान देते हुए, रिट याचिका (सि.) सं. 5454/2020 में रोक हटाने के आवेदन में, प्रत्यर्थियों द्वारा निम्नलिखित प्रकथन किए गए हैं :–

> "(iii) उक्त 04 फर्मों के स्वत्वधारीयों के बयान दर्ज किए गए थे । अपने बयानों में, स्वत्वधारियों अर्थात् मैसर्स मोनल एंटरप्राइजेज के दीपक कुमार मिश्रा, मैसर्स माइक्रा ओवरसीज के श्री संतोष प्रसाद और मैसर्स गणेशी आई.एन.सी. के श्री मनोज कुमार ने कहा कि उन्हें इन फर्मों के बारे में कुछ भी पता नहीं है, उन्होंने केवल श्री मुकेश कुमार को अपनी आईडी जैसे पैन कार्ड और आधार कार्ड प्रदान किए हैं और बहुत सारे कागजात/दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किए हैं । यह कि जांच में अब तक कुल 23 फर्जी/नकली फर्मों का पता चला है जो मजदूरों, ड्राइवरों, रसोइयों, गली में फेरीवालों आदि के नाम पर खोलें गए हैं । इन 23 फर्मों ने 63 करोड़ रुपए से अधिक के फर्जी आईजी.एस.टी. रिफंड का दावा किया है । उपरोक्त फर्मों के संबंध में तलाशी/सत्यापन भी किए गए थे और सभी उक्त फर्मों को अस्तित्वहीन/गैर-कार्यात्मक पाया गया है ।
>
> *** *** ***
>
> (v) जांच में आगे पता चला कि फर्मों के स्वत्वधारी छद्म व्यक्ति हैं जिन्हें माल के निर्यात पर धोखाधड़ी वाले आईजी.एस.टी. रिफंड का लाभ उठाने के लिए विभिन्न दस्तावेजों/कागजातों पर हस्ताक्षर करने के लिए लुभाया/मजबूर किया गया है । यह खुलासा हुआ है कि श्री दीपक कुमार मिश्रा, जिसे मैसर्स मोनल एंटप्राइजेज के स्वत्वधारी और लाभार्थी के रूप में दर्शाया गया है, वास्तव में

हरियाणा के गुरूग्राम में मैसर्स डुडलीज किचन में एक रसोइया के रूप में कार्यरत था, जिसकी पुष्टि, मैसर्स डुडलीज किचन के प्रबंधक ने अपने तारीख 15 मई, 2019 के पत्र के माध्यम से की है ।

(vi) यह कि, वर्तमान मामले में, श्री मनोज कुमार और श्री संतोष प्रसाद के साक्ष्य तारीख 27 अगस्त, 2019 को तथा श्री ज्ञानेंद्र कुमार (मैसर्स क्यूबो एंटरप्राइजेज के स्वत्वधारी) का साक्ष्य तारीख 4 सितंबर, 2019 को दर्ज किया गया था, जिसमें उन्होनें स्पष्ट रूप से बताया है कि श्री ध्रुव मग्गू आईजी.एस.टी. रिफंड रैकेट के धोखाधड़ी वाले लाभ में श्री रमेश वढ़ेरा जो इस रैकेट का मुख्य मास्टरमाइंड है, उसके पिता श्री संजीव मग्गू और उसका भाई श्री अखिल कृष्ण मग्गू के साथ सक्रिय रूप से शामिल है । यहां यह उल्लेख करना उचित है कि एस. रमेश वढ़ेरा के खिलाफ डीआरआई/ सीमा शुल्क के कई पुराने मामले हैं और वह एक आदतन अपराधी है और उसने प्रत्यर्थी के पिता श्री संजीव मग्गू के साथ पहले भी आर्थिक अपराध के इसी तरह के रैकेट को अंजाम दिया है, जिसमें सरकारी राजकोष को धोखा देने के उद्देश्य से भोले-भाले व्यक्तियों के नाम पर स्वत्वधारी/साझेदारी फर्म बनाई गई थी.....।

*** *** ***

(viii) सी.जी.ए.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 70 सहपठित आईजी.एस.टी. अधिनियम, 2017 की धारा 20 के अंतर्गत श्री ध्रुव मग्गू का स्वैच्छिक साक्ष्य दर्ज किया गया था, जिसमें उसने स्वीकार किया है कि उसका भाई श्री अखिल मग्गू और वह व्यापारिक भागीदार हैं, यह कि उन्होंने विभिन्न गरीब व्यक्तियों के नाम पर कई फर्म और उनके बैंक खाते खोले हैं जिनकी आईडी श्री मुकेश कुमार के माध्यम से हासिल की गई हैं, जो उनके प्रबंधक हैं, भुगतान के आधार पर, जी.एस.टी. पंजीकरण प्रक्रिया और प्रलेखीकरण उनके तीन भागीदारों द्वारा श्री मुकेश कुमार के सहयोग से संभाला जाता है । सामानांतर रूप से, इन फर्मों के संबंध में डीजीएफटी से आईईसी भी प्राप्त किया जाता है । फिर वे

कचरे या निम्न गुणवत्ता वाले सामान की व्यवस्था करते हैं और उपरोक्त निर्मित फर्मों के नाम पर उसी का निर्यात करते हैं, सामानांतर रूप से, वे इन फर्मों के जी.एस.टी. रिटर्न दाखिल करते हैं और इन फर्मों से आईटीसी द्वारा जी.एस.टी. देयता का भुगतान करते हैं । फिर वे सरकार से नकली आईटीसी द्वारा निर्यात पर भुगतान किए गए जी.एस.टी. के संबध में आई जी.एस.टी. रिफंड का दावा करते हैं । फिर निर्यातक फर्मों के खाते में प्राप्त आई जी.एस.टी. रिफंड राशि उसके भागीदारों द्वारा अन्य खातों में स्थानांतरित कर दी जाती है और फिर इन अन्य खातों से नकदी के रूप में पैसा निकाल लिया जाता है । इस प्रकार निकाली गई नकदी उसके भागीदरों द्वारा प्राप्त की जाती है और फिर निर्यात की पूरी प्रक्रिया के दौरान कमीशन या अन्य खर्चों को समायोजित करने के बाद भागीदारों के बीच वितरित की जाती है । यह कि वह बीजक जारी करने के बाद, वह उन्हें या तो अपने भाई श्री अखिल मग्गू या अपने पिता श्री संजीव मग्गू या श्री रमेश वढ़ेरा को सौंप देता था, जो फिर उन्हीं बीजकों का उपयोग करके निर्यात से संबंधित प्रलेखीकरण औपचारिकताओं को पूर्ण करते हैं ।"

52. इसी प्रकार, रिट याचिका (सिविल) सं. 10130/2020 में याचियों के खिलाफ गंभीर आरोप लगाए गए हैं । प्रति-शपथपत्र का प्रासंगिक भाग अधोलिखित रूप से उदधृत है :–

"II. सिस्टम से प्राप्त डाटा के अवलोकन पर पाया गया है कि मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड ने 196.28 करोड़ रुपए के बीजक जुटाए थे जिसमें वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड को 5.88 करोड़ रुपए जिसमें एन.एस. सॉफ्टवेयर को 46.72 लाख रुपए की जी.एस.टी. शामिल थी जो कुल मिलाकर वस्तुओं का मूल्य 211.86 करोड़ रुपए का है तथा 6.35 करोड़ रुपए के बीजक जुटाए थे जिसमें मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड ने 211.81 करोड़ रुपए के बीजक जुटाए थे जिसमें मैसर्स के.पी. एंड संस को 6.35 करोड़ रुपए की जी.एस.टी. शामिल है और मैसर्स के.पी. एंड संस ने 211.89 करोड़ रुपए के बीजक जुटाए थे जिसमें

मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड को 6.35 करोड़ रुपए की जी.एस.टी. शामिल है जिससे पूरा चक्र पूर्ण हो जाता है ।

III. इन पक्षों के बीच उपरोक्त लेन-देन केवल पांच महीनों में हुआ है अर्थात् जनवरी 2018, फरवरी 2018, मार्च 2018, फरवरी 2019 और मार्च, 2019 । साथ ही, यह पाया गया कि इन सभी कंपनियों ने एक ही दिन अपने बीच बीजक जुटाए हैं । उदाहरण के लिए, तारीख 30 जनवरी, 2018 को, मैसर्स के.पी. एंड संस ने 2,70,000/- रुपए का एक बिक्री बीजक जुटाया जिसमें मैसर्स राजदरबार कमेडिटीज प्राइवेट लिमिटेड को 8,10,000/- रुपए की जी.एस.टी. शामिल है, मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड को 8,09,730/- रुपए का जी.एस.टी. शामिल है, मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड ने तब 2,69,95,500/- रुपए का बिक्री बीजक तारीख 30 जनवरी, 2018 जुटाया जिसमें 8,09,865/- रुपए का जी.एस.टी. शामिल है । इन सभी पक्षकारगण द्वारा आपस में उठाए गए सभी बीजकों हेतु इस प्रथा का पालन किया गया है ।

IV. यह कि तारीख 30 जनवरी, 2018 को, पहली बार जब मैसर्स के.पी. एंड संस ने मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड के लिए जी.एस.टी.आर-2ए के अनुसार 4.5 करोड़ रुपए के स्वर्ण सर्राफा बाजार के लिए बिक्री बीजक तैयार किया था तब उनके पास केवल 2.95 करोड़ रुपए मूल्य के स्वर्ण सर्राफा बाजार के स्टॉक में थे । इसलिए, केवल 2.95 करोड़ रुपए मूल्य के स्वर्ण सर्राफा बाजार के स्टॉक के साथ, मैसर्स के.पी. एंड संस ने मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड के लिए 211.89 करोड़ रुपए के बिक्री बीजक जुटाए थे और मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड से कुल 211.81 करोड़ रुपए के स्वर्ण बुलियन खरीदे । उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि इन उपरोक्त संस्थाओं द्वारा एक दूसरे के साथ माल का व्यापार किया जा रहा था और इन फर्मों द्वारा सभी जी.एस.टी. भुगतान आईटीसी के माध्यम से एक-दूसरे को किए जाते रहे । इसके अलावा, इन फर्मों के जी.एस.टी.आर-2ए के विश्लेषण से पाया गया है कि उपरोक्त लेन-देन को छोड़कर

उपरोक्त में से किसी भी फर्म ने न तो स्थानीय रूप से और न ही आयत द्वारा 211 करोड़ रुपए का सोना खरीदा है ।

*** *** ***

VII. उपर्युक्त सभी स्थानों पर तारीख 23 नवंबर, 2020 को तलाशी ली गई और श्री वासुदेव गर्ग, मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड के निदेशक का बयान मौके पर दर्ज किया गया । श्री वासुदेव गर्ग ने सूचित किया कि मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड, मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड और मैसर्स एन.एस. सॉफ्टवेयर सभी राजदरबार समूह की फर्में हैं ।उसने आगे कहा कि माल अर्थात् मैसर्स के.पी. एंड संस, मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड, मैसर्स एन.एस. सॉफ्टवेयर और मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड के बीच किए गए व्यापारिक लेन-देन में शामिल स्वर्ण की सर्राफा बाजार में कोई आपूर्ति नहीं हुई थी । उसने अपनी गलती मानी और डीआरसी-3 चालानों के माध्यम से अब तक तारीख 24 नवंबर, 2020, 1 जनवरी, 2020, 3 दिसंबर, 2020, और 8 दिसंबर, 2020 को 4.5 करोड़ रुपए बतौर जी.एस.टी. जमा किए ।

VIII. डीआईएन सं. 20201151 जेडके 000044254ए के अंतर्गत जारी समन के जवाब में तारीख 26 नवंबर, 2020 को अभिलिखित श्री गौरव अग्रवाल, मैसर्स के.पी. एंड संस के स्वत्वधारी का साक्ष्य भी दर्ज किया गया था । श्री गौरव अग्रवाल ने स्वेच्छा से दर्ज किए गए अपने साक्ष्य में यह भी कहा कि माल अर्थात् स्वर्ण सर्राफा बाजार में कभी परिवर्तन नहीं किया क्योंकि वे मैसर्स वर्टिकल व्यापार प्राइवेट लिमिटेड से समान मात्रा में गोल्ड बुलियन खरीदते थे जो वे मैसर्स राजदरबार कमोडिटीज प्राइवेट लिमिटेड को उसी दिन बेचते थे । श्री गौरव अग्रवाल ने अपनी गलती स्वीकार की तथा दलील दी कि वह लागू ब्याज और जुर्माने के साथ किसी भी बकाया या देनदारियों का भुगतान करने के लिए तैयार हैं ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

53. निष्कर्षतः, प्रथमदृष्ट्या प्रक्रम से जो उद्भूत होता है वह यह है कि यह प्रत्यर्थी का पक्षकथन है कि एक कर संग्रह तंत्र को एक संवितरण तंत्र में परिवर्तित कर दिया गया है जैसे कि यह कोई आर्थिक सहायता सब्सिडी योजना थी ।

गंभीर आरोपों को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय इस प्रक्रम पर और रिट कार्यवाहियों में भी हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं समझता है । उसी समय पर, निर्दोष व्यक्तियों को गिरफ्तार या प्रताड़ित नहीं किया जा सकता है । परिणामत: पक्षकारों को संवैधानिक उपचारों का लाभ उठाने की स्वतंत्रता के साथ अंतरिम संरक्षण हेतु आवेदनों को खारिज किया जाता है ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

54. यह सुस्थिर विधि है कि यद्यपि संवैधानिक न्यायालयों की शक्तियां व्यापक और विवेकाधीन हैं, फिर भी ऐसी शक्तियों के प्रयोग में कुछ बंधन मौजूद हैं । **हेमा मिश्रा** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि इस तथ्य के बावजूद कि उत्तर प्रदेश में गिरफ्तारी-पूर्व जमानत के सम्बन्ध में उपबंध इसे का विनिर्दिष्टतः लोप है, रिट अधिकारिता के अधीन शक्ति का प्रयोग अत्यंत संयम से किया जाना चाहिए ।

55. इस न्यायालय का मत है कि यह आरोप कि कर संग्रह तंत्र को संवितरण तंत्र में परिवर्तित कर दिया गया है, में निश्चित रूप से जांच की आवश्यकता है । तद्नुसार, यह न्यायालय इस प्रक्रम पर और वह भी रिट कार्यवाही में जांच में हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं समझता है । साथ ही, निर्दोष व्यक्तियों को गिरफ्तार या परेशान नहीं किया जा सकता है । इस न्यायालय को कोई संदेह नहीं है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने जमानत या रिमांड या जमानत रद्द करने पर विचार करते समय 'गेहूं को भूसे से अलग करेगा और यह सुनिश्चित करेगा कि किसी निर्दोष व्यक्ति जिसके खिलाफ निराधार आरोप लगाए गए हैं, उसे पुलिस/न्यायिक हिरासत में न भेजा जाए ।

---

[1] (2014) 4 एस. सी. सी. 453.

56. परिणामतः, पूर्वोक्त टिप्पणियों और स्वतंत्रता के साथ, अंतरिम राहत के लिए रिट याचिका (सिविल) सं. 10130/2020 में सिविल प्रकीर्ण सं. 32276/2020 के साथ-साथ रिट याचिका (सिविल) सं. 5454/2020 में अंतरिम राहत के लिए प्रार्थना को याचियों को वैधानिक उपायों का लाभ उठाने की स्वतंत्रता प्रदान किए जाने के साथ खारिज किया जाता है और रिट याचिका (सिविल) सं. 5454/2020 में प्रत्यर्थी सं. 2 व 3 द्वारा दायर सिविल प्रकीर्ण सं. 28105/2020 को अनुमति प्रदान की जाती है और रिट याचिका (सिविल) सं. 5454/2020 में पारित अंतरिम आदेश तारीख 20 अगस्त, 2020 को बातिल किया जाता है ।

57. यह स्पष्ट किया जाता है कि इसमें की गई टिप्पणियां प्रथमदृष्ट्या हैं और वर्तमान रिट याचिकाओं की अंतिम बहस के प्रक्रम पर या अंतरिम संरक्षण की कार्यवाही में किसी भी पक्षकार पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेंगी ।

रिट याचिका (सिविल) सं. 5454/2020 एवं रिट याचिका (सिविल) सं. 10130/2020

पूर्व निर्धारित तिथि पर नियमित रोस्टर पीठ के समक्ष सूचीबद्ध किया जाए ।

रिट याचिका भागतः मंजूर की गई ।

मही./क.

निर्मला देवी (श्रीमती)

बनाम

अनिल कुमार तिवारी

(2018 की प्रथम अपील सं. 1197)

तारीख 30 नवंबर, 2021

न्यायमूर्ति पुरुशैन्द्र कुमार कौरव

कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 (1984 का 66) – धारा 19 [सपठित हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 5, 9, 11 और 13] – अपील – पति-पत्नी के विवाह की तारीख पर पत्नी का पूर्ववर्ती पति का जीवित होना – पूर्ववर्ती विवाह के समय पत्नी की आयु लगभग 10 वर्ष होना – पूर्ववर्ती पति के जीवित होने के आधार पर पति द्वारा विवाह को अकृत और शून्य घोषित कराने की अर्जी – अर्जी मंजूर किया जाना – आक्षेप – यदि वर्तमान पति-पत्नी के बीच विवाह होने की तारीख पर यह पाया जाता है कि पत्नी का पूर्व में विवाह हो चुका है और पूर्ववर्ती पति जीवित है तो वर्तमान विवाह का पति, पत्नी के पूर्ववर्ती पति के जीवित होने के आधार पर वर्तमान विवाह को अकृत और शून्य घोषित करा सकता है ।

वर्तमान मामले में, दोनों पक्षकारों के बीच विवाह तारीख 18 मई, 2014 को हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार ग्राम खंडोरा तहसील देवसर जिला सिंगरौली (म.प्र) में अनुष्ठापित हुआ था । अपीलार्थी-पत्नी का विवाह पहले ही वर्ष 1984 में हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार अमरजीत पाण्डेय नामक व्यक्ति के साथ हो चुकी थी, जब उसकी आयु मात्र 8-10 वर्ष थी । अपीलार्थी-पत्नी का अपने पूर्व पति अमरजीत पाण्डेय के साथ विवाह तारीख 15 जुलाई, 2015 को अपर जिला न्यायाधीश देवसर जिला सिंगरौली द्वारा अधिनियम, 1955 की धारा 13(ख) के अधीन पारित निर्णय एवं डिक्री (प्रदर्श-डी-7) द्वारा विघटित हो गया था । तारीख 14 मई, 2015 को प्रत्यर्थी-पति ने अपीलार्थी के साथ विवाह को इस आधार

पर शून्य और अकृत घोषित करने के लिए कुटुंब न्यायालय के समक्ष अधिनियम, 1955 की धारा 11 के अधीन एक अर्जी फाइल की कि इससे अधिनियम, 1955 की धारा 5(i) का उल्लंघन होता है, क्योंकि विवाह की तिथि पर अपीलार्थी का एक जीवित पति था, जो आक्षेपित निर्णय और डिक्री द्वारा डिक्रीत किया गया है, इसलिए, यह अपील पत्नी द्वारा फाइल की गई है । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस अपील में हमारे विचारार्थ निम्नलिखित प्रश्न उद्भूत होते हैं कि क्या विवाह की तिथि अर्थात् तारीख 18 मई, 2014 को पक्षकारों के बीच अपीलार्थी/पत्नी का कोई जीवित पति/पत्नी विद्यमान था ? क्या अपीलार्थी/पत्नी का वर्ष 1984 में अमरजीत पाण्डेय के साथ हुआ विवाह, अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) के अनुसार अकृत और शून्य है और इसलिए, उन पर अधिनियम, 1955 की धारा 5(i) के उपबंध लागू नहीं होते हैं ? प्रत्यर्थी-पति ने कुटुंब न्यायालय के समक्ष स्वयं को साक्षी के रूप में परीक्षा कराई है, जिसकी अपीलार्थी-पत्नी द्वारा गहनता से प्रतिपरीक्षा की गई । कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में उसने स्पष्ट रूप से कथन किया कि तारीख 18 मई, 2014 को अपीलार्थी के साथ उसके विवाह की तिथि पर उसे अपीलार्थी का अमरजीत पाण्डेय के साथ पूर्ववर्ती विवाह के विषय में कोई जानकारी नहीं थी । तारीख 15 मई, 2014 को, अर्थात् वर्तमान विवाह से लगभग दो माह पूर्व, अपीलार्थी ने अमरजीत पाण्डेय के साथ अपने पूर्ववर्ती विवाह के विघटन के लिए मामला फाइल किया था और उक्त तिथि को उसने एक शपथपत्र भी निष्पादित किया था, तथापि, उक्त अर्जी, अभियोजित नहीं की गई और इसलिए, पुनः तारीख 15 जुलाई, 2015 को प्रदर्श डी-7 द्वारा, अधिनियम, 1955 की धारा 13(ख) के अधीन पूर्ववर्ती विवाह को विघटित कर दिया गया था । प्रत्यर्थी ने श्याम किशोर दुबे की भी परीक्षा की, जिन्होंने भी अमरजीत पाण्डेय के साथ अपीलार्थी के पूर्ववर्ती विवाह के अस्तित्व के तथ्य का समर्थन किया है । अपीलार्थी और अमरजीत पाण्डेय द्वारा अतिरिक्त जिला न्यायालय देवसर, जिला सिंगरौली के न्यायालय के समक्ष तारीख 15 मई, 2014 को धारा 13(ख) के अधीन फाइल अर्जी की प्रमाणित प्रति प्रदर्श पी-2 के रूप में प्रत्यर्थी-पति द्वारा प्रस्तुत की गई है । अपीलार्थी-पत्नी स्वयं साक्षी के

रूप में हाजिर हुई और उसने कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपने पक्षकथन को पुष्ट करने के लिए पूर्णेंद्र प्रकाश चतुर्वेदी और गुलाब प्रसाद पाण्डेय को भी साक्षी के रूप में हाजिर किया । अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य के अनुसार, उसका पक्षकथन यह है कि वह अमरजीत पाण्डेय के साथ कभी नहीं रही और अमरजीत पाण्डेय के साथ उसका विवाह तब हुआ जब वह मात्र 8-10 वर्ष की थी । चूंकि अमरजीत पाण्डेय के साथ उसका विवाह, अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) के अनुसार अवैध था, इसलिए, यद्यपि डिक्री और विवाह-विच्छेद की कोई अपेक्षा नहीं थी, फिर भी उसने अधिनियम, 1955 की धारा 13(ख) के अधीन सक्षम न्यायालय के समक्ष आवेदन किया और अंतत: अमरजीत पाण्डेय के साथ उसके विवाह को विघटित करने वाले विवाह-विच्छेद का डिक्री पारित किया गया था । प्रश्नवार चर्चा प्रश्न सं. (क) के संबंध में चर्चा-क्या विवाह की तिथि अर्थात् तारीख 18 मई, 2014 को पक्षकारों के बीच अपीलार्थी का कोई जीवित पति विद्यमान था ? पक्षकारों के द्वारा दिए गए साक्ष्य से यह देखा गया है कि अपीलार्था का अमरजीत पाण्डेय के साथ वर्ष 1984 में पूर्ववर्ती विवाह होने का तथ्य विवादित नहीं है । धारा 13(ख) के अधीन विवाह-विच्छेद की डिक्री (प्रदर्श डी-7) तारीख 15 जुलाई, 2018 से स्पष्ट रूप से साबित होता है कि अपीलार्थी का तारीख 18 मई, 2014 तक अमरजीत पाण्डेय नामक एक जीवित पति था । विवाह तारीख 15 जुलाई, 2015 को ही विघटित हो गया था, इसलिए, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि तारीख 18 मई, 2014 तक अपीलार्थी का एक जीवित पति था । अधिनियम, 1955 की धारा 5(i) और धारा 11 को ध्यानपूर्वक परिशीलन करने से यह स्पष्ट होता है कि यदि विवाह के समय किसी भी पक्षकार का पति या पत्नी जीवित हैं और यदि ऐसा विवाह अधिनियम, 1955 के प्रारंभ होने के पश्चात् हुआ है, तो यह विधित: शून्य है । यह तथ्य कि दूसरे पक्ष को विवाह के समय विद्यमान पति या पत्नी के जीवित होने का ज्ञान था, यह तत्वहीन है । प्रश्न सं. (ख) के संबंध में – क्या अपीलार्थी का वर्ष 1984 में अमरजीत पाण्डेय के साथ अनुष्ठापित विवाह, अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) को ध्यान में रखते हुए अकृत एवं शून्य कहा जा सकता है ? अधिनियम, 1955 की धारा 11 मात्र उन

विवाहों को अकृत एवं शून्य घोषित करती है जो अधिनियम के प्रारंभ होने के पश्चात् अनुष्ठापित हुए हों यदि ऐसे विवाह धारा 5 के खंड (i), (iv) और (v) में निर्दिष्ट किसी भी शर्त का उल्लंघन करते हों । धारा 5 का खंड (i) विवाह के समय जीवित पति या पत्नी के विषय में उपबंधित है, धारा 5 का खंड (iv) प्रतिषिद्ध नातेदारी की डिग्री के भीतर पक्षकारों के बारे में उपबंधित है, जब तक कि उनमें से प्रत्येक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा दो के बीच विवाह की अनुमति नहीं देता है तथा खंड (v) में कहा गया है कि पक्षकारों को एक दूसरे का सपिंड नहीं होना चाहिए, जब तक कि उनमें से प्रत्येक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा दो के बीच विवाह की अनुमति नहीं देता है । इसलिए, यह दर्शित होता है कि अधिनियम, 1955 की धारा 11 की स्कीम में यह परिकल्पना नहीं की गई है कि अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) का उल्लंघन विवाह को शून्य घोषित कर देगा, न ही अधिनियम, 1955 की धारा 12 में ऐसे विवाह को शून्यकरणीय घोषित करने की परिकल्पना की गई है । इसलिए, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी का वर्ष 1984 में अमरजीत पाण्डेय के साथ हुआ विवाह न तो शून्य है और न ही शून्यकरणीय है । अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) के उल्लंघन के एकमात्र परिणाम अधिनियम, 1955 की धारा 18 के अधीन विहित किए गए हैं, जहां ऐसी शर्त का उल्लंघन दंडनीय है जो दो वर्ष तक कारावास या जुर्माना जो एक लाख रुपये तक हो सकता है या दोनों हो सकता है तथा अधिनियम, 1955 के अधीन कोई अन्य परिणाम उपबंधित नहीं किया गया है । वर्तमान मामले में, यह सत्य है कि वर्ष 1984 में अपीलार्थी की अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) के अनुसार विवाह योग्य आयु नहीं था, लेकिन जब विधि, अधिनियम, 1955 की धारा 18 के अधीन विहित परिणामों के अतिरिक्त किसी अन्य परिणाम को उपबंधित नहीं करती है, तो यह उपधारणा नहीं की जा सकती है कि ऐसा विवाह अकृत है । इस प्रकार, अपीलार्थी का विवाह जो वर्ष 1984 में अमरजीत पाण्डेय के साथ अनुष्ठापित हुआ था वह विधिमान्य, प्रवर्तनीय और मान्यता प्राप्त बना रहेगा । (पैरा 6, 7, 8 और 9)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2018 की प्रथम अपील सं. 1197.

2015 के सिविल वाद सं. 48-ए में प्रधान न्यायाधीश कुटुंब न्यायालय रीवा द्वारा पारित तारीख 13 अप्रैल, 2018 के उस निर्णय एवं डिक्री के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री कमल सिंह बघेल

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री दिलीप कुमार पाण्डेय

न्यायमूर्ति पुरुशैन्द्र कुमार कौरव – यह अपील, पत्नी के द्वारा कुटुंब न्यायालय अधिनियम 1984 की धारा 19 के अधीन प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, रीवा द्वारा 2015 के सिविल वाद सं. 48-ए में पारित तारीख 13 अप्रैल, 2018 के उस निर्णय एवं डिक्री के विरुद्ध पत्नी के द्वारा फाइल की गई है, जिसके द्वारा हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 [इसके पश्चात् संक्षेप में '1955 का अधिनियम'] की धारा 11 के अंतर्गत प्रत्यर्थी-पति की अर्जी को मंजूर किया गया है तथा पक्षकारों के बीच अनुष्ठापित विवाह को अकृत और शून्य घोषित कर दिया गया है ।

2. वर्तमान अपील के विनिश्चय हेतु कुछ स्वीकृत तथ्य निम्नलिखित हैं :–

(i) दोनों पक्षकारों के बीच विवाह तारीख 18 मई, 2014 को हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार ग्राम खंडोरा तहसील देवसर जिला सिंगरौली (म.प्र.) में अनुष्ठापित हुआ था ।

(ii) अपीलार्थी-पत्नी का विवाह पहले ही वर्ष 1984 में हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार अमरजीत पाण्डेय नामक व्यक्ति के साथ हो चुकी थी, जब उसकी आयु मात्र 8-10 वर्ष थी ।

(iii) अपीलार्थी-पत्नी का अपने पूर्व पति अमरजीत पाण्डेय के साथ विवाह तारीख 15 जुलाई, 2015 को अपर जिला न्यायाधीश देवसर जिला सिंगरौली द्वारा अधिनियम, 1955 की धारा 13(ख) के अधीन पारित निर्णय एवं डिक्री (प्रदर्श-डी-7) द्वारा विघटित हो गया था ।

(iv) तारीख 14 मई, 2015 को प्रत्यर्थी-पति ने अपीलार्थी के साथ विवाह को इस आधार पर शून्य और अकृत घोषित करने के लिए कुटुंब न्यायालय के समक्ष अधिनियम, 1955 की धारा 11 के अधीन एक अर्जी फाइल की कि इससे अधिनियम, 1955 की धारा 5(i) का उल्लंघन होता है, क्योंकि विवाह की तिथि पर अपीलार्थी का एक जीवित पति था, जो आक्षेपित निर्णय और डिक्री द्वारा डिक्रीत किया गया है, इसलिए, यह अपील पत्नी द्वारा फाइल की गई है ।

3. अपीलार्थी-पत्नी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने मुख्य रूप से निम्नलिखित आधार उद्भूत किए हैं :–

(i) अपीलार्थी का अमरजीत पाण्डेय के साथ पूर्व विवाह, प्रत्यर्थी-पति के ज्ञान में था और उक्त तथ्य के बावजूद विवाह अनुष्ठापित हुआ था, इसलिए, प्रत्यर्थी बाद में पूर्ववर्ती विवाह का अभिवाक् नहीं ले सकता ।

(ii) अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) के अनुसार, किसी भी वैध विवाह के लिए, विवाह के समय वर और वधू की आयु क्रमशः 18 और 21 वर्ष होनी चाहिए । चूंकि, वर्तमान मामले में अपीलार्थी का विवाह वर्ष 1984 में उस समय हुआ था जब उसकी आयु मात्र 8-10 वर्ष थी, इसलिए, इस तरह के अवैध विवाह को कानून की दृष्टि में वैध विवाह नहीं माना जा सकता है ।

(iii) तारीख 13 अप्रैल, 2018 को आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री की तिथि को वर्ष 1984 का तथाकथित पूर्ववर्ती विवाह सक्षम न्यायालय द्वारा अधिनियम, 1955 की धारा 13(ख) के अधीन तारीख 15 जुलाई, 2015 के निर्णय एवं डिक्री (प्रदर्श डी-7) द्वारा पूर्व में ही विघटित कर दिया गया था, और इसलिए, आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री पारित होने की तिथि को अपीलार्थी का कोई जीवित पति नहीं था ।

4. प्रत्यर्थी-पति की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी-पत्नी द्वारा किए गए निवेदनों का जोरदार खंडन किया है और निम्नलिखित निवेदन किए हैं :–

(i) प्रत्यर्थी को अपीलार्थी का अमरजीत पाण्डेय के साथ पूर्व में हुए विवाह के तथ्य की जानकारी नहीं थी और अन्यथा भी, अधिनियम, 1955 की धारा 11 और 5(i) के विशिष्ट उपबंध को ध्यान में रखते हुए ऐसी जानकारी तत्वहीन है ।

(ii) अधिनियम, 1955 की धारा 5(i) के प्रावधान की अपेक्षा यह है कि दो हिंदुओं के बीच विवाह के समय किसी भी पक्षकार का जीवित पति या पत्नी नहीं होने चाहिए और अधिनियम, 1955 की धारा 5(i) के उपबंध के उल्लंघन के परिणाम, अधिनियम, 1955 की धारा 11 में स्पष्ट रूप से विहित हैं, जिसमें कहा गया है कि अधिनियम के प्रारंभ होने के पश्चात् किया गया ऐसा कोई भी विवाह किसी भी पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार के विरुद्ध प्रस्तुत अर्जी पर अकृत और शून्य हो जाएगा ।

(iii) तारीख 15 जुलाई, 2015 के निर्णय और डिक्री (प्रदर्श डी-7) द्वारा अपीलार्थी के पूर्ववर्ती विवाह को विघटित घोषित करने का तथ्य उसके पक्षकथन को और सुदृढ़ करने के साथ ही संदेह से परे साबित करता है कि प्रत्यर्थी और अपीलार्थी के विवाह की तिथि अर्थात् तारीख 18 मई, 2014 को अपीलार्थी का एक जीवित पति था ।

5. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना तथा अभिलेख का परिशीलन किया ।

6. इस अपील में हमारे विचारार्थ निम्नलिखित प्रश्न उद्भूत होते हैं :–

(क) क्या विवाह की तिथि अर्थात् तारीख 18 मई, 2014 को पक्षकारों के बीच अपीलार्थी/पत्नी का कोई जीवित पति/पत्नी विद्यमान था ?

(ख) क्या अपीलार्थी/पत्नी का वर्ष 1984 में अमरजीत पाण्डेय के साथ हुआ विवाह, अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) के अनुसार अकृत और शून्य है और इसलिए, उन पर अधिनियम, 1955 की धारा 5(i) के उपबंध लागू नहीं होते हैं ?

7. प्रत्यर्थी-पति ने कुटुंब न्यायालय के समक्ष स्वयं को साक्षी के रूप में परीक्षा कराई है, जिसकी अपीलार्थी-पत्नी द्वारा गहनता से प्रतिपरीक्षा की गई । कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में उसने स्पष्ट रूप से कथन किया कि तारीख 18 मई, 2014 को अपीलार्थी के साथ उसके विवाह की तिथि पर उसे अपीलार्थी का अमरजीत पाण्डेय के साथ पूर्ववर्ती विवाह के विषय में कोई जानकारी नहीं थी । तारीख 15 मई, 2014 को, अर्थात् वर्तमान विवाह से लगभग दो माह पूर्व, अपीलार्थी ने अमरजीत पाण्डेय के साथ अपने पूर्ववर्ती विवाह के विघटन के लिए मामला फाइल किया था और उक्त तिथि को उसने एक शपथपत्र भी निष्पादित किया था, तथापि उक्त अर्जी, अभियोजित नहीं की गई और इसलिए, पुनः तारीख 15 जुलाई, 2015 को प्रदर्श डी-7 द्वारा, अधिनियम, 1955 की धारा 13(ख) के अधीन पूर्ववर्ती विवाह को विघटित कर दिया गया था । प्रत्यर्थी ने श्याम किशोर दुबे की भी परीक्षा की, जिन्होंने भी अमरजीत पाण्डेय के साथ अपीलार्थी के पूर्ववर्ती विवाह के अस्तित्व के तथ्य का समर्थन किया है । अपीलार्थी और अमरजीत पाण्डेय द्वारा अतिरिक्त जिला न्यायालय देवसर, जिला सिंगरौली के न्यायालय के समक्ष तारीख 15 मई, 2014 को धारा 13(ख) के अधीन फाइल अर्जी की प्रमाणित प्रति प्रदर्श पी-2 के रूप में प्रत्यर्थी-पति द्वारा प्रस्तुत की गई है ।

8. अपीलार्थी-पत्नी स्वयं साक्षी के रूप में हाजिर हुई और उसने कुटुंब न्यायालय के समक्ष अपने पक्षकथन को पुष्ट करने के लिए पूर्णेंद्र प्रकाश चतुर्वेदी और गुलाब प्रसाद पाण्डेय को भी साक्षी के रूप में हाजिर किया । अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य के अनुसार, उसका पक्षकथन यह है कि वह अमरजीत पाण्डेय के साथ कभी नहीं रही और अमरजीत पाण्डेय के साथ उसका विवाह तब हुआ जब वह मात्र 8-10 वर्ष की थी । चूंकि अमरजीत पाण्डेय के साथ उसका विवाह, अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) के अनुसार अवैध था, इसलिए, यद्यपि डिक्री और विवाह-विच्छेद की कोई अपेक्षा नहीं थी, फिर भी उसने अधिनियम, 1955 की धारा 13(ख) के अधीन सक्षम न्यायालय के समक्ष आवेदन किया और

अंतत: अमरजीत पाण्डेय के साथ उसके विवाह को विघटित करने वाले विवाह-विच्छेद का डिक्री पारित किया गया था ।

9. **प्रश्नवार चर्चा निम्नलिखित है** – प्रश्न सं. (क) के संबंध में चर्चा-क्या विवाह की तिथि अर्थात् तारीख 18 मई, 2014 को पक्षकारों के बीच अपीलार्थी का कोई जीवित पति विद्यमान था ?

(i) पक्षकारों के द्वारा दिए गए साक्ष्य से यह देखा गया है कि अपीलार्थी का अमरजीत पाण्डेय के साथ वर्ष 1984 में पूर्ववर्ती विवाह होने का तथ्य विवादित नहीं है । धारा 13(ख) के अधीन विवाह-विच्छेद की डिक्री (प्रदर्श डी-7) तारीख 15 जुलाई, 2018 से स्पष्ट रूप से साबित होता है कि अपीलार्थी का तारीख 18 मई, 2014 तक अमरजीत पाण्डेय नामक एक जीवित पति था । विवाह तारीख 15 जुलाई, 2015 को ही विघटित हो गया था, इसलिए, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि तारीख 18 मई, 2014 तक अपीलार्थी का एक जीवित पति था ।

(ii) अधिनियम, 1955 की धारा 5(i) और धारा 11 को ध्यानपूर्वक परिशीलन करने से यह स्पष्ट होता है कि यदि विवाह के समय किसी भी पक्षकार का पति या पत्नी जीवित हैं और यदि ऐसा विवाह अधिनियम, 1955 के प्रारंभ होने के पश्चात् हुआ है, तो यह विधित: शून्य है । यह तथ्य कि दूसरे पक्ष को विवाह के समय विद्यमान पति या पत्नी के जीवित होने का ज्ञान था, यह तत्वहीन है । लिली थॉमस और अन्य **बनाम** भारत संघ और अन्य (2000) 6 एस. सी. सी. 224 वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि धारा 5(i) सपठित धारा 11 से यह उपदर्शित होता है कि किसी व्यक्ति के साथ ऐसा कोई विवाह जो पूर्ववर्ती विवाह की तिथि पर अस्तित्व में था, आरंभ से ही शून्य होगा । उच्चतम न्यायालय ने कृष्णावेणी राय **बनाम** पंकज राय और अन्य (2020) 11 एस. सी. सी. 253 वाले मामले में, यह भी अभिनिर्धारित किया कि विवाह जो अकृत और शून्य है, विधि की दृष्टि में विवाह नहीं है ।

(iii) यद्यपि श्रीमती राजुला बाई **बनाम** सुका दुकाल ए. आई. आर. 1972 एम. पी. 57 वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के अनुसार, दूसरे विवाह के अनुष्ठापन्न के समय पर जीवित पति या पत्नी के अस्तित्व को प्रत्यक्ष साक्ष्य द्वारा सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है और इस तथ्य का अनुमान अन्य तथ्यों से लगाया जा सकता है, तथापि, पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर, यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि तारीख 18 मई, 2014 को अर्थात् प्रत्यर्थी-पति के साथ उसके विवाह की तिथि पर अपीलार्थी-पत्नी का एक जीवित पति विद्यमान था ।

प्रश्न सं. (ख) के संबंध में चर्चा – क्या अपीलार्थी का वर्ष 1984 में अमरजीत पाण्डेय के साथ अनुष्ठापित विवाह, अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) को ध्यान में रखते हुए अकृत एवं शून्य कहा जा सकता है ?

(i) अधिनियम, 1955 की धारा 11 मात्र उन विवाहों को अकृत एवं शून्य घोषित करती है जो अधिनियम के प्रारंभ होने के पश्चात् अनुष्ठापित हुए हों, यदि ऐसे विवाह धारा 5 के खंड (i), (iv) और (v) में निर्दिष्ट किसी भी शर्त का उल्लंघन करते हों । धारा 5 का खंड (i) विवाह के समय जीवित पति या पत्नी के विषय में उपबंधित है, धारा 5 का खंड (iv) प्रतिषिद्ध नातेदारी की डिग्री के भीतर पक्षकारों के बारे में उपबंधित है, जब तक कि उनमें से प्रत्येक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा दो के बीच विवाह की अनुमति नहीं देता है तथा खंड (v) में कहा गया है कि पक्षकारों को एक दूसरे का सपिंड नहीं होना चाहिए, जब तक कि उनमें से प्रत्येक को शासित करने वाली रूढ़ि या प्रथा दो के बीच विवाह की अनुमति नहीं देता है । इसलिए, यह दर्शित होता है कि अधिनियम, 1955 की धारा 11 की स्कीम में यह परिकल्पना नहीं की गई है कि अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) का उल्लंघन विवाह को शून्य घोषित कर देगा, न ही अधिनियम, 1955 की धारा 12 में ऐसे विवाह को शून्यकरणीय घोषित करने की परिकल्पना की गई है ।

(ii) इसलिए, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी का वर्ष 1984 में अमरजीत पाण्डेय के साथ हुआ विवाह न तो शून्य है और न ही शून्यकरणीय है । अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) के उल्लंघन के एकमात्र परिणाम अधिनियम, 1955 की धारा 18 के अधीन विहित किए गए हैं, जहां ऐसी शर्त का उल्लंघन दंडनीय है जो दो वर्ष तक कारावास या जुर्माना जो एक लाख रुपए तक हो सकता है या दोनों हो सकता है तथा अधिनियम, 1955 के अधीन कोई अन्य परिणाम उपबंधित नहीं किया गया है ।

(iii) वर्तमान मामले में, यह सत्य है कि वर्ष 1984 में अपीलार्थी की अधिनियम, 1955 की धारा 5(iii) के अनुसार विवाह योग्य आयु नहीं था, लेकिन जब विधि, अधिनियम 1955 की धारा 18 के अधीन विहित परिणामों के अतिरिक्त किसी अन्य परिणाम को उपबंधित नहीं करती है, तो यह उपधारणा नहीं की जा सकती है कि ऐसा विवाह अकृत है । यदि विधानमंडल का आशय अन्यथा होता, तो अधिनियम निश्चित रूप से उस संबंध में उसी रीति में एक विशिष्ट प्रावधान करता, जैसा कि गिन्दन **बनाम** बारेलाल ए. आई. आर. 1976 एम. .पी. 83 वाले मामले में, अधिनियम, 1955 की धारा 5 के खंड (i), (iv) और (v) के उल्लंघन के मामले में किया गया है । इस प्रकार, अपीलार्थी का विवाह जो वर्ष 1984 में अमरजीत पाण्डेय के साथ अनुष्ठापित हुआ था, वह विधिमान्य, प्रवर्तनीय और मान्यता प्राप्त बना रहेगा ।

10. पूर्वोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री, साक्ष्य तथा विधि की समुचित मूल्यांकन पर आधारित है । इसलिए, तद्नुसार, अपील खारिज की जाती है । खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

जा./क.

अनमोल कपूर और एक अन्य

बनाम

हिमाचल प्रदेश कर्मचारी चयन आयोग, हमीरपुर मार्फत इसके सचिव और अन्य

(2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1866 के साथ 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 2589, 1981)

तारीख 7 जनवरी, 2021

न्यायमूर्ति अजय मोहन गोयल

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित हिमाचल प्रदेश स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, रेडियोग्राफर श्रेणी-III (अराजपत्रित) भर्ती और प्रोन्नति नियम, 2011 और हिमाचल प्रदेश स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, रेडियोग्राफर श्रेणी-III (अराजपत्रित) भर्ती और प्रोन्नति नियम, 2016 का नियम 1 का उप-नियम 2] – रिट याचिका – संबंधित आयोग द्वारा नियम, 2016 के अधीन रेडियोग्राफर श्रेणी-III (अराजपत्रित) के पदों पर भर्ती के लिए विज्ञापन जारी करना – भर्ती के निबंधन और शर्तें पूर्ववर्ती नियम, 2011 के अधीन अवधारित करना – सफल अभ्यर्थियों द्वारा इस आधार पर आक्षेप करना कि वे विज्ञापन जारी करने के लिए प्रवृत्त नियमों के अधीन अर्ह थे, किन्तु आयोग द्वारा उन्हें अनर्ह घोषित करना – आक्षेप – यदि किसी राज्य/आयोग द्वारा राज्य में उपलब्ध किन्हीं पदों की भर्ती के लिए कोई विज्ञापन जारी किया जाता है तो उस विज्ञापन में विज्ञापित पदों के लिए निबंधन और शर्तें तत्समय प्रवृत्त नियमों/विधियों द्वारा ही शासित किए जा सकते हैं, भविष्य में प्रवृत्त होने वाले नियमों/विधियों द्वारा नहीं – यदि कोई राज्य/आयोग इस प्रक्रिया का उल्लंघन करता है तो वह विधि में अमान्य और मनमाना होगा ।

वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी/हि. प्र. कर्मचारी चयन आयोग, हमीरपुर ने विज्ञापन संख्या 33-2/2017 (उपाबंध पी-3) 2020 की रिट याचिका संख्या 1866 के साथ संलग्न, द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ स्वास्थ्य और परिवार कल्याण विभाग में संविदा के आधार पर कुल 154 रेडियोग्राफर के पदों के लिए आवेदन आमंत्रित किए थे । यह उल्लेख करना समीचीन है कि तत्पश्चात् विज्ञापित पदों की संख्या में कटौती कर दी गई थी किन्तु उसे इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ के विनिश्चय द्वारा पुनः बहाल कर दिया गया था, जैसा कि इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा 2019 की रिट याचिका संख्या 3371, शीर्षक रोबिन सिंह मेहता और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य वाले मामले में तारीख 12 नवम्बर, 2020 को विनिश्चित किया गया था और इस न्यायालय को सूचित किया गया है । विवादित पदों के लिए ऑनलाईन आवेदन तारीख 16 सितम्बर, 2017 से तारीख 15 दिसम्बर, 2017 के बीच प्रस्तुत किए जाने थे । विज्ञापन में यह उल्लिखित था कि आवश्यक अर्हताओं और अनुभव, यदि कोई हों, के संबंध में सभी अभ्यर्थियों की योग्यता अवधारित करने की तारीख, ऑनलाइन भर्ती आवेदन प्रस्तुत करने के लिए विहित अंतिम तारीख अर्थात् 15 अक्तूबर, 2017 थी । याची, जिन्होंने प्रश्नगत पदों में नियुक्ति हेतु विचार करने के लिए सम्यक् रूप से आवेदन किया था, प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग द्वारा उनके अभ्यर्थन को इस आधार पर नामंजूर करने से व्यथित हैं कि वे विज्ञापन में अधिकथित योग्यता मापदंड अर्थात् 'हिमाचल प्रदेश पैरा मेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत होना चाहिए' को पूरा नहीं करते हैं । याचियों में से दो आरम्भतः चयनित भी हुए थे किन्तु तत्पश्चात् उनके अभ्यर्थन को नामंजूर कर दिया गया था । इससे व्यथित होकर वर्तमान रिट याचिका फाइल की गई । न्यायालय द्वारा रिट याचिका मंजूर करते हुए

अभिनिर्धारित – आर एण्ड पी नियम, 2016 के नियम 1 के उप-नियम (2) में यह उपबंधित है कि उक्त नियम, राजपत्र हिमाचल प्रदेश में प्रकाशन की तारीख से प्रवर्तन में आएंगे । यह विवादित नहीं है कि आर

एण्ड पी नियम, 2016, तारीख 29 नवम्बर, 2017 को प्रकाशित हुए थे । इस प्रकार, आर एण्ड पी नियम, 2016 के नियम 1 के उप-नियम (2) के उपबंधों के निबंधनों में, ये नियम तारीख 29 नवम्बर, 2017 से प्रवर्तन में आए और पूर्ववर्ती आर एण्ड पी नियम, 2011 के स्थान पर ये नियम अस्तित्व में आए । यह प्रतीत होता है कि जब प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग ने रेडियोग्राफर के पद के लिए आवेदन आमंत्रित करते हुए विज्ञापन (उपाबंध पी-3) जारी किया था तब योग्यता शर्तें जो उसमें निहित थीं उन्हें आर एण्ड पी नियम, 2016 में परिकल्पित की गई थीं जो अभी तक प्रवर्तन में नहीं आई थीं जब विज्ञापन जारी किया गया था और जो संयोग से अभ्यर्थियों की अर्हता अवधारित करने के लिए विज्ञापन में परिकल्पित अंतिम तारीख तक भी प्रवर्तन में नहीं आ सकी थीं । फिर भी, उक्त विज्ञापन में अन्तर्विष्ट अतिरिक्त शर्तों के कारण कि अभ्यर्थी, हिमाचल प्रदेश पैरामेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत होना चाहिए, रेडियोग्राफर के पद के लिए वर्तमान याचियों का अभ्यर्थन रद्द हो गया है । पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल, जिनमें राज्य के विद्वान् ज्येष्ठ अपर महाधिवक्ता सम्मिलित हैं, को विस्तार से सुनने के पश्चात् इस न्यायालय का यह मत है कि याचियों की अभ्यर्थिता नामंजूर करना, इस आधार पर कि वे हि. प्र. पैरामेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत नहीं हैं, विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है । यह सुस्थिर विधि है कि एक पद पर साधारण भर्ती, भर्ती और प्रोन्नति नियमों के निबंधनों में की जाती है, जो उस समय पर शासित होती है जब उक्त पद में नियुक्ति के लिए आवेदन आमंत्रित करते हुए विज्ञापन जारी किए जाते हैं । वर्तमान मामले में, भर्ती और प्रोन्नति नियम उन क्षेत्रों को शासित करते हैं जो वर्ष 2011 में उद्घोषित किए गए थे जिसमें ऐसी कोई शर्त नहीं थी कि अभ्यर्थी को हि. प्र. पैरामेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत होना चाहिए । इस शर्त को 2016 के आर एण्ड पी नियमों में जोड़ा गया था जो तारीख 29 नवम्बर, 2017 को ही प्रभाव में आ सका था । इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं. 1 आयोग द्वारा याचियों को रेडियोग्राफर के पदों के लिए अयोग्य अभिनिर्धारित करने वाला कृत्य,

इस तथ्य के बावजूद की वे 2011 के आर एण्ड पी नियमों के निबंधनों में सम्यक् रूप से अर्ह थे जो उस सुसंगत समय पर लागू था, मनमाना है और विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है । तद्नुसार, ये याचिकाएं, 2011 के आर एण्ड पी के नियमों के निबंधनों में, जो तद्समय प्रवृत्त थी और उस क्षेत्र में लागू थीं जब रेडियोग्राफरों के 154 पदों की भर्ती के लिए विज्ञापन जारी किया गया था, रेडियोग्राफर के पद में नियुक्ति में विचार होने के लिए याचियों को अर्ह अभिनिर्धारित करते हुए मंजूर की जाती है और प्रत्यर्थी सं. 1 का विनिश्चय कि ऐसे याची अर्ह नहीं थे, विधि में दूषित है तथा इसे अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । तद्नुसार, प्रत्यर्थी/हिमाचल प्रदेश कर्मचारी चयन आयोग को यह परमादेश जारी किया जाता है वह याचियों को रेडियोग्राफर के पद में नियुक्ति हेतु विचार होने के लिए अर्ह के रूप में समझा जाए, यह भी अभिनिर्धारित करते हुए कि हि. प्र. पैरामेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत होने वाले अभ्यर्थी के विज्ञापन में उल्लिखित शर्त विधि में दूषित हैं । प्रक्रिया जो प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा अर्ह अभ्यर्थियों के साथ याचियों को समझते हुए अपने तार्किक निष्कर्ष के साथ पदों में नियुक्ति के लिए अपनाया जाए । यह स्पष्ट किया जाता है कि यह न्यायालय इस सीमा तक ही परमादेश रिट जारी किया है कि याची, आर एण्ड पी नियम, 2011 के निबंधनों में चयन प्रक्रिया में भाग लेने के लिए अर्ह हैं और इसके पश्चात्, निसंदेह उनका चयन जारी पद में नियुक्ति करने के लिए प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग द्वारा अपनाए जाने वाले मापदंड पर निर्भर करेगा । इस प्रक्रम पर, प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग की ओर से उद्भूत दलील का उल्लेख करना भी सुसंगत है कि विज्ञापन जारी करने में भूल होने के लिए प्रत्यर्थी सं. 1 उत्तरदायी नहीं है क्योंकि उन्होंने नियोजक विभाग द्वारा निवेदन के साथ उन्हें उपलब्ध कराई गई भर्ती और प्रोन्नति नियमों के अनुसार कार्य किया है । इन सभी को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त किया जा सकता है कि नियोजक के साथ ही प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग भविष्य में इस संबंध में सावधानी बरतेगें और यह सुनिश्चित करेंगे कि विज्ञापन उस समय पर उस क्षेत्र

को शासित करने वाले भर्ती और प्रोन्नति नियमों के अनुसरण में जारी किया जाए जब विज्ञापन जारी किया जाता है । विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने इस न्यायालय को यह आश्वासन दिया है कि इस संबंध में जारी सभी आवश्यक निर्देश सभी विभागों को जारी किया जाएगा । (पैरा 9, 10, 11, 12, 13 और 14)

रिट (सिविल) अधिकारिता : 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1866 के साथ 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 2589, 1981.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1866 में याचियों की ओर से श्री मोहित ठाकुर, अधिवक्ता

2020 की सिविल रिट याचिका सं. 2589 में याची की ओर से श्री नरेन्द्र शर्मा, अधिवक्ता

2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1981 में याची की ओर से सर्वश्री अजय शर्मा, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ अमित जामवाल, अधिवक्ता ।

प्रत्यर्थियों की ओर से 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1866 में प्रत्यर्थी सं. 1, 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 2589 में प्रत्यर्थी सं. 3 और 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1981 में प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से श्री संजीव कुमार मोत्ता, अधिवक्ता

2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1866 में प्रत्यर्थी सं. 3/राज्य, 2020 की

सिविल रिट याचिका सं. 2589 में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2/राज्य और 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1981 में प्रत्यर्थी सं. 1/राज्य की ओर से श्री अजय वैद्य, ज्येष्ठ अपर महाधिवक्ता

2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1866 में प्रत्यर्थी सं. 2 और 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 2589 में प्रत्यर्थी सं. 4 की ओर से श्री दलीप के. शर्मा, अधिवक्ता

2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1866 में प्रत्यर्थी सं. 4 से 13, 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 2589 में प्रत्यर्थी सं. 5 से 19 और 2020 की सिविल रिट याचिका सं. 1981 में प्रत्यर्थी सं. 3 और 4 की ओर से श्री योगेश कुमार चंदेल, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति अजय मोहन गोयल – ये तीनों रिट याचिकाएं एक ही निर्णय द्वारा निपटायी जानी हैं क्योंकि इनमें एकसमान तथ्य और विवाद्यक अन्तर्वलित हैं ।

2. प्रत्यर्थी/हि. प्र. कर्मचारी चयन आयोग, हमीरपुर ने विज्ञापन संख्या 33-2/2017 (उपाबंध पी-3) 2020 की रिट याचिका संख्या 1866 के साथ संलग्न, द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ स्वास्थ्य और परिवार कल्याण विभाग में संविदा के आधार पर कुल 154 रेडियोग्राफर के पदों के लिए आवेदन आमंत्रित किए थे । यह उल्लेख करना समीचीन है कि तत्पश्चात् विज्ञापित पदों की संख्या में कटौती कर दी गई थी किन्तु उसे इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ के विनिश्चय द्वारा पुनः बहाल कर दिया गया था, जैसा कि इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा 2019

की रिट याचिका संख्या 3371, शीर्षक रोबिन सिंह मेहता और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य वाले मामले में तारीख 12 नवम्बर, 2020 को विनिश्चित किया गया था और इस न्यायालय को सूचित किया गया है ।

3. विवादित पदों के लिए ऑनलाइन आवेदन तारीख 16 सितम्बर, 2017 से तारीख 15 दिसम्बर, 2017 के बीच प्रस्तुत किए जाने थे । विज्ञापन में यह उल्लिखित था कि आवश्यक अर्हताओं और अनुभव, यदि कोई हों, के संबंध में सभी अभ्यर्थियों की योग्यता अवधारित करने की तारीख, ऑनलाइन भर्ती आवेदन प्रस्तुत करने के लिए विहित अंतिम तारीख अर्थात् 15 अक्तूबर, 2017 थी । रेडियोग्राफरों के पदों को भरने के प्रयोजन के लिए विज्ञापन में यथाअधिकथित योग्यता मापदंड निम्नलिखित थे :–

"(क)

(i) किसी मान्यता प्राप्त स्कूल शिक्षा बोर्ड/विश्वविद्यालय से विज्ञान में 10+2 उत्तीर्ण

(ii) केंद्र/हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थान से रेडियोलॉजी में डिप्लोमा ।

या

किसी मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से रेडियोलॉजी में बीएससी डिग्री ।

(ख) हिमाचल प्रदेश पैरा मेडिकल काउंसिल शिमला में पंजीकृत होना आवश्यक है ।"

4. याची, जिन्होंने प्रश्नगत पदों में नियुक्ति हेतु विचार करने के लिए सम्यक् रूप से आवेदन किया था, प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग द्वारा उनके अभ्यर्थन को इस आधार पर नामंजूर करने से व्यथित हैं कि वे विज्ञापन में अधिकथित योग्यता मापदंड अर्थात् 'हिमाचल प्रदेश पैरा मेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत होना चाहिए' को पूरा नहीं करते

हैं । याचियों में से दो आरम्भतः चयनित भी हुए थे किन्तु तत्पश्चात् उनके अभ्यर्थन को नामंजूर कर दिया गया था ।

5. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और मामले के अभिलेखों का परिशीलन भी किया है ।

6. इस न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों को निबंधनों में तारीख 6 जनवरी, 2021 को श्री जितेन्द्र कनवर, सचिव, हिमाचल प्रदेश कर्मचारी सेवा आयोग, हमीरपुर के साथ श्री अजय कुमार, विधि अधिकारी न्यायालय में उपस्थित हुए जिनके साथ न्यायालय में इस मुद्दे पर अर्थपूर्ण चर्चा की गई थी ।

7. रेडियोग्राफर के पदों की भर्ती, हिमाचल प्रदेश स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, रेडियोग्राफर श्रेणी-III (अराजपत्रित), भर्ती और प्रोन्नति नियम, 2011 (जिसे इसमें इसके पश्चात् '2011 की आर एण्ड पी नियम' कहा गया है) द्वारा शासित होता है, इन नियमों को तारीख 3 नवम्बर, 2011 की अधिसूचना द्वारा अधिसूचित किया गया था । ये नियम अभिलेख पर उपाबंध आर-1 के रूप में प्रत्यर्थी संख्या 1/आयोग द्वारा फाइल उत्तर में याची द्वारा फाइल प्रत्युत्तर के साथ संलग्न है । उक्त नियमों के निबंधनों में, रेडियोग्राफर के पद पर प्रत्यक्ष भर्ती के लिए अपेक्षित न्यूनतम शैक्षिक और अन्य अर्हताएं निम्नलिखित हैं :–

> "7. प्रत्यक्ष भर्ती के लिए आवश्यक न्यूनतम शैक्षणिक और अन्य अपेक्षित अर्हताएं, –
>
> (क) आवश्यक अर्हताएं – (i) किसी मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय/बोर्ड से विज्ञान में 10+2 या समकक्ष योग्यता ।
>
> (ii) राज्य सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थान से रेडियोलॉजी में एक वर्षीय डिप्लोमा ।
>
> या
>
> हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय से रेडियोलॉजी में बीएससी डिग्री या समकक्ष ।

रेडियोलॉजी में स्नातक डिग्री रखने वाले व्यक्ति को प्राथमिकता दी जाएगी ।

(ख) वांछनीय अर्हताएं – हिमाचल प्रदेश के रीति-रिवाजों, तौर-तरीकों और बोलियों का ज्ञान तथा प्रदेश में प्रचलित विशिष्ट परिस्थितियों में नियुक्ति के लिए उपयुक्तता ।"

8. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग द्वारा जारी दिनांक 15 नवंबर, 2016 की अधिसूचना के तहत इन भर्ती एवं प्रोन्नति नियमों को निरस्त कर दिया गया, जिसके तहत नए नियम अर्थात् हिमाचल प्रदेश स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, रेडियोग्राफर, श्रेणी-III (अराजपत्रित) भर्ती एवं प्रोन्नति नियम, 2016 (इसके बाद "आर एंड पी नियम 2016" के रूप में संदर्भित) लागू किए गए । इन नियमों की प्रति अनुलग्नक R-2 के रूप में उक्त प्रत्युत्तर के साथ संलग्न है । रेडियोग्राफर के पद पर प्रत्यक्ष भर्ती के लिए आवश्यक न्यूनतम शैक्षणिक एवं अन्य अर्हताएं निम्नानुसार थीं :–

"7. प्रत्यक्ष भर्ती के लिए अपेक्षित न्यूनतम शैक्षणिक और अन्य अर्हताएं, –

(क) आवश्यक अर्हताएं – (i) किसी मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय/बोर्ड से विज्ञान में 10+2 या समकक्ष योग्यता ।

(ii) केन्द्रीय/हिमाचल प्रदेश राज्य सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थान से रेडियोलॉजी में एक वर्षीय डिप्लोमा ।

या

मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से रेडियोलॉजी में बीएससी डिग्री या समकक्ष ।

(ख) हिमाचल प्रदेश पैरामेडिकल काउंसिल शिमला में पंजीकृत होना आवश्यक है ।

(ग) वांछनीय अर्हताएं – हिमाचल प्रदेश के रीति-रिवाजों, तौर-तरीकों और बोलियों का ज्ञान तथा प्रदेश में प्रचलित विशिष्ट परिस्थितियों में नियुक्ति के लिए उपयुक्तता ।'

9. आर एण्ड पी नियम, 2016 के नियम 1 के उप-नियम (2) में यह उपबंधित है कि उक्त नियम, राजपत्र हिमाचल प्रदेश में प्रकाशन की तारीख से प्रवर्तन में आएंगे । यह विवादित नहीं है कि आर एण्ड पी नियम, 2016, तारीख 29 नवम्बर, 2017 को प्रकाशित हुए थे । इस प्रकार, आर एण्ड पी नियम, 2016 के नियम 1 के उप-नियम (2) के उपबंधों के निबंधनों में, ये नियम तारीख 29 नवम्बर, 2017 से प्रवर्तन में आए और पूर्ववर्ती आर एण्ड पी नियम, 2011 के स्थान पर ये नियम अस्तित्व में आए ।

10. यह प्रतीत होता है कि जब प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग ने रेडियोग्राफर के पद के लिए आवेदन आमंत्रित करते हुए विज्ञापन (उपाबंध पी-3) जारी किया था तब योग्यता शर्तें जो उसमें निहित थीं उन्हें आर एण्ड पी नियम, 2016 में परिकल्पित की गई थीं जो अभी तक प्रवर्तन में नहीं आई थीं जब विज्ञापन जारी किया गया था और जो संयोग से अभ्यर्थियों की अर्हता अवधारित करने के लिए विज्ञापन में परिकल्पित अंतिम तारीख (जिसे तत्पश्चात् बढ़ा दिया गया था) तक भी प्रवर्तन में नहीं आ सकी थीं । फिर भी, उक्त विज्ञापन में अन्तर्विष्ट अतिरिक्त शर्तों के कारण कि अभ्यर्थी, हिमाचल प्रदेश पैरामेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत होना चाहिए, रेडियोग्राफर के पद के लिए वर्तमान याचियों का अभ्यर्थन रद्द हो गया है ।

11. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल, जिनमें राज्य के विद्वान् ज्येष्ठ अपर महाधिवक्ता सम्मिलित हैं, को विस्तार से सुनने के पश्चात् इस न्यायालय का यह मत है कि याचियों की अभ्यर्थिता नामंजूर करना, इस आधार पर कि वे हि. प्र. पैरामेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत नहीं हैं, विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है । यह सुस्थिर विधि है कि एक पद पर साधारण भर्ती, भर्ती और प्रोन्नति नियमों के निबंधनों में की जाती है, जो उस समय पर शासित होती है जब उक्त पद में नियुक्ति के लिए आवेदन आमंत्रित करते हुए विज्ञापन जारी किए जाते हैं । वर्तमान मामले में, भर्ती और प्रोन्नति नियम उन क्षेत्रों को शासित करते

हैं जो वर्ष 2011 में उद्घोषित किए गए थे जिसमें ऐसी कोई शर्त नहीं थी कि अभ्यर्थी को हि. प्र. पैरामेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत होना चाहिए । इस शर्त को 2016 के आर एण्ड पी नियमों में जोड़ा गया था जो तारीख 29 नवम्बर, 2017 को ही प्रभाव में आ सका था । इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं. 1 आयोग द्वारा याचियों को रेडियोग्राफर के पदों के लिए अयोग्य अभिनिर्धारित करने वाला कृत्य, इस तथ्य के बावजूद की वे 2011 के आर एण्ड पी नियमों के निबंधनों में सम्यक् रूप से अर्ह थे जो उस सुसंगत समय पर लागू था, मनमाना है और विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है ।

12. तद्नुसार, ये याचिकाएं, 2011 के आर एण्ड पी के नियमों के निबंधनों में, जो तद्समय प्रवृत्त थी और उस क्षेत्र में लागू थीं जब रेडियोग्राफरों के 154 पदों की भर्ती के लिए विज्ञापन जारी किया गया था, रेडियोग्राफर के पद में नियुक्ति में विचार होने के लिए याचियों को अर्ह अभिनिर्धारित करते हुए मंजूर की जाती है और प्रत्यर्थी सं 1 का विनिश्चय कि ऐसे याची अर्ह नहीं थे, विधि में दूषित है तथा इसे अभिखंडित और अपास्त किया जाता है ।

13. तद्नुसार, प्रत्यर्थी/हिमाचल प्रदेश कर्मचारी चयन आयोग को यह परमादेश जारी किया जाता है वह याचियों को रेडियोग्राफर के पद में नियुक्ति हेतु विचार होने के लिए अर्ह के रूप में समझा जाए, यह भी अभिनिर्धारित करते हुए कि हि. प्र. पैरामेडिकल काउंसिल, शिमला में पंजीकृत होने वाले अभ्यर्थी के विज्ञापन (उपाबंध पी-3) में उल्लिखित शर्त विधि में दूषित हैं । प्रक्रिया जो प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा अर्ह अभ्यर्थियों के साथ याचियों को समझते हुए अपने तार्किक निष्कर्ष के साथ पदों में नियुक्ति के लिए अपनाया जाए । यह स्पष्ट किया जाता है कि यह न्यायालय इस सीमा तक ही परमादेश रिट जारी किया है कि याची, आर एण्ड पी नियम, 2011 के निबंधनों में चयन प्रक्रिया में भाग लेने के लिए अर्ह हैं और इसके पश्चात्, निसंदेह उनका चयन जारी पद में नियुक्ति करने के लिए प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग द्वारा अपनाए जाने वाले मापदंड पर निर्भर करेगा ।

14. इस प्रक्रम पर, प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग की ओर से उद्भूत दलील का उल्लेख करना भी सुसंगत है कि विज्ञापन जारी करने में भूल होने के लिए प्रत्यर्थी सं. 1 उत्तरदायी नहीं है क्योंकि उन्होंने नियोजक विभाग द्वारा निवेदन के साथ उन्हें उपलब्ध कराई गई भर्ती और प्रोन्नति नियमों के अनुसार कार्य किया है । इन सभी को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त किया जा सकता है कि नियोजक के साथ ही प्रत्यर्थी सं. 1/आयोग भविष्य में इस संबंध में सावधानी बरतेगें और यह सुनिश्चित करेंगे कि विज्ञापन उस समय पर उस क्षेत्र को शासित करने वाले भर्ती और प्रोन्नति नियमों के अनुसरण में जारी किया जाए जब विज्ञापन जारी किया जाता है । विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने इस न्यायालय को यह आश्वासन दिया है कि इस संबंध में जारी सभी आवश्यक निर्देश सभी विभागों को जारी किया जाएगा ।

तद्नुसार, याचिका निपटायी जाती है और साथ ही साथ सभी लम्बित आवेदन, यदि कोई हों, भी निपटाए जाते हैं । खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

याचिका निपटाई गई ।

क.

जोगिन्दर सिंह (श्री) और अन्य

बनाम

श्रीमती सुदेश कुमारी और अन्य

(2011 की नियमित द्वितीय अपील सं. 256)

तारीख 25 अक्तूबर, 2021

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 [संपत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क और भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 37] – द्वितीय अपील – वादी द्वारा संविदा के अपने भाग का अनुपालन करने के लिए तैयार और रजामंद होना – प्रतिवादी द्वारा संविदा के अपने भाग का पालन करने में असफल रहना – प्रतिवादी द्वारा उक्त संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद फाइल करना – वाद खारिज होना – यदि वादी-प्रतिवादी के बीच कोई विधिमान्य संविदा की जाती है और वादी उस संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद रहता है और इसके बावजूद यदि प्रतिवादी उस संविदा के अपने भाग का पालन करने में असफल रहता है तो वह उस संविदा का विनिर्दिष्ट अनुपालन कराने का अधिकारी नहीं होता है क्योंकि वादी के विकल्प पर वह संविदा खण्डनीय होती है ।

वर्तमान मामले में, विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 6 सितम्बर, 2010 के निर्णय और डिक्री द्वारा वादियों का वाद गुणागुणों के साथ ही परिसीमा अवधि के आधार पर खारिज कर दिया था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित और असंतुष्ट होकर, वादियों ने विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, ऊना, हिमाचल प्रदेश के न्यायालय में एक अपील अर्थात् सिविल अपील संख्या 68/2010 प्रस्तुत की किन्तु उसे भी तारीख 6 अप्रैल, 2011 के निर्णय और डिक्री द्वारा खारिज कर दिया गया । पूर्वोक्त आधारों पर

वादियों ने इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान नियमित द्वितीय अपील फाइल की, यह प्रार्थना करते हुए कि विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों को अपास्त करने के पश्चात् विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए उनके वाद की डिक्री की जाए । न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनने और पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्यों का परिशीलन करने के साथ ही विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा समनुदेशित कारणों, जब उन्होंने वादियों द्वारा फाइल विनिर्दिष्ट पालन के वाद को खारिज कर दिया था, परिशीलन करने के पश्चात् इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि वादियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल के इस निवेदन में कोई बल नहीं है कि विद्वान् निचले न्यायालय सही परिप्रेक्ष्य में साक्ष्यों का विवेचन करने में असफल रहे हैं, इसके बजाय इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों ने मामले के प्रत्येक पहलू पर सम्पूर्ण सूक्ष्मता के साथ विचार किया है और यह सुनिश्चित निष्कर्ष सही ही निकाला है कि दौलत राम को मूल प्रतिवादी ब्रह्मी देवी से संबंधित भूमि का विक्रय करने के लिए वादियों के साथ करार करने का कोई अधिकार या प्राधिकार नहीं था । वर्तमान मामले में, अभिवचनों के साथ ही क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों से स्पष्टतः यह प्रकट होता है कि वादी का सम्पूर्ण दावा मुख्तारनामा, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए पर आधारित है जो अभिकथित तौर पर मूल प्रतिवादी ब्रह्मी देवी द्वारा वादियों के पक्ष में भूमि अंतरण करने के लिए उसे प्राधिकृत करते हुए दौलात राम के पक्ष में निष्पादित किया गया था । ये दोनों दस्तावेज उर्दू में हैं किन्तु उनके हिन्दी अनुवाद अभिलेख पर रखे गए हैं और "एन" और "एम" के रूप में चिह्नित हैं । यद्यपि, यह उपधारणा है कि ब्रह्मी देवी द्वारा निष्पादित मुख्तारनामा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए मूल प्रतिवादी ब्रह्मी देवी द्वारा निष्पादित था, यह न्यायालय पूर्वोक्त दस्तावेजों का परिशीलन करने के पश्चात्, प्रतिवादी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एन. के. ठाकुर के इस निवेदन में कोई

सारवान् बल नहीं पाता है कि मुख्तारनामा में यह विनिर्दिष्टतः कथित/वर्णित किया गया है कि अटार्नी को उसकी सम्पत्ति का विक्रय, बंधक या विक्रय करने का कोई अधिकार नहीं होगा । यद्यपि, स्वर्गीय ब्रह्मी देवी द्वारा पूर्वोक्त मुख्तारनामा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए का निष्पादन ही अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के दृष्टिकोण से संदेहपूर्ण हैं किन्तु अन्यथा भी जैसा कि इसमें उपर्युक्त उल्लेख किया गया है, दौलत राम को ब्रह्मी देवी से संबंधित विवादित भूमि वादियों को विक्रय करने के लिए विक्रय-करार करने का कोई अधिकार या प्राधिकार नहीं था । चूंकि, वादियों के वाद का आधार ही भ्रांतिपूर्ण है इसलिए, विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा वादियों द्वारा फाइल तारीख 30 मई, 1987 के विक्रय-करार प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद खारिज करते हुए पारित निर्णयों और डिक्रियों में कोई गलती, यदि कोई हो, नहीं पायी जा सकती है । वादियों ने मामले को इस ओर घुमाने का प्रयास किया कि दौलत राम ने 18,000/- रुपए की पूर्ण प्रतिफल के लिए वाद भूमि का आधा भाग विक्रय करने के लिए सहमत हुआ था और उसे 12,000/- रुपए नकद संदत्त किया गया था जबकि शेष रकम उस मुकदमेबाजी के बारे में समायोजित होनी थी । किन्तु, पूर्वोक्त अभिवाक् को वादियों द्वारा अभिलेख पर किसी भी तर्कपूर्ण और संगत साक्ष्यों द्वारा कभी भी साबित नहीं किया गया । अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है जो इस तथ्य के बारे में सुझाव देता है कि दौलत राम को अभिकथित तौर पर प्रतिफल, यदि कोई हो, संदत्त किया गया था, जो उसे वादियों से उसके द्वारा वास्तविक स्वामी श्रीमती ब्रह्मी देवी को प्राप्त हुआ था । वादियों द्वारा अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है जिससे इस तथ्य के बारे में सुझाव मिलता हो कि दौलत राम ने वास्तविक स्वामी ब्रह्मी देवी की अभिव्यक्ति और/विवक्षित सहमति से तारीख 30 मई, 1987 के विक्रय-करार, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए को किया था । मल्कियत सिंह, वादी संख्या 3, अभि. सा. 6 के रूप में साक्षी कटघरे में हाजिर हुआ था । अपने शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 6/ए में जो उसने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 43 के नियम 4 के अधीन फाइल किया था, उसने वादपत्र की सम्पूर्ण अन्तर्वस्तुओं को

दोहराया है । अपनी प्रतिपरीक्षा में, इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि वह वादियों के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा फाइल सिविल वाद शीर्षक मेहर सिंह बनाम हकम सिंह इत्यादि के लम्बित रहने के दौरान न्यायालय में कभी भी उपस्थित नहीं हुआ था । उसने यह स्वीकार किया कि मुकदमेबाजी के खर्चे उसकी उपस्थिति में हकम सिंह द्वारा उपगत नहीं किए गए थे । उसने यह भी स्वीकार किया कि करार, उसकी उपस्थिति में निष्पादित नहीं हुआ था और उसकी उपस्थिति में दौलत राम को वादियों द्वारा धन संदत्त नहीं किया गया था । उसने यह स्वीकार किया कि वर्ष 1987 में वे और उसके पिता ने करार के निबंधनों और शर्तों के अनुसार विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए ब्रह्मी देवी से निवेदन करना आरम्भ कर दिया था किन्तु, उसने ऐसा नहीं किया । इस साक्षी ने इस तथ्य के बारे में, अनभिज्ञता से बहाना किया कि ब्रह्मी देवी ने तहसीलदार के न्यायालय में उसके जीवनकाल के दौरान एक याचिका संस्थित की थी । अन्यथा भी, यह नहीं समझा जा सकता है कि जब एक बार ब्रह्मी देवी ने वाद भूमि में अपने हिस्से का विक्रय करने के लिए सहमत हो गई थी तो उसके लिए विभाजन वाद संस्थित करने के लिए कोई अवसर नहीं था । वर्ष 1994-95 के लिए जमाबंदी से स्पष्टतः यह दर्शित होता है कि भूमि, प्रतिवादी और अन्यों द्वारा धारित है । विनोद कुमारी का कब्जा, हिस्सेदारन के रूप में सम्पूर्ण भूमि पर भी अभिलिखित है । चिह्नित कालम में, विभाजन की नामांतरण संख्या 288 के बारे में उल्लेख किया गया है । प्रदर्श पीबी वर्ष 1988-89 के लिए मिसल हैकियत बंदोबस्त की प्रतिलिपि है जो यह प्रलक्षित करती है कि वाद में अन्तर्वलित भूमि ब्रह्मी देवी और अन्यों द्वारा धारित है । जोगिन्दर सिंह इत्यादि का कब्जा भी हिस्सेदारन के रूप में अभिलिखित है । चिह्नित कालम में, यह उल्लेख किया गया है कि वादियों द्वारा किए गए विक्रय के आधार पर विनोद कुमारी इत्यादि के पक्ष में नामांतरण संख्या 146 मंजूर की गई थी । मल्कियत सिंह अर्थात् अभि. सा. 6 ने यह स्वीकार किया है कि वाद भूमि का एक भाग श्रीमती विनोद कुमारी इत्यादि के अधिभोग में है, उस तथ्य से अन्यथा भी वादियों के मामले पर विश्वास होता है । वादियों के साथ ही, उनके

भाई बक्शी राम द्वारा श्रीमती विनोद कुमारी और अन्यों को भूमि के विक्रय के बारे में तथ्य सम्पूर्णतः वादियों के सम्पूर्ण दावे को मिथ्या बनाता है जैसा कि वादपत्र में कथित है । मामले का एक अन्य पहलू भी है अर्थात् परिसीमा अवधि । अभि. सा. 6 ने अपने कथन में यह अभिसाक्ष्य दिया है कि प्रतिवादी ने वर्ष 1987 में प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ए के अनुसार हस्तांतरण विलेख निष्पादित करने से इनकार कर दिया था । इस प्रकार, वादियों को इनकार करने की तारीख से तीन वर्ष के भीतर वाद फाइल करना अपेक्षित था जबकि वर्तमान वाद वर्ष 1999 में संस्थित किया गया, इस प्रकार, विद्वान् निचले न्यायालयों ने यह सही ही अभिनिर्धारित किया है कि वाद परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है । इस न्यायालय को वादियों के विद्वान् काउंसेल की इस दलील से सहमत होने में कठिनाई हो रही है कि विद्वान् निचले न्यायालय सही परिप्रेक्ष्य में साक्ष्यों का मूल्यांकन करने में असफल रहे हैं, विशिष्टतया मुख्तारनामा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए, इसके बजाय यह न्यायालय का यह विश्वास है और समाधान है कि दोनों निचले न्यायालयों ने अभिवचनों के साथ ही साक्ष्यों का भी इसके सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन किया है, इस प्रकार, इसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है । (पैरा 9, 10, 11, 12, 13, 14 और 15)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2015] (2015) 4 एस. सी. सी. 264 :
लक्ष्मीदेवम्मा और अन्य बनाम **रंगनाथ और अन्य** ; 17

[2009] 2009 की सिविल अपील सं. 3612, विनिश्चय 25 जुलाई, 2017 :
परमिन्दर सिंह बनाम **गुरमीत सिंह** । 19

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की नियमित द्वितीय अपील सं. 256.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री अजय कुमार, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ रोहित, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से सर्वश्री एन. के. ठाकुर, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ दिव्य राज सिंह, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से श्री अश्वनी कोंडल, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा – विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, ऊना, हिमाचल प्रदेश द्वारा सिविल अपील सं. 68/2010 में पारित तारीख 6 अप्रैल, 2011 के निर्णय और डिक्री, जिसके द्वारा विद्वान् अपर न्यायाधीश ने विद्वान् सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ खंड), न्यायालय सं (1), अम्ब, जिला ऊना, हिमाचल प्रदेश द्वारा सिविल वाद सं. 237/99, शीर्षक जोगिन्दर सिंह और अन्य बनाम श्रीमती ब्राह्मनी देवी में पारित तारीख 9 सितम्बर, 2010 के निर्णय और डिक्री की पुष्टि कर दी थी, जिसके द्वारा उन्होंने अपीलार्थियों-वादियों द्वारा फाइल विक्रय-करार के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद को दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों को अपास्त करने के पश्चात् खारिज कर दिया था, से व्यथित और असंतुष्ट होकर अपीलार्थियों-वादियों (जिन्हें इसमें इसके पश्चात् 'वादियों' कहा गया है) ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन वर्तमान अपील इस न्यायालय में फाइल की है ।

2. मामले को सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर अभिलेखों से कतिपय अविवादित तथ्य यह प्रकट होते हैं कि अपीलार्थियों ने खेवट संख्या 118, खतौनी संख्या 323, खसरा सं. 3476, 3477, 3478, 3486, 3487, 3490, 3491, 3492, 3493, 3494, 3495 और 3496 में समाविट माप 0-91-46 हेक्टेयर भूमि में से माप 12 कनाल 01 मरला भूमि जो पुरानी खसरा संख्या 2625 के तत्समान थी जैसा कि वर्ष 1994-95 के लिए नकल जमाबंदी में प्रविष्ट है, जो अब मोहल राम नगर, मौजा नकरोह, तहसील अम्ब, ऊना, हिमाचल प्रदेश (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'वाद भूमि' कहा गया है) के बारे में विक्रय-विलेख निष्पादित करने के

लिए प्रत्यर्थियों/प्रतिवादी (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'प्रतिवादी' कहा गया है) को निर्देश देने की ईप्सा करते हुए, एक वाद फाइल किया गया था और वैकल्पिक रूप में 36,000/- रुपए की वसूली के लिए अनुतोष भी मंजूर किया जाए । पूर्वोक्त वाद में, वादियों का प्रकथन यह था कि उनके हित-पूर्वाधिकारी श्री हकम सिंह माप 24 कनाल, 2 मरला भूमि के बारे में प्रतिवादी के साथ आधे हिस्से के स्वामी थे किन्तु वे सम्पूर्ण भूमि के अनन्य कब्जे में थे । हकम सिंह की मृत्यु के पश्चात् वादियों ने यह दावा किया कि वादी सं. 1 और 2 अपने भाई बक्शी राम के साथ कब्जे में आ गए थे, जिसके पश्चात् उन्होंने अपने हिस्से अर्थात् 12 कनाल 01 मरला भूमि का विक्रय श्रीमती विनोद कुमारी, ओम प्रकाश और रणजीत सिंह को कर दिया और माप 12 कनाल, 01 मरला भूमि का शेष भाग उनके कब्जे में बना रहा । वादपत्र में यह भी प्रकथन है कि एक वाद शीर्षक मेहर सिंह बनाम हकम सिंह जो विद्वान् उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, ऊना के समक्ष लम्बित था, का विनिश्चय तारीख 5 मई, 1983 को हकम सिंह और बहमी देवी के पक्ष में हुआ था, जिसके द्वारा वादियों के हित-पूर्वाधिकारी ने माप 24 कनाल 02 मरला भूमि कब्जे में धारित की थी । यह भी प्रकथन है कि उक्त वाद का प्रतिवादी की ओर से उसके मुख्तारनामा श्री दौलत राम द्वारा विरोध किया गया था और उक्त वाद का सम्पूर्ण खर्च वादियों के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा वहन किया गया था । वादियों ने वाद में यह भी प्रकथन किया था कि तारीख 30 मई, 1987 को दौलत राम, प्रतिवादी का मुख्तारनामा ने उपर्युक्त उक्त आधे हिस्से अर्थात् 12 कनाल 01 मरला भूमि का विक्रय करने के बारे में वादी के साथ 18,000/- रुपए में एक विक्रय-करार किया था और पूर्ववर्ती मुकदमे में उनके हित-पूर्वाधिकारी द्वारा वहन किए गए मुकदमें के खर्चे के रूप में 6,000/- रुपए घटाने के पश्चात् कुल 12,000/- रुपए प्राप्त किए थे । विक्रय-विलेख का निष्पादन करने के लिए समय निश्चित नहीं था । वादियों द्वारा यह भी प्रकथन किया गया है कि प्रतिवादी ने उनके द्वारा विक्रय-विलेख निष्पादित करने के लिए बार-बार निवेदन करने के बावजूद ऐसा करने से इनकार कर

दिया, बजाय इसके उसने आधार पर बड़ी रकम की मांग करना आरम्भ कर दिया कि भूमि का मूल्य बढ़ रहा है ।

3. चूंकि प्रतिवादी ब्रह्मी देवी की मृत्यु वाद लम्बित रहने के दौरान हो गई, इसलिए, उसके विधिक प्रतिनिधि अर्थात् श्रीमती सुदेश कुमारी को ब्रह्मी देवी के स्थान पर प्रतिवादी के रूप में अभिवाचित किया गया जिसने गुणागुणों पर वाद कायम रखने, वाद-हेतुक, परिसीमा अवधि और विबंधन के आधार पर वादियों के दावे का खंडन किया । प्रतिवादी ने यह स्वीकार करते हुए कि हकम सिंह आधे हिस्से की सीमा तक कब्जे सहित स्वामी था और ब्रह्मी देवी अन्य आधे हिस्से के कब्जे में थी, यह भी स्वीकार किया कि 12 कनाल 01 मरला भूमि श्रीमती विनोद कुमारी इत्यादि को बेच दिया गया था । तथापि, उसने इस बात से इनकार किया कि वादियों के हितपूर्वाधिकारी और ब्रह्मी देवी (मूल प्रतिवादी) द्वारा मुकदमेबाजी के खर्चे के लिए पूर्ववर्ती वाद में उसके द्वारा किए गए किसी खर्चे के संदाय के बारे में वादियों के हितपूर्वाधिकारी ने आश्वासन दिया था । प्रतिवादी ने यह भी दावा किया है कि दौलत राम ने कभी भी प्रतिवादी के हिस्से के लिए विक्रय-करार निष्पादित नहीं किया था न ही उसे प्रतिवादी द्वारा ऐसा करने के लिए प्राधिकृत किया गया था । प्रतिवादी ने दावा किया है कि न तो ब्रह्मी देवी न ही उसके विधिक प्रतिनिधि ने उसके जीवनकाल के दौरान कोई प्रतिफल प्राप्त किया था, ब्रह्मी देवी ने वाद भूमि के विभाजन के लिए एक आवेदन फाइल किया था जिसका विनिश्चय तारीख 22 अगस्त, 1997 को कर दिया गया था ।

4. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर विद्वान् विचारण न्यायालय ने अवधारण के लिए तारीख 23 जनवरी, 2004 को निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किया :–

1. क्या प्रतिवादी, वादियों के पक्ष में तारीख 30 मई, 1987 के विक्रय-करार द्वारा वाद भूमि का विक्रय करने के लिए सहमत था ?

2. क्या वादी, संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद थे ?

3. क्या प्रतिवादी, संविदा के अपने भाग का पालन करने में असफल रही है ?

4. क्या वादी वैकल्पिक रूप में 36,000/- रुपए की वसूली का अनुतोष पाने के हकदार हैं, जैसी प्रार्थना की गई है ?

5. क्या वादियों के पास कोई वाद हेतुक नहीं है ?

6. क्या वाद, कायम रखे जाने योग्य नहीं है ?

7. क्या वाद, परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है ?

8. क्या वाद, पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है ?

9. क्या वाद, समुचित रूप से मूल्यांकित नहीं है, जैसा कि अभिकथित है ?

10. अनुतोष ।

5. तत्पश्चात्, विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 6 सितम्बर, 2010 के निर्णय और डिक्री द्वारा वादियों का वाद गुणागुणों के साथ ही परिसीमा अवधि के आधार पर खारिज कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित और असंतुष्ट होकर, वादियों ने विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, ऊना, हिमाचल प्रदेश के न्यायालय में एक अपील अर्थात् सिविल अपील संख्या 68/2010 प्रस्तुत की किन्तु उसे भी तारीख 6 अप्रैल, 2011 के निर्णय और डिक्री द्वारा खारिज कर दिया गया । पूर्वोक्त आधारों पर वादियों ने इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान नियमित द्वितीय अपील फाइल की, यह प्रार्थना करते हुए कि विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों को अपास्त करने के पश्चात् विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए उनके वाद की डिक्री की जाए ।

6. इस न्यायालय द्वारा तारीख 10 अगस्त, 2011 को वर्तमान अपील निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्नों पर स्वीकार कर लिया गया :–

"(1) क्या विद्वान् निचले न्यायालयों के निष्कर्ष अभिवचनों, साक्ष्यों और मामले के तथ्यों में लागू विधि के पूर्णतया गलत परिशीलन के परिणामस्वरूप निकाले गए हैं और विशिष्टतया दस्तावेजों प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ए, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए, पी. डी. और पी. ई. और इस प्रकार, सुस्पष्टतया गलत और अवैध है और यदि ऐसा है तो इसका क्या प्रभाव होगा ?

(2) क्या विद्वान् निचले न्यायालयों ने मुख्तारनामा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए का गलत निर्वचन किया है ?"

7. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का परिशीलन किया ।

8. चूंकि दोनों विधि के सारवान् प्रश्न एक दूसरे से जुड़े हैं और उनके उत्तर सम्पूर्ण अभिवचनों और साक्ष्यों को देखने के पश्चात् ही दिया जा सकता है, इसलिए, उन्हें अवधारण के लिए एक साथ लिया जाता है ।

9. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनने और पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्यों का परिशीलन करने के साथ ही विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा समनुदेशित कारणों, जब उन्होंने वादियों द्वारा फाइल विनिर्दिष्ट पालन के वाद को खारिज कर दिया था, परिशीलन करने के पश्चात् इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि वादियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल के इस निवेदन में कोई बल नहीं है कि विद्वान् निचले न्यायालय सही परिप्रेक्ष्य में साक्ष्यों का विवेचन करने में असफल रहे हैं, इसके बजाय इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों ने मामले के प्रत्येक पहलू पर सम्पूर्ण सूक्ष्मता के साथ विचार किया है और यह सुनिश्चित निष्कर्ष सही ही निकाला है कि दौलत राम को मूल प्रतिवादी ब्रह्मी देवी से संबंधित भूमि का विक्रय करने के लिए वादियों के साथ करार करने का कोई अधिकार या प्राधिकार नहीं था । वर्तमान मामले में, अभिवचनों के साथ ही क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों से स्पष्टतः यह प्रकट होता है कि वादी का सम्पूर्ण दावा मुख्तारनामा, प्रदर्श पी.

डब्ल्यू. 3/ए पर आधारित है जो अभिकथित तौर पर मूल प्रतिवादी ब्रह्मी देवी द्वारा वादियों के पक्ष में भूमि अंतरण करने के लिए उसे प्राधिकृत करते हुए, दौलात राम के पक्ष में निष्पादित किया गया था । ये दोनों दस्तावेज उर्दू में हैं किन्तु उनके हिन्दी अनुवाद अभिलेख पर रखे गए हैं और "एन" और "एम" के रूप में चिह्नित हैं । यद्यपि, यह उपधारणा है कि ब्रह्मी देवी द्वारा निष्पादित मुख्तारनामा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए ("एन" के रूप में चिह्नित हिन्दी अनुवाद) मूल प्रतिवादी ब्रह्मी देवी द्वारा निष्पादित था, यह न्यायालय पूर्वोक्त दस्तावेजों का परिशीलन करने के पश्चात्, प्रतिवादी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एन. के. ठाकुर के इस निवेदन में कोई सारवान् बल नहीं पाता है कि मुख्तारनामा में यह विनिर्दिष्टतः कथित/वर्णित किया गया है कि अटार्नी को उसकी सम्पत्ति का विक्रय, बंधक या विक्रय करने का कोई अधिकार नहीं होगा । यद्यपि, स्वर्गीय ब्रह्मी देवी द्वारा पूर्वोक्त मुख्तारनामा प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए का निष्पादन ही अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के दृष्टिकोण से संदेहपूर्ण हैं किन्तु अन्यथा भी जैसा कि इसमें उपर्युक्त उल्लेख किया गया है, दौलत राम को ब्रह्मी देवी से संबंधित विवादित भूमि वादियों को विक्रय करने के लिए विक्रय-करार करने का कोई अधिकार या प्राधिकार नहीं था । चूंकि, वादियों के वाद का आधार ही भ्रांतिपूर्ण है इसलिए, विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा वादियों द्वारा फाइल तारीख 30 मई, 1987 के विक्रय-करार प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद खारिज करते हुए पारित निर्णयों और डिक्रियों में कोई गलती, यदि कोई हों, नहीं पाई जा सकती है ।

10. यद्यपि, वर्तमान मामले में, वादियों ने मामले को इस ओर घुमाने का प्रयास किया कि दौलत राम ने 18,000/- रुपए की पूर्ण प्रतिफल के लिए वाद भूमि का आधा भाग विक्रय करने के लिए सहमत हुआ था और उसे 12,000/- रुपए नकद संदत्त किया गया था जबकि शेष रकम उस मुकदमेबाजी के बारे में समायोजित होनी थी जो अभिकथित तौर पर पूर्ववर्ती वाद शीर्षक मेहर सिंह बनाम हकम सिंह वाले मामले में, वादियों के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा खर्च किए गए थे । किन्तु, पूर्वोक्त अभिवाक् को वादियों द्वारा अभिलेख पर किसी भी तर्कपूर्ण और संगत

साक्ष्यों द्वारा कभी भी साबित नहीं किया गया । अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है जो इस तथ्य के बारे में सुझाव देता है कि दौलत राम को अभिकथित तौर पर प्रतिफल, यदि कोई हो, संदत्त किया गया था, जो उसे वादियों से उसके द्वारा वास्तविक स्वामी श्रीमती ब्रह्मी देवी को प्राप्त हुआ था । उपर्युक्त के अतिरिक्त, वादियों द्वारा अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है जिससे इस तथ्य के बारे में सुझाव मिलता हो कि दौलत राम ने वास्तविक स्वामी ब्रह्मी देवी की अभिव्यक्ति और/विवक्षित सहमति से तारीख 30 मई, 1987 के विक्रय-करार, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए को किया था ।

11. मल्कियत सिंह, वादी संख्या 3, अभि. सा. 6 के रूप में साक्षी कटघरे में हाजिर हुआ था । अपने शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 6/ए में जो उसने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 43, के नियम 4 के अधीन फाइल किया था, उसने वादपत्र की सम्पूर्ण अन्तर्वस्तुओं को दोहराया है । अपनी प्रतिपरीक्षा में, इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि वह वादियों के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा फाइल सिविल वाद शीर्षक मेहर सिंह बनाम हकम सिंह इत्यादि के लम्बित रहने के दौरान न्यायालय में कभी भी उपस्थित नहीं हुआ था । उसने यह स्वीकार किया कि मुकदमेबाजी के खर्चे उसकी उपस्थिति में हकम सिंह द्वारा उपगत नहीं किए गए थे । उसने यह भी स्वीकार किया कि करार, उसकी उपस्थिति में निष्पादित नहीं हुआ था और उसकी उपस्थिति में दौलत राम को वादियों द्वारा धन संदत्त नहीं किया गया था । उसने यह स्वीकार किया कि वर्ष 1987 में वे और उसके पिता ने करार के निबंधनों और शर्तों के अनुसार विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए ब्रह्मी देवी (प्रतिवादी) से निवेदन करना आरम्भ कर दिया था किन्तु, उसने ऐसा नहीं किया । इस साक्षी ने इस तथ्य के बारे में, अनभिज्ञता से बहाना किया कि ब्रह्मी देवी ने तहसीलदार के न्यायालय में उसके जीवनकाल के दौरान एक याचिका संस्थित की थी । अन्यथा भी, यह नहीं समझा जा सकता है कि जब एक बार ब्रह्मी देवी ने वाद भूमि में अपने हिस्से का विक्रय करने के लिए सहमत हो गई थी तो उसके लिए विभाजन वाद संस्थित करने के लिए कोई अवसर नहीं था ।

12. प्रदर्श पी.ए. अर्थात् वर्ष 1994-95 के लिए जमाबंदी से स्पष्टतः यह दर्शित होता है कि भूमि, प्रतिवादी और अन्यों द्वारा धारित है । विनोद कुमारी का कब्जा, हिस्सेदारन के रूप में सम्पूर्ण भूमि पर भी अभिलिखित है । चिह्नित कालम में, विभाजन की नामांतरण संख्या 288 के बारे में उल्लेख किया गया है । प्रदर्श पीबी वर्ष 1988-89 के लिए मिसल हैकियत बंदोबस्त की प्रतिलिपि है जो यह प्रलक्षित करती है कि वाद में अन्तर्वलित भूमि ब्रह्मी देवी और अन्यों द्वारा धारित है । जोगिन्दर सिंह इत्यादि का कब्जा भी हिस्सेदारन के रूप में अभिलिखित है । चिह्नित कालम में, यह उल्लेख किया गया है कि वादियों द्वारा किए गए विक्रय के आधार पर विनोद कुमारी इत्यादि के पक्ष में नामांतरण संख्या 146 मंजूर की गई थी ।

13. मल्कियत सिंह अर्थात् अभि. सा. 6 ने यह स्वीकार किया है कि वाद भूमि का एक भाग श्रीमती विनोद कुमारी इत्यादि के अधिभोग में है, उस तथ्य से अन्यथा भी वादियों के मामले पर विश्वास होता है । वादियों के साथ ही, उनके भाई बक्शी राम द्वारा श्रीमती विनोद कुमारी और अन्यों को भूमि के विक्रय के बारे में तथ्य सम्पूर्णतः वादियों के सम्पूर्ण दावे को मिथ्या बनाता है जैसा कि वादपत्र में कथित है ।

14. मामले का एक अन्य पहलू भी है अर्थात् परिसीमा अवधि । अभि. सा. 6 ने अपने कथन में यह अभिसाक्ष्य दिया है कि प्रतिवादी ने वर्ष 1987 में प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ए के अनुसार हस्तांतरण विलेख निष्पादित करने से इनकार कर दिया था । इस प्रकार, वादियों को इनकार करने की तारीख से तीन वर्ष के भीतर वाद फाइल करना अपेक्षित था जबकि वर्तमान वाद वर्ष 1999 में संस्थित किया गया, इस प्रकार, विद्वान् निचले न्यायालयों ने यह सही ही अभिनिर्धारित किया है कि वाद परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है ।

15. परिणामतः, पूर्वोक्त कथित कारणों से इस न्यायालय को वादियों के विद्वान् काउंसेल की इस दलील से सहमत होने में कठिनाई हो रही है कि विद्वान् निचले न्यायालय सही परिप्रेक्ष्य में साक्ष्यों का मूल्यांकन करने में असफल रहे हैं, विशिष्टतया मुख्तारनामा प्रदर्श पी.

डब्ल्यू. 3/ए, इसके बजाय यह न्यायालय का यह विश्वास है और समाधान है कि दोनों निचले न्यायालयों ने अभिवचनों के साथ ही साक्ष्यों का भी इसके सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन किया है, इस प्रकार, इसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

16. तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है ।

17. अब, दोनों निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए विधि और तथ्य के समवर्ती निष्कर्षों की परीक्षा करते समय, प्रतिवादियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा इस न्यायालय में वाद कायम रखने और अधिकारिता के बारे में उद्भूत विनिर्दिष्ट आक्षेप पर विचार करना समुचित होगा । प्रतिवादियों के विद्वान् काउंसेल ने **लक्ष्मीदेवम्मा और अन्य** बनाम **रंगनाथ और अन्य**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय की ओर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित किया है, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि :–

> "16. मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों के आधार पर, दोनों निचले न्यायालयों ने तथ्य का यह समवर्ती निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि वादियों ने 'ए' अनुसूचित सम्पत्ति में अपना अधिकार सिद्ध कर दिया है । तथ्य के समवर्ती निष्कर्षों के प्रकाश में, उच्च न्यायालय में विधि का कोई सारवान् प्रश्न उद्भूत नहीं होता है और साक्ष्यों का पुनः विवेचन करने के लिए कोई सारभूत आधार नहीं है । ऐसा करते हुए, उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि प्रथम वादी ने सड़क के लिए 'ए' अनुसूचित सम्पत्ति को चिह्नित किया है और यह कि उस परिसर में उसका पूर्णरूपेण अधिकार नहीं हो सकता है, यह अभिनिर्धारित किया कि वादियों के अधिकारों की घोषणा मंजूर नहीं की जा सकती है । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए, उच्च न्यायालय द्वारा तथ्य के समवर्ती निष्कर्ष को उलटा नहीं जा

[1] (2015) 4 एस. सी. सी. 264.

सकता है जब तक कि इस प्रकार अभिलिखित निष्कर्ष प्रतिकूल दर्शित नहीं होते हैं । हमारे सुविचारित मत में, उच्च न्यायालय का यह मत नहीं हो सकता है कि निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित समवर्ती निष्कर्ष मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों पर आधारित नहीं हैं और उच्च न्यायालय के निर्णय कायम नहीं रखे जा सकते हैं ।"

18. इसमें उपर्युक्त निर्दिष्ट निर्णय का परिशीलन करने पर, यह सुझाव मिलता है कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए, तथ्य के समवर्ती निष्कर्ष में उच्च न्यायालय द्वारा उलटा नहीं किया जा सकता है जब तक कि ऐसा अभिलिखित निष्कर्ष प्रतिकूल दर्शित नहीं होता है । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिव्यक्त पूर्वोक्त मताभिव्यक्तियों के बारे में कोई विवाद नहीं हो सकता है और सत्य यह है कि सामान्य परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते समय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन करने से निर्बंधित हैं ।

19. **परमिन्दर सिंह** बनाम **गुरमीत सिंह**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"14. हमारी सुविचारित राय में, तथ्यों पर तीनों न्यायालयों द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष, जो तीनों न्यायालयों के समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों के मूल्यांकन पर आधारित हैं, जो सारतः तथ्य के समवर्ती निष्कर्ष की प्रकृति के हैं और इसलिए, ऐसे निष्कर्ष इस न्यायालय पर आबद्धकारी हैं, वस्तुतः, ऐसे निष्कर्ष उच्च न्यायालय पर समान रूप से बाध्यकारी होते हैं जब वह द्वितीय अपील की सुनवाई कर रहा होता है ।"

20. पूर्वोक्त विधि की प्रतिपादना से यह नितान्त प्रकट होता है कि दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्यों और विधि के समवर्ती निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है, जब तक कि उसे इस

[1] 2009 की सिविल अपील सं. 3612, विनिश्चय 25 जुलाई, 2017.

सीमा तक प्रतिकूल नहीं पाया जाता है कि कोई न्यायिक व्यक्ति ऐसा निष्कर्ष अभिलिखित नहीं कर सकता है । वर्तमान मामले में, जैसी कि विस्तृत रूप से चर्चा की गई है, विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णयों और डिक्रियों में कोई प्रतिकूलता नहीं है, बजाय इसके यह साक्ष्यों के सही मूल्यांकन पर आधारित है, इस प्रकार, यह कायम रखे जाने योग्य है ।

21. परिणामतः, इसमें उपर्युक्त की गई विस्तृत चर्चा को ध्यान में रखते हुए, मैं, वर्तमान अपील में कोई गुणागुण नहीं पाता हूं, तदनुसार, इसे खारिज किया जाता है । विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों को कायम रखा जाता है ।

22. लम्बित आवेदनों, यदि कोई हों, को भी निपटाया जाता है । अन्तरिम निर्देश, यदि कोई हों, वातिल किया जाता है ।

द्वितीय अपील खारिज की गई ।

क.

संसद् के अधिनियम

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005

(2005 का अधिनियम संख्यांक 22)

[15 जून, 2005]

प्रत्येक लोक प्राधिकारी के कार्यकरण में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व के संवर्धन के लिए, लोक प्राधिकारी के नियंत्रणाधीन सूचना तक पहुंच सुनिश्चित करने के लिए नागरिकों के सूचना के अधिकार की व्यावहारिक शासन पद्धति स्थापित करने, एक केन्द्रीय सूचना आयोग तथा राज्य सूचना आयोग का गठन करने के और उनसे संबंधित या उनके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत के संविधान ने लोकतंत्रात्मक गणराज्य की स्थापना की है ;

और लोकतंत्र शिक्षित नागरिक वर्ग तथा ऐसी सूचना की पारदर्शिता की अपेक्षा करता है, जो उसके कार्यकरण तथा भ्रष्टाचार को रोकने के लिए भी और सरकारों तथा उनके परिकरणों को शासन के प्रति उत्तरदायी बनाने के लिए अनिवार्य है ;

और वास्तविक व्यवहार में सूचना के प्रकटन से संभवत: अन्य लोक हितों, जिनके अन्तर्गत सरकारों के दक्ष प्रचालन, सीमित राज्य वित्तीय संसाधनों के अधिकतम उपयोग और संवेदनशील सूचना की गोपनीयता को बनाए रखना भी है, के साथ विरोध हो सकता है ;

और लोकतंत्रात्मक आदर्श की प्रभुता को बनाए रखते हुए इन विरोधी हितों के बीच सामंजस्य बनाना आवश्यक है ;

अत:, अब यह समीचीन है कि ऐसे नागरिकों को, कतिपय सूचना देने के लिए, जो उसे पाने के इच्छुक हैं, उपबंध किया जाए ;

भारत गणराज्य के छप्पनवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1
प्रारम्भिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 है ।

(2) इसका विस्तार[1] *** सम्पूर्ण भारत पर है ।

(3) धारा 4 की उपधारा (1), धारा 5 की उपधारा (1) और उपधारा (2), धारा 12, धारा 13, धारा 15, धारा 16, धारा 24, धारा 27 और धारा 28 के उपबंध तुरंत प्रभावी होंगे और इस अधिनियम के शेष उपबंध इसके अधिनियमन के एक सौ बीसवें दिन[*] को प्रवृत्त होंगे ।

2. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "समुचित सरकार" से किसी ऐसे लोक प्राधिकरण के संबंध में जो –

(i) केन्द्रीय सरकार या संघ राज्यक्षेत्र प्रशासन द्वारा स्थापित, गठित, उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या उसके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारभूत रूप से वित्तपोषित किया जाता है, केन्द्रीय सरकार अभिप्रेत है ;

(ii) राज्य सरकार द्वारा स्थापित, गठित उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या उसके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारभूत रूप से वित्तपोषित किया जाता है, राज्य सरकार अभिप्रेत है ;

(ख) "केन्द्रीय सूचना आयोग" से धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन गठित केन्द्रीय सूचना आयोग अभिप्रेत है ;

(ग) "केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी" से उपधारा (1) के

---

[1] 2019 के अधिनियम सं. 34 की धारा 95 और पांचवी अनुसूची द्वारा (31-10-2019 से) "जम्मू-कश्मीर राज्यों के सिवाय" शब्दों का लोप किया गया ।

[*] 12 अक्तूबर, 2005.

अधीन पदाभिहित केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत धारा 5 की उपधारा (2) के अधीन इस प्रकार पदाभिहित कोई केन्द्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी भी है ;

(घ) "मुख्य सूचना आयुक्त" और "सूचना आयुक्त" से धारा 12 की उपधारा (3) के अधीन नियुक्त मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्त अभिप्रेत हैं ;

(ङ) "सक्षम प्राधिकारी" से अभिप्रेत है –

(i) लोक सभा या किसी राज्य की विधान सभा की या किसी ऐसे संघ राज्यक्षेत्र की, जिसमें ऐसी सभा है, दशा में अध्यक्ष और राज्य सभा या किसी राज्य की विधान परिषद् की दशा में सभापति ;

(ii) उच्चतम न्यायालय की दशा में भारत का मुख्य न्यायमूर्ति ;

(iii) किसी उच्च न्यायालय की दशा में उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति ;

(iv) संविधान द्वारा या उसके अधीन स्थापित या गठित अन्य प्राधिकरणों की दशा में, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल ;

(v) संविधान के अनुच्छेद 239 के अधीन नियुक्त प्रशासक ;

(च) "सूचना" से किसी इलैक्ट्रानिक रूप में धारित अभिलेख, दस्तावेज, ज्ञापन, ई-मेल, मत, सलाह, प्रेस विज्ञप्ति, परिपत्र, आदेश, लागबुक, संविदा, रिपोर्ट, कागजपत्र, नमूने, माडल, आंकड़ों संबंधी सामग्री और किसी प्राइवेट निकाय से संबंधित ऐसी सूचना सहित, जिस तक तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन किसी लोक प्राधिकारी की पहुंच हो सकती है, किसी रूप में कोई सामग्री, अभिप्रेत है ;

(छ) "विहित" से, यथास्थिति, समुचित सरकार या सक्षम प्राधिकारी द्वारा इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ज) "लोक प्राधिकारी" से, –

(क) संविधान द्वारा या उसके अधीन ;

(ख) संसद् द्वारा बनाई गई किसी अन्य विधि द्वारा ;

(ग) राज्य विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी अन्य विधि द्वारा ;

(घ) समुचित सरकार द्वारा जारी की गई अधिसूचना या किए गए आदेश द्वारा, स्थापित या गठित कोई प्राधिकारी या निकाय या स्वायत्त सरकारी संस्था अभिप्रेत है,

और इसके अन्तर्गत, –

(i) कोई ऐसा निकाय है जो समुचित सरकार के स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या उसके द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारभूत रूप से वित्तपोषित है ;

(ii) कोई ऐसा गैर-सरकारी संगठन है जो समुचित सरकार,

द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारभूत रूप से वित्तपोषित है ।

(झ) "अभिलेख" में निम्नलिखित सम्मिलित हैं –

(क) कोई दस्तावेज, पाण्डुलिपि और फाइल ;

(ख) किसी दस्तावेज की कोई माइक्रोफिल्म, माइक्रोफिशे और प्रतिकृति प्रति ;

(ग) ऐसी माइक्रोफिल्म में सन्निविष्ट प्रतिबिम्ब या प्रतिबिम्बों का पुनरुत्पादन (चाहे वर्धित रूप में हो या न हो) ; और

(घ) किसी कम्प्यूटर द्वारा या किसी अन्य युक्ति द्वारा उत्पादित कोई अन्य सामग्री ;

(ञ) "सूचना का अधिकार" से इस अधिनियम के अधीन पहुंच योग्य सूचना का, जो किसी लोक प्राधिकारी द्वारा या उसके

नियंत्रणाधीन धारित है, अधिकार अभिप्रेत है और जिसमें निम्नलिखित का अधिकार सम्मिलित है –

(i) कृति, दस्तावेजों, अभिलेखों का निरीक्षण ;

(ii) दस्तावेजों या अभिलेखों के टिप्पण, उद्धरण या प्रमाणित प्रतिलिपि लेना ;

(iii) सामग्री के प्रमाणित नमूने लेना ;

(iv) डिस्केट, फ्लापी, टेप, वीडियो कैसेट के रूप में या किसी अन्य इलैक्ट्रानिक रीति में या प्रिंटआऊट के माध्यम से सूचना को, जहां ऐसी सूचना किसी कम्प्यूटर या किसी अन्य युक्ति में भण्डारित है, अभिप्राप्त करना ;

(ट) "राज्य सूचना आयोग" से धारा 15 की उपधारा (1) के अधीन गठित राज्य़ सूचना आयोग अभिप्रेत है ;

(ठ) "राज्य मुख्य सूचना आयुक्त" और "राज्य सूचना आयुक्त" से धारा 15 की उपधारा (3) के अधीन नियुक्त राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्त अभिप्रेत है ;

(ड) "राज्य लोक सूचना अधिकारी" से उपधारा (1) के अधीन पदाभिहित राज्य लोक सूचना अधिकारी अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत धारा 5 की उपधारा (2) के अधीन उस रूप में पदाभिहित राज्य सहायक लोक सूचना अधिकारी भी है ;

(ढ) "पर व्यक्ति" से सूचना के लिए अनुरोध करने वाले नागरिक से भिन्न कोई व्यक्ति अभिप्रेत है, और इसके अंतर्गत कोई लोक प्राधिकारी भी है ।

अध्याय 2
सूचना का अधिकार और लोक प्राधिकारियों की बाध्यताएं

3. सूचना का अधिकार – इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, सभी नागरिकों को सूचना का अधिकार होगा ।

4. लोक प्राधिकारियों की बाध्यताएं – (1) प्रत्येक लोक प्राधिकारी –

(क) अपने सभी अभिलेखों को सम्यक् रूप से सूचीपत्रित और अनुक्रमणिकाबद्ध ऐसी रीति और रूप में रखेगा, जो इस अधिनियम के अधीन सूचना के अधिकार को सुकर बनाता है और सुनिश्चित करेगा कि ऐसे सभी अभिलेख, जो कंप्यूटरीकृत किए जाने के लिए समुचित हैं, युक्तियुक्त समय के भीतर और संसाधनों की उपलभ्यता के अधीन रहते हुए, कंप्यूटरीकृत और विभिन्न प्रणालियों पर संपूर्ण देश में नेटवर्क के माध्यम से संबद्ध हैं जिससे कि ऐसे अभिलेख तक पहुंच को सुकर बनाया जा सके ;

(ख) इस अधिनियम के अधिनियमन से एक सौ बीस दिन के भीतर, –

(i) अपने संगठन की विशिष्टियां, कृत्य और कर्तव्य ;

(ii) अपने अधिकारियों और कर्मचारियों की शक्तियां और कर्तव्य ;

(iii) विनिश्चय करने की प्रक्रिया में पालन की जाने वाली प्रक्रिया जिसमें पर्यवेक्षण और उत्तरदायित्व के माध्यम सम्मिलित हैं ;

(iv) अपने कृत्यों के निर्वहन के लिए स्वयं द्वारा स्थापित मानदंड ;

(v) अपने द्वारा या अपने नियंत्रणाधीन धारित या अपने कर्मचारियों द्वारा अपने कृत्यों के निर्वहन के लिए प्रयोग किए गए नियम, विनियम, अनुदेश, निर्देशिका और अभिलेख ;

(vi) ऐसे दस्तावेजों के, जो उसके द्वारा धारित या उसके नियंत्रणाधीन हैं, प्रवर्गों का विवरण ;

(vii) किसी व्यवस्था की विशिष्टियां, जो उसकी नीति की संरचना या उसके कार्यान्वयन के संबंध में जनता के सदस्यों से परामर्श के लिए या उनके द्वारा अभ्यावेदन के लिए विद्यमान हैं ;

(viii) ऐसे बोर्डों, परिषदों, समितियों और अन्य निकायों

के, जिनमें दो या अधिक व्यक्ति हैं, जिनका उसके भागरूप में या इस बारे में सलाह देने के प्रयोजन के लिए गठन किया गया है और इस बारे में कि क्या उन बोर्डों, परिषदों, समितियों और अन्य निकायों की बैठकें जनता के लिए खुली होंगी या ऐसी बैठकों के कार्यवृत्त तक जनता की पहुंच होगी, विवरण ;

(ix) अपने अधिकारियों और कर्मचारियों की निर्देशिका ;

(x) अपने प्रत्येक अधिकारी और कर्मचारी द्वारा प्राप्त मासिक पारिश्रमिक, जिसके अंतर्गत प्रतिकर की प्रणाली भी है, जो उसके विनियमों में यथाउपबंधित हो ;

(xi) सभी योजनाओं, प्रस्तावित व्ययों और किए गए संवितरणों पर रिपोर्टों की विशिष्टियां उपदर्शित करते हुए अपने प्रत्येक अभिकरण को आबंटित बजट ;

(xii) सहायिकी कार्यक्रमों के निष्पादन की रीति जिसमें आबंटित राशि और ऐसे कार्यक्रमों के फायदाग्राहियों के ब्यौरे सम्मिलित हैं ;

(xiii) अपने द्वारा अनुदत्त रियायतों, अनुज्ञापत्रों या प्राधिकारों के प्राप्तिकर्ताओं की विशिष्टियां ;

(xiv) किसी इलैक्ट्रानिक रूप में सूचना के संबंध में ब्यौरे, जो उसको उपलब्ध हों या उसके द्वारा धारित हों ;

(xv) सूचना अभिप्राप्त करने के लिए नागरिकों को उपलब्ध सुविधाओं की विशिष्टियां, जिनमें किसी पुस्तकालय या वाचन कक्ष के, यदि लोक उपयोग के लिए अनुरक्षित हैं तो, कार्यकरण घंटे सम्मिलित हैं ;

(xvi) लोक सूचना अधिकारियों के नाम, पदनाम और अन्य विशिष्टियां ;

(xvii) ऐसी अन्य सूचना, जो विहित की जाए,

प्रकाशित करेगा और तत्पश्चात् इन प्रकाशनों को प्रत्येक वर्ष में अद्यतन करेगा ;

(ग) महत्वपूर्ण नीतियों की विरचना करते समय या ऐसे विनिश्चयों की घोषणा करते समय, जो जनता को प्रभावित करते हों, सभी सुसंगत तथ्यों को प्रकाशित करेगा ;

(घ) प्रभावित व्यक्तियों को अपने प्रशासनिक या न्यायिककल्प विनिश्चयों के लिए कारण उपलब्ध कराएगा ।

(2) प्रत्येक लोक अधिकारी का निरंतर यह प्रयास होगा कि वह उपधारा (1) के खंड (ख) की अपेक्षाओं के अनुसार, स्वप्रेरणा से, जनता को नियमित अन्तरालों पर संसूचना के विभिन्न संसाधनों के माध्यम से, जिनके अंतर्गत इंटरनेट भी है, इतनी अधिक सूचना उपलब्ध कराने के लिए उपाय करे जिससे कि जनता को सूचना प्राप्त करने के लिए इस अधिनियम का कम से कम अवलंब लेना पड़े ।

(3) उपधारा (1) के प्रयोजन के लिए, प्रत्येक सूचना को विस्तृत रूप से और ऐसे प्ररूप और रीति में प्रसारित किया जाएगा, जो जनता के लिए सहज रूप से पहुंच योग्य हो ।

(4) सभी सामग्री को, लागत प्रभावशीलता, स्थानीय भाषा और उस क्षेत्र में संसूचना की अत्यंत प्रभावी पद्धति को ध्यान में रखते हुए प्रसारित किया जाएगा तथा सूचना यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी के पास इलैक्ट्रानिक रूप में संभव सीमा तक नि:शुल्क या माध्यम की ऐसी लागत पर या ऐसी मुद्रण लागत कीमत पर, जो विहित की जाए, सहज रूप से पहुंच योग्य होनी चाहिए ।

स्पष्टीकरण – उपधारा (3) और उपधारा (4) के प्रयोजनों के लिए, "प्रसारित" से सूचना पट्टों, समाचारपत्रों, लोक उद्घोषणाओं, मीडिया प्रसारणों, इंटरनेट या किसी अन्य माध्यम से, जिसमें किसी लोक प्राधिकारी के कार्यालयों का निरीक्षण सम्मिलित है, जनता को सूचना की जानकारी देना या संसूचित कराना अभिप्रेत है ।

5. लोक सूचना अधिकारियों का पदनाम – (1) प्रत्येक लोक प्राधिकारी, इस अधिनियम के अधिनियमन के सौ दिन के भीतर सभी प्रशासनिक एककों या उसके अधीन कार्यालयों में, यथास्थिति, केन्द्रीय

लोक सूचना अधिकारियों या राज्य लोक सूचना अधिकारियों के रूप में उतने अधिकारियों को अभिहित करेगा, जितने इस अधिनियम के अधीन सूचना के लिए अनुरोध करने वाले व्यक्तियों को सूचना प्रदान करने के लिए आवश्यक हों ।

(2) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, प्रत्येक लोक प्राधिकारी, इस अधिनियम के अधिनियमन के सौ दिन के भीतर किसी अधिकारी को प्रत्येक उपमंडल स्तर या अन्य उप जिला स्तर पर, यथास्थिति, केन्द्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी या किसी राज्य सहायक लोक सूचना अधिकारी के रूप में इस अधिनियम के अधीन सूचना के लिए आवेदन या अपील प्राप्त करने और उसे तत्काल, यथास्थिति, केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी या धारा 19 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट वरिष्ठ अधिकारी या केन्द्रीय सूचना आयोग अथवा राज्य सूचना आयोग को भेजने के लिए, पदाभिहित करेगा :

परंतु यह कि जहां सूचना या अपील के लिए कोई आवेदन यथास्थिति, किसी केन्द्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी या किसी राज्य सहायक लोक सूचना अधिकारी को दिया जाता है, वहां धारा 7 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट उत्तर के लिए अवधि की संगणना करने में पांच दिन की अवधि जोड़ दी जाएगी ।

(3) यथास्थिति, प्रत्येक, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी, सूचना की मांग करने वाले व्यक्तियों के अनुरोधों पर कार्रवाई करेगा और ऐसी सूचना की मांग करने वाले व्यक्तियों को युक्तियुक्त सहायता प्रदान करेगा ।

(4) यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी, ऐसे किसी अन्य अधिकारी की सहायता की मांग कर सकेगा, जिसे वह अपने कृत्यों के समुचित निर्वहन के लिए आवश्यक समझे ।

(5) कोई अधिकारी, जिसकी उपधारा (4) के अधीन सहायता चाही गई है, उसकी सहायता चाहने वाले यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी को सभी सहायता प्रदान

करेगा और इस अधिनियम के उपबंधों के किसी उल्लंघन के प्रयोजनों के लिए ऐसे अन्य अधिकारी को, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी समझा जाएगा ।

6. सूचना अभिप्राप्त करने के लिए अनुरोध – (1) कोई व्यक्ति, जो इस अधिनियम के अधीन कोई सूचना अभिप्राप्त करना चाहता है, लिखित में या इलैक्ट्रानिक युक्ति के माध्यम से अंग्रेजी या हिन्दी में या उस क्षेत्र की, जिसमें आवेदन किया जा रहा है, राजभाषा में ऐसी फीस के साथ, जो विहित की जाए, –

(क) संबंधित लोक प्राधिकरण के, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी ;

(ख) यथास्थिति, केन्द्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी या राज्य सहायक लोक सूचना अधिकारी,

को, उसके द्वारा मांगी गई सूचना की विशिष्टियां विनिर्दिष्ट करते हुए अनुरोध करेगा :

परंतु जहां ऐसा अनुरोध लिखित में नहीं किया जा सकता है, वहां, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी अनुरोध करने वाले व्यक्ति को सभी युक्तियुक्त सहायता मौखिक रूप से देगा, जिससे कि उसे लेखबद्ध किया जा सके ।

(2) सूचना के लिए अनुरोध करने वाले आवेदक से सूचना का अनुरोध करने के लिए किसी कारण को या किसी अन्य व्यक्तिगत ब्यौरे को, सिवाय उसके जो उससे संपर्क करने के लिए आवश्यक हों, देने की अपेक्षा नहीं की जाएगी ।

(3) जहां, कोई आवेदन किसी लोक प्राधिकारी को किसी ऐसी सूचना के लिए अनुरोध करते हुए किया जाता है, –

(i) जो किसी अन्य लोक प्राधिकारी द्वारा धारित है ; या

(ii) जिसकी विषयवस्तु किसी अन्य लोक प्राधिकारी के कृत्यों से अधिक निकट रूप से संबंधित है,

वहां, वह लोक प्राधिकारी, जिसको ऐसा आवेदन किया जाता है, ऐसे

आवेदन या उसके ऐसे भाग को, जो समुचित हो, उस अन्य लोक प्राधिकारी को अंतरित करेगा और ऐसे अंतरण के बारे में आवेदक को तुरंत सूचना देगा :

परंतु यह कि इस उपधारा के अनुसरण में किसी आवेदन का अंतरण यथासाध्य शीघ्रता से किया जाएगा, किन्तु किसी भी दशा में आवेदन की प्राप्ति की तारीख से पांच दिनों के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

7. अनुरोध का निपटारा – (1) धारा 5 की उपधारा (2) के परंतुक या धारा 6 की उपधारा (3) के परंतुक के अधीन रहते हुए, धारा 6 के अधीन अनुरोध के प्राप्त होने पर, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी, यथासंभवशीघ्रता से, और किसी भी दशा में अनुरोध की प्राप्ति के तीस दिन के भीतर, ऐसी फीस के संदाय पर, जो विहित की जाए, या तो सूचना उपलब्ध कराएगा या धारा 8 और धारा 9 में विनिर्दिष्ट कारणों में से किसी कारण से अनुरोध को अस्वीकार करेगा :

परंतु जहां मांगी गई जानकारी का संबंध किसी व्यक्ति के जीवन या स्वतंत्रता से है, वहां वह अनुरोध प्राप्त होने के अड़तालीस घंटे के भीतर उपलब्ध कराई जाएगी ।

(2) यदि, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर सूचना के लिए अनुरोध पर विनिश्चय करने में असफल रहता है तो, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी के बारे में यह समझा जाएगा कि उसने अनुरोध को नामंजूर कर दिया है ।

(3) जहां, सूचना उपलब्ध कराने की लागत के रूप में किसी और फीस के संदाय पर सूचना उपलब्ध कराने का विनिश्चय किया जाता है, वहां यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी अनुरोध करने वाले व्यक्ति को, –

(क) उसके द्वारा यथाअवधारित सूचना उपलब्ध कराने की लागत के रूप में और फीस के ब्यौरे, जिनके साथ उपधारा (1) के

अधीन विहित फीस के अनुसार रकम निकालने के लिए की गई संगणनाएं होंगी, देते हुए उससे उस फीस को जमा करने का अनुरोध करते हुए कोई संसूचना भेजेगा और उक्त संसूचना के प्रेषण और फीस के संदाय के बीच मध्यवर्ती अवधि को उस धारा में निर्दिष्ट तीस दिन की अवधि की संगणना करने के प्रयोजन के लिए अपवर्जित किया जाएगा ;

(ख) प्रभारित फीस की रकम या उपलब्ध कराई गई पहुंच के प्ररूप के बारे में, जिसके अंतर्गत अपील प्राधिकारी की विशिष्टियां, समय-सीमा, प्रक्रिया और कोई अन्य प्ररूप भी हैं, विनिश्चय करने का पुनर्विलोकन करने के संबंध में उसके अधिकार से संबंधित सूचना देते हुए, कोई संसूचना भेजेगा ।

(4) जहां, इस अधिनियम के अधीन अभिलेख या उसके किसी भाग तक पहुंच अपेक्षित है और ऐसा व्यक्ति, जिसको पहुंच उपलब्ध कराई जानी है, संवेदनात्मक रूप से नि:शक्त है, वहां यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी सूचना तक पहुंच को समर्थ बनाने के लिए सहायता उपलब्ध कराएगा जिसमें निरीक्षण के लिए ऐसी सहायता कराना भी सम्मिलित है, जो समुचित हो ।

(5) जहां, सूचना तक पहुंच मुद्रित या किसी इलैक्ट्रानिक रूप विधान में उपलब्ध कराई जानी है, वहां आवेदक, उपधारा (6) के अधीन रहते हुए, ऐसी फीस का संदाय करेगा, जो विहित की जाए :

परन्तु धारा 6 की उपधारा (1) और धारा 7 की उपधारा (1) और उपधारा (5) के अधीन विहित फीस युक्तियुक्त होगी और ऐसे व्यक्तियों से, जो गरीबी की रेखा के नीचे हैं, जैसा समुचित सरकार द्वारा अवधारित किया जाए, कोई फीस प्रभारित नहीं की जाएगी ।

(6) उपधारा (5) में किसी बात के होते हुए भी, जहां कोई लोक प्राधिकारी उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट समय-सीमा का अनुपालन करने में असफल रहता है, वहां सूचना के लिए अनुरोध करने वाले व्यक्ति को प्रभार के बिना सूचना उपलब्ध कराई जाएगी ।

(7) उपधारा (1) के अधीन कोई विनिश्चय करने से पूर्व, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना

अधिकारी धारा 11 के अधीन पर व्यक्ति द्वारा किए गए अभ्यावेदन को ध्यान में रखेगा ।

(8) जहां, किसी अनुरोध को उपधारा (1) के अधीन अस्वीकृत किया गया है, वहां, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी अनुरोध करने वाले व्यक्ति को, –

(i) ऐसी अस्वीकृति के लिए कारण ;

(ii) वह अवधि, जिसके भीतर ऐसी अस्वीकृति के विरुद्ध कोई अपील की जा सकेगी ; और

(iii) अपील प्राधिकारी की विशिष्टियां,

संसूचित करेगा ।

(9) किसी सूचना को साधारणतया उसी प्ररूप में उपलब्ध कराया जाएगा, जिसमें उसे मांगा गया है, जब तक कि वह लोक प्राधिकारी के स्रोतों को अननुपाती रूप से विचलित न करता हो या प्रश्नगत अभिलेख की सुरक्षा या संरक्षण के प्रतिकूल न हो ।

8. सूचना के प्रकट किए जाने से छूट – (1) इस अधिनियम में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, किसी नागरिक को निम्नलिखित सूचना देने की बाध्यता नहीं होगी –

(क) सूचना, जिसके प्रकटन से भारत की प्रभुता और अखण्डता, राज्य की सुरक्षा, रणनीति, वैज्ञानिक या आर्थिक हित, विदेश से संबंध पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो या किसी अपराध को करने का उद्दीपन होता हो ;

(ख) सूचना, जिसके प्रकाशन को किसी न्यायालय या अधिकरण द्वारा अभिव्यक्त रूप से निषिद्ध किया गया है या जिसके प्रकटन से न्यायालय का अवमान होता है ;

(ग) सूचना, जिसके प्रकटन से संसद् या किसी राज्य के विधान-मंडल के विशेषाधिकार का भंग कारित होगा ;

(घ) सूचना, जिसमें वाणिज्यिक विश्वास, व्यापार गोपनीयता

या बौद्धिक संपदा सम्मिलित है, जिसके प्रकटन से किसी पर व्यक्ति की प्रतियोगी स्थिति को नुक्सान होता है, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसी सूचना के प्रकटन से विस्तृत लोक हित का समर्थन होता है ;

(ङ) किसी व्यक्ति को उसकी वैश्वासिक नातेदारी में उपलब्ध सूचना, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसी सूचना के प्रकटन से विस्तृत लोक हित का समर्थन होता है ;

(च) किसी विदेशी सरकार से विश्वास में प्राप्त सूचना ;

(छ) सूचना जिसको प्रकट करना किसी व्यक्ति के जीवन या शारीरिक सुरक्षा को खतरे में डालेगा या जो विधि प्रवर्तन या सुरक्षा प्रयोजनों के लिए विश्वास में दी गई किसी सूचना या सहायता के स्रोत की पहचान करेगा ;

(ज) सूचना, जिससे अपराधियों के अन्वेषण, पकड़े जाने या अभियोजन की प्रक्रिया में अड़चन पड़ेगी ;

(झ) मंत्रिमंडल के कागजपत्र, जिसमें मंत्रिपरिषद्, सचिवों और अन्य अधिकारियों के विचार-विमर्श के अभिलेख सम्मिलित हैं :

परन्तु यह कि मंत्रिपरिषद् के विनिश्चय, उनके कारण तथा वह सामग्री, जिसके आधार पर विनिश्चय किए गए थे, विनिश्चय किए जाने और विषय के पूरा या समाप्त होने के पश्चात् जनता को उपलब्ध कराए जाएंगे :

परन्तु यह और कि वे विषय, जो इस धारा में विनिर्दिष्ट छूटों के अंतर्गत आते हैं, प्रकट नहीं किए जाएंगे ;

(ञ) सूचना, जो व्यक्तिगत सूचना से संबंधित है, जिसका प्रकटन किसी लोक क्रियाकलाप या हित से संबंध नहीं रखता है या जिससे व्यष्टि की एकांतता पर अनावश्यक अतिक्रमण होगा, जब तक कि, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी या अपील प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो

जाता है कि ऐसी सूचना का प्रकटन विस्तृत लोक हित में न्यायोचित है :

परन्तु ऐसी सूचना के लिए, जिसको, यथास्थिति, संसद् या किसी राज्य विधान-मंडल को देने से इनकार नहीं किया जा सकता है, किसी व्यक्ति को इनकार नहीं किया जा सकेगा ।

(2) शासकीय गुप्त बात अधिनियम, 1923 (1923 का 19) में, उपधारा (1) के अनुसार अनुज्ञेय किसी छूट में किसी बात के होते हुए भी, किसी लोक प्राधिकारी को सूचना तक पहुंच अनुज्ञात की जा सकेगी, यदि सूचना के प्रकटन में लोक हित, संरक्षित हितों के नुकसान से अधिक है ।

(3) उपधारा (1) के खण्ड (क), खंड (ग) और खण्ड (झ) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी ऐसी घटना, वृत्तांत या विषय से संबंधित कोई सूचना, जो उस तारीख से, जिसको धारा 6 के अधीन कोई अनुरोध किया जाता है, बीस वर्ष पूर्व घटित हुई थी या हुआ था, उस धारा के अधीन अनुरोध करने वाले किसी व्यक्ति को उपलब्ध कराई जाएगी :

परन्तु यह कि जहां उस तारीख के बारे में, जिससे बीस वर्ष की उक्त अवधि को संगणित किया जाता है, कोई प्रश्न उद्भूत होता है, वहां इस अधिनियम में उसके लिए उपबंधित प्रायिक अपीलों के अधीन रहते हुए केन्द्रीय सरकार का विनिश्चय अंतिम होगा ।

9. कतिपय मामलों में पहुंच के लिए अस्वीकृति के आधार – धारा 8 के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, यथास्थिति, कोई केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या कोई राज्य लोक सूचना अधिकारी सूचना के किसी अनुरोध को वहां अस्वीकार कर सकेगा जहां पहुंच उपलब्ध कराने के लिए ऐसा अनुरोध राज्य से भिन्न किसी व्यक्ति के अस्तित्वयुक्त प्रतिलिप्यधिकार का उल्लंघन अंतर्वलित करेगा ।

10. पृथक्करणीयता – (1) जहां सूचना तक पहुंच के अनुरोध को इस आधार पर अस्वीकार किया जाता है कि वह ऐसी सूचना के संबंध में है जो प्रकट किए जाने से छूट प्राप्त है वहां इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, पहुंच अभिलेख के उस भाग तक उपलब्ध कराई जा

सकेगी जिसमें कोई ऐसी सूचना अंतर्विष्ट नहीं है, जो इस अधिनियम के अधीन प्रकट किए जाने से छूट प्राप्त है और जो किसी ऐसे भाग से, जिसमें छूट प्राप्त सूचना अंतर्विष्ट है, युक्तियुक्त रूप से पृथक्त की जा सकती है ।

(2) जहां उपधारा (1) के अधीन अभिलेख के किसी भाग तक पहुंच अनुदत्त की जाती है, वहां, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी निम्नलिखित सूचना देते हुए, आवेदक को एक सूचना देगा कि –

(क) अनुरोध किए गए अभिलेख का केवल एक भाग ही, उस अभिलेख से उस सूचना को, जो प्रकटन से छूट प्राप्त है पृथक् करने के पश्चात्, उपलब्ध कराया जा रहा है ;

(ख) विनिश्चय के लिए कारण, जिनके अंतर्गत तथ्य के किसी महत्वपूर्ण प्रश्न पर उस सामग्री के प्रति, जिस पर वे निष्कर्ष आधारित थे, निर्देश करते हुए कोई निष्कर्ष भी हैं ;

(ग) विनिश्चय करने वाले व्यक्ति का नाम और पदनाम ;

(घ) उसके द्वारा संगणित फीस के ब्यौरे और फीस की वह रकम जिसकी आवेदक से निक्षेप करने की अपेक्षा की जाती है ; और

(ङ) सूचना के भाग को प्रकट न किए जाने के संबंध में विनिश्चय के पुनर्विलोकन के बारे में उसके अधिकार, प्रभारित फीस की रकम या उपलब्ध कराया गया पहुंच का प्ररूप, जिसके अंतर्गत, यथास्थिति, धारा 19 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट वरिष्ठ अधिकारी या केन्द्रीय सूचना अधिकारी या राज्य सूचना अधिकारी की विशिष्टियां, समय-सीमा, प्रक्रिया और कोई अन्य पहुंच का प्ररूप भी है ।

11. पर व्यक्ति सूचना – (1) जहां, यथास्थिति, किसी केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी का, इस अधिनियम के अधीन किए गए अनुरोध पर कोई ऐसी सूचना या अभिलेख या उसके किसी भाग को प्रकट करने का आशय है, जो किसी पर व्यक्ति से संबंधित है या उसके द्वारा इसका प्रदाय किया गया है और उस पर

व्यक्ति द्वारा उसे गोपनीय माना गया है, वहां, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी अनुरोध प्राप्त होने से पांच दिन के भीतर, ऐसे पर व्यक्ति को अनुरोध की और इस तथ्य की लिखित रूप में सूचना देगा कि, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी का उक्त सूचना या अभिलेख या उसके किसी भाग को प्रकट करने का आशय है, और इस बारे में कि सूचना प्रकट की जानी चाहिए या नहीं, लिखित में या मौखिक रूप से निवेदन करने के लिए पर व्यक्ति को आमंत्रित करेगा तथा सूचना के प्रकटन के बारे में कोई विनिश्चय करते समय पर व्यक्ति के ऐसे निवेदन को ध्यान में रखा जाएगा :

परन्तु विधि द्वारा संरक्षित व्यापार या वाणिज्यिक गुप्त बातों की दशा में के सिवाय, यदि ऐसे प्रकटन में लोक हित, ऐसे पर व्यक्ति के हितों की किसी संभावित अपहानि या क्षति से अधिक महत्वपूर्ण है तो प्रकटन अनुज्ञात किया जा सकेगा ।

(2) जहां उपधारा (1) के अधीन, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी द्वारा पर व्यक्ति पर किसी सूचना या अभिलेख या उसके किसी भाग के बारे में किसी सूचना की तामील की जाती है, वहां ऐसे पर व्यक्ति को, ऐसी सूचना की प्राप्ति की तारीख से दस दिन के भीतर, प्रस्तावित प्रकटन के विरुद्ध अभ्यावेदन करने का अवसर दिया जाएगा ।

(3) धारा 7 में किसी बात के होते हुए भी, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी धारा 6 के अधीन अनुरोध प्राप्त होने के पश्चात् चालीस दिन के भीतर, यदि पर व्यक्ति को उपधारा (2) के अधीन अभ्यावेदन करने का अवसर दे दिया गया है, तो इस बारे में विनिश्चय करेगा कि उक्त सूचना या अभिलेख या उसके भाग का प्रकटन किया जाए या नहीं और अपने विनिश्चय की सूचना लिखित में पर व्यक्ति को देगा ।

(4) उपधारा (3) के अधीन दी गई सूचना में यह कथन भी सम्मिलित होगा कि वह पर व्यक्ति, जिसे सूचना दी गई है, धारा 19 के अधीन उक्त विनिश्चय के विरुद्ध अपील करने का हकदार है ।

अध्याय 3
केन्द्रीय सूचना आयोग

12. केन्द्रीय सूचना आयोग का गठन – (1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, केन्द्रीय सूचना आयोग के नाम से ज्ञात एक निकाय का गठन करेगी, जो ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे कृत्यों का पालन करेगा, जो उसे इस अधिनियम के अधीन सौंपे जाएं ।

(2) केन्द्रीय सूचना आयोग निम्नलिखित से मिलकर बनेगा –

(क) मुख्य सूचना आयुक्त ; और

(ख) दस से अनधिक उतनी संख्या में केन्द्रीय सूचना आयुक्त, जितने आवश्यक समझे जाएं ।

(3) मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्तों की नियुक्ति, राष्ट्रपति द्वारा निम्नलिखित से मिलकर बनी समिति की सिफारिश पर की जाएगी –

(i) प्रधानमंत्री, जो समिति का अध्यक्ष होगा ;

(ii) लोक सभा में विपक्ष का नेता ; और

(iii) प्रधानमंत्री द्वारा नामनिर्दिष्ट संघ मंत्रिमंडल का एक मंत्री ।

स्पष्टीकरण – शंकाओं के निवारण के प्रयोजन के लिए यह घोषित किया जाता है कि जहां लोक सभा में विपक्ष के नेता को उस रूप में मान्यता नहीं दी गई है, वहां लोक सभा में सरकार के विपक्षी एकल सबसे बड़े समूह के नेता को विपक्ष का नेता समझा जाएगा ।

(4) केन्द्रीय सूचना आयोग के कार्यों का साधारण अधीक्षण, निदेशन और प्रबंधन, मुख्य सूचना आयुक्त में निहित होगा, जिसकी सहायता सूचना आयुक्तों द्वारा की जाएगी और वह ऐसी सभी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे सभी कार्य और बातें कर सकेगा, जिनका केन्द्रीय सूचना आयोग द्वारा स्वतंत्र रूप से इस अधिनियम के अधीन किसी अन्य प्राधिकारी के निदेशों के अधीन रहे बिना प्रयोग किया जा सकता है या जो की जा सकती है ।

(5) मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्त विधि, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, समाज सेवा, प्रबंध, पत्रकारिता, जनसंपर्क माध्यम या प्रशासन तथा शासन का व्यापक ज्ञान और अनुभव रखने वाले जनजीवन में प्रख्यात व्यक्ति होंगे ।

(6) मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना आयुक्त, यथास्थिति, संसद् का सदस्य या किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के विधान-मंडल का सदस्य नहीं होगा या कोई अन्य लाभ का पद धारित नहीं करेगा या किसी राजनैतिक दल से संबद्ध नहीं होगा अथवा कोई कारबार नहीं करेगा या कोई वृत्ति नहीं करेगा ।

(7) केन्द्रीय सूचना आयोग का मुख्यालय, दिल्ली में होगा और केन्द्रीय सूचना आयोग, केन्द्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से, भारत में अन्य स्थानों पर कार्यालय स्थापित कर सकेगा ।

13. पदावधि और सेवा शर्तें – (1) मूख्य सूचना आयुक्त, [1][ऐसी अवधि के लिए जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाए] पद धारण करेगा और पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगा :

परन्तु यह कि कोई मुख्य सूचना आयुक्त पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् उस रूप में पद धारण नहीं करेगा ।

(2) प्रत्येक सूचना आयुक्त, [1][ऐसी अवधि के लिए जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाए] या पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त करने तक, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, पद धारण करेगा और ऐसे सूचना आयुक्त के रूप में पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगा :

परन्तु प्रत्येक सूचना आयुक्त, इस उपधारा के अधीन अपना पद रिक्त करने पर, धारा 12 की उपधारा (3) में विनिर्दिष्ट रीति से मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र होगा :

परन्तु यह और कि जहां सूचना आयुक्त को मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्त किया जाता है वहां उसकी पदावधि सूचना आयुक्त

[1] 2019 के अधिनियम सं. 24 की धारा 2 द्वारा प्रतिस्थापित ।

और मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में कुल मिलाकर पांच वर्ष से अधिक नहीं होगी ।

(3) मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना आयुक्त, अपना पद ग्रहण करने से पूर्व राष्ट्रपति या उसके द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी अन्य व्यक्ति के समक्ष, पहली अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए उपवर्णित प्ररूप के अनुसार एक शपथ या प्रतिज्ञान लेगा और उस पर हस्ताक्षर करेगा ।

(4) मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना आयुक्त, किसी भी समय, राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा :

परन्तु मुख्य सूचना आयुक्त या किसी सूचना आयुक्त को धारा 14 में विनिर्दिष्ट रीति से हटाया जा सकेगा ।

[1][(5) मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्तों को संदेय वेतन और भत्ते तथा सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें, वे होंगी, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाएं :

परन्तु मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्तों के वेतन, भत्तों और सेवा की अन्य शर्तों में, उनकी नियुक्ति के पश्चात्, उनके लिए अलाभकर रूप से कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा :

परन्तु यह और कि सूचना का अधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2019 के प्रारंभ से पूर्व नियुक्त मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्तों का इस अधिनियम और तद्धीन बनाए गए नियमों के उपबंधों द्वारा शासित होना उसी प्रकार जारी रहेगा मानो सूचना का अधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2019 लागू ही नहीं हुआ था **]**

14. सूचना आयुक्त या मुख्य सूचना आयुक्त का हटाया जाना – (1) उपधारा (3) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, मुख्य सूचना आयुक्त या किसी सूचना आयुक्त को राष्ट्रपति के आदेश द्वारा साबित कदाचार या असमर्थता के आधार पर उसके पद से तभी हटाया जाएगा, जब उच्चतम न्यायालय ने, राष्ट्रपति द्वारा उसे किए गए किसी निर्देश पर

[1] 2019 के अधिनियम सं. 24 की धारा 2 द्वारा प्रतिस्थापित ।

जांच के पश्चात् यह रिपोर्ट दी हो कि, यथास्थिति, मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्त को उस आधार पर हटा दिया जाना चाहिए ।

(2) राष्ट्रपति, उस मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्त को, जिसके विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन उच्चतम न्यायालय को निर्देश किया गया है, ऐसे निर्देश पर उच्चतम न्यायालय की रिपोर्ट प्राप्त होने पर राष्ट्रपति द्वारा आदेश पारित किए जाने तक पद से निलंबित कर सकेगा और यदि आवश्यक समझे तो, जांच के दौरान कार्यालय में उपस्थित होने से भी प्रतिषिद्ध कर सकेगा ।

(3) उपधारा (1) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति, मुख्य सूचना आयुक्त या किसी सूचना आयुक्त को आदेश द्वारा पद से हटा सकेगा, यदि, यथास्थिति, मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्त, –

(क) दिवालिया न्यायनिर्णीत किया गया है ; या

(ख) वह ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध ठहराया गया है, जिसमें राष्ट्रपति की राय में, नैतिक अधमता अन्तर्वलित है ; या

(ग) अपनी पदावधि के दौरान, अपने पद के कर्तव्यों से परे किसी वैतनिक नियोजन में लगा हुआ है ; या

(घ) राष्ट्रपति की राय में, मानसिक या शारीरिक अक्षमता के कारण पद पर बने रहने के अयोग्य है ; या

(ङ) उसने ऐसे वित्तीय और अन्य हित अर्जित किए हैं, जिनसे मुख्य सूचना आयुक्त या किसी सूचना आयुक्त के रूप में उसके कृत्यों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना है ।

(4) यदि मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना आयुक्त, किसी प्रकार भारत सरकार द्वारा या उसकी ओर से की गई किसी संविदा या करार से संबद्ध या उसमें हितबद्ध है या किसी निगमित कंपनी के किसी सदस्य के रूप में से अन्यथा और उसके अन्य सदस्यों के साथ सामान्यतः उसके लाभ में या उससे प्रोद्भूत होने वाले किसी फायदे या परिलब्धियों में हिस्सा लेता है तो वह, उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए, कदाचार का दोषी समझा जाएगा ।

क्रमश: आगामी अंक में.....

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145
2.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
3.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संविधान संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
4.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2024	कीमत रु. 2,500
2. भारत का संविधान (पाकेट एडीशन)	2024	कीमत रु. 325

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in